गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा पटियाला, श्रीगंगानगर व नेपाल से प्रसारित
साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध का अंतर्राष्ट्रीय मासिक

Impact Factor : 7.834

ISSN : 2321-8037
March-April 2026
Volume 14, Issue 3-4

Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Editor :
Dr. Rekha Soni
Chief-Editor :
Dr. Naresh Sihag Adv.

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

www.ginajournal.com

संस्थापक सम्पादिका :
स्मृति शेष
डॉ. विश्वकीर्ति

संस्थापक संरक्षक :
स्मृति शेष
श्री हरविन्द्र कमल चौधरी

वर्ष : 14 अंक : 3 – 4, भाग – 2 मार्च – अप्रैल : 2026 आईएसएसएन : 2321 – 8037

विशेषांक संपादक :
डॉ. विकास शर्मा

विशेषांक सह संपादक :
डॉ. ऋचा ठाकुर
डॉ. निधी वर्मा

सम्पादक :
डॉ. रेखा सोनी
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर, राज.

प्रधान सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
सचिव, गीना देवी शोध संस्थान,
भिवानी (हरियाणा)

अंतर्राष्ट्रीय सम्पादक मण्डल :
डॉ. लक्ष्मी जोशी
त्रिभुवन वि.वि. काठमाण्डू।
शिओंग छन श्यू, चीन।
डॉ. ऋतु शर्मा ननंन पाँडे
साहित्यकार, शिक्षाविद, नीदरलैंड।
डॉ. सुनीता शर्मा
हिन्दी साहित्यकार, कवयित्री, संपादक
एवं शिक्षाविद् मेलबोर्न, ऑस्ट्रेलिया
डॉ. अनुरुद्ध बायन
मध्य कामरूप कॉलेज, सुभा
जिला बारपेटा, असम।
डॉ. सृष्टि चौधरी
लेक्चरर, इलेक्ट्रानिक्स एंड कम्युनिकेशन,
सरकारी पॉलिटेक्निक कॉलेज फॉर गर्ल्स,
पटियाला, पंजाब।
श्री श्रेष्ठ चौधरी,
सीनियर मैनेजर, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया,
साहिबजादा अजित सिंह नगर, मोहाली, पंजाब

कानूनी सलाहकार :
डॉ. रामफल दलाल एडवोकेट
श्रीमती रूपिन्द्र कौर, एडवोकेट

सलाहाकार समिति (Advisory Committee)

डॉ. सुलक्षणा अहलावत
अंग्रेजी प्रवक्ता, शिक्षा विभाग
नूंह (हरियाणा)

डॉ. अरूणा अंचल
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)

डॉ. सुशीला
चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी।

डॉ. अल्पना शर्मा
आईएएसई विश्वविद्यालय सरदारशहर

डॉ. विजय महादेव गाडे
बाबा साहेब चितले महाविद्यालय
भिलवडी (महाराष्ट्र)

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कॉलेज
धारवाड़ (कर्नाटक)

डॉ. रीना कुमारी
दशमेश गर्ल्स कॉलेज,
अल्ला बक्श, मुकेरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती
साहित्यकार, अनुवादक, यूक्रेन।

डॉ. हेमराज न्यौपाने
काठमाण्डु, नेपाल।

डॉ. ममता तनेजा
अबोहर, पंजाब।

डॉ. प्रियंका खंडेलवाल
बराण, राजस्थान।

डॉ. संदीप
ओम विश्वविद्यालय, हिसार।

डॉ. मधुबाला
राजकीय महाविद्यालय, लाखनमाजरा।

डॉ. पीयूष कुमार द्विवेदी
जगद्गुरू रामभद्राचार्य दिव्यांग
विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उत्तरप्रदेश

डॉ. हवासिंह ढाका
राजकीय महाविद्यालय, हिन्दुमलकोट,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत प्रवक्ता, शिक्षा विभाग हरियाणा

डॉ. राजेश शर्मा
शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मोहिनी दहिया
माती जीतोजी कन्या महाविद्यालय,
सूरतगढ़ (राजस्थान)

डॉ. मुद्दस्सिर अहमद भट्ट
हिन्दी विभाग,
कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर, कश्मीर

डॉ. सीहेच वी. महालक्ष्मी
सीहेच एसडीएसटी थेरेसा महिला
महाविद्यालय, एलुरू, आंध्र प्रदेश

डॉ. मोरवे रोशन के.
यूनाईटिड किंगडम।

डॉ. अनुपमा, पूर्व प्रोफेसर,
अंकारा विश्वविधालय, अंकारा, टर्की

डॉ. आर.के विश्वास
अध्यक्ष होम्योपैथिक, लखनऊ।

प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक **डॉ. नरेश सिहाग**, एडवोकेट ने **मनभावन प्रिन्टर्ज**, पुराना बस स्टैण्ड रोड़, नया बाजार, भिवानी से छपवाकर 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से जारी किया।

संगम SANGAM

बहुभाषिक बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

(Journal of Literature, Arts, Science, Commerece, Culture, Humanities and Social Sciences)

सचिव :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,

भिवानी-127021 (हरियाणा)

Email : grngobwn@gmail.com

मो. 09466532152

संगम मासिक पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं/लेखों की मौलिकता का दायित्त्व स्वयं रचनाकारों/लेखकों का है। उससे सम्पादक व प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। किसी भी प्रकार का विवाद होने पर न्यायक्षेत्र केवल भिवानी (हरियाणा) होगा। सम्पादन और प्रबंधन के सभी पद पूर्ण रूप से अवैतनिक हैं।

Published by :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1300/-

<u>*Disclaimer :*</u>

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

Impact Factor : 7.834

ISSN : 2321-8037

Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

तालिका– 2

शैक्षणिक / शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसेः प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि।)

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान / अभियांत्रिकी / कृषि / चिकित्सा / पशु–चिकित्सा विज्ञान संकाय	भाषा / मानविकी / कला / सामाजिक विज्ञान / पुस्तकालय / शिक्षा / शारीरिक शिक्षा / वाणिज्य / प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
✓ 1	समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त)		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान– अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

www.bohalsm.blogspot.com grsbohal@gmail.com 8708822674 9466532152

अनुक्रमाणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. रेखा सोनी	07-07
2.	छत्तीसगढ़ के लोक संगीत का विशिष्ट अध्ययन	भारती जंघेल	08-12
3.	बैले (**ठंससमज**) और संगीत की जुगलबंदी	दीप्ति शर्मा, डॉ. रास बिहारी दास	13-15
4.	विषय-सिनेमा और संगीत का सह-अस्तित्व	डा. इंदिरा. वी	16-19
5.	'ध्वनि-चयन' की दृष्टि से रामवृक्ष बेनीपुरी की कहानियों का शैली वैज्ञानिक विश्लेषण	मधु कुमारी	20-23
6.	संगीत एवं गेय शास्त्र विधा का ऐतिहासिक विवेचन	माधुरी अनंतराव पाटील	24-27
7.	बैले और संगीत की जुगलबंदी : एक शोधात्मक अध्ययन	के. माधवी	28-31
8.	दूरदर्शन पर प्रसारित राष्ट्रवादी गीतों का समाज पर प्रभाव	डॉ. मनीष चौधरी	32-38
9.	काव्य और संगीत का अन्तर्सबंध	डॉ. मंजु पटेल	39-40
10.	स्मृति का इतिहासलेखन : लोकगीत पद्धति के रूप में	डॉ. नेहा प्रधान	41-44
11.	भारतीय संगीत में संतों का योगदान	डॉ. निधि वर्मा	45-49
12.	भारतीय संगीत में रस सिद्धांत का महत्व	सरला साहू	50-52
13.	कथक और तबला संगति (संगीत और नित्य)	सीमा ढींगरा, प्रोफेसर वंदना चौबे	53-55
14.	संगीत शिक्षा और सामाजिककरण की प्रक्रिया	डॉ. स्नेहलता शर्मा	56-59
15.	वैश्विक बाल-संगीत परंपराओं के संदर्भ में हिंदी नर्सरी राइम्स का संगीतात्मक अध्ययन	आर. आर. सौमियाश्री	60-63
16.	वैश्विक परिप्रेक्ष्य में संगीत विमर्श : संगीत और विज्ञान/गणित का अंतर्सबंध	तपन कुमार नाथ	64-66
17.	नृत्य और संगीत का अविभाज्य संबंध	डॉ. संतोष कुमार पाठक, वेंकट चिन्ना राव,	67-70
18.	**Music and Religion: A Global Perspective on Sacred Sound and Spiritual Experience**	**Sri. Md. Aasif Hussain**	**71-75**
19.	**Laya and Rhythm : The Dialogue between Nattuvangam and Movement in Bharatanatyam**	**Rajendra Kumar**	**76-80**
20.	वर्तमान दरकते सामाजिक रिश्ते और रामचरित के आदर्श **Crumbling Social Relationships in Contemporary Times and the Ideals of Ramcharit**	सीना कुमारी, डॉ. अन्जु	81-88
21.	शिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रति शिक्षकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन	सुविधा, डॉ. वन्दना दुआ	89-96
22.	**Indian Customary Practices and Legal Traditions**	**Neha Kumari, Dr. Dhananjay Mani Tripathi**	**97-103**
23.	हिन्दी साहित्य में स्त्री लेखन की यात्रा	बिना चिक बड़ाईक	104-107
24.	**Babbar Akali : The Roaring Lions of India's Freedom Struggle**	**Dr. Harwinder Kaur**	**108-110**
25.	राजेन्द्र टोकी का काव्य-आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में	मोनिका	111-114

26.	The Architects of the Universe : All Components of the CMM1 Hypothesis	Dr. C. M. Mane (Charusheel Mane)	115-118
27.	A STUDY OF RELATIONSHIP BETWEEN EMOTIONAL INTELLIGENCE AND ETHICAL USE OF KNOWLEDGE AMONG SECONDARY SCHOOL STUDENTS	Dr. Arti Aarya, Mr. Mithun Vishwas	119-125
28.	Ancient Practice Of Rainwater Harvesting With Special Reference To Jaipur City	Aastha Sharma	126-136
29.	हिंदी क्रियाओं का रूपसाधित रूप बनाम शब्द स्तरीय संदिग्धार्थक शब्द : वाक्यात्मक स्वरूप और विश्लेषण	गुंजन वर्मा, डॉ. अभिजीत प्रसाद	137-147
30.	Living and Working in Hardships : A Study of Migrant Families in Rural Brick Kilns	Dr. Harish Kumar Verma, Atul Verma	148-153
31.	बाल अधिकारों की स्थिति एवं लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण : महराजगंज जिले में विकासात्मक प्रभावों का विवेचनात्मक अध्ययन	शालिनी अग्रवाल, प्रोफेसर शक्ति जायसवाल	154-169
32.	Analysis of Anthropometric Variables and Their Role in Performance of Softball Players	Dr. Shipra Chakraborty, Rajendra Kumar Palsaniya	170-172
33.	IMPACT OF JOB SATISFACTION ON PERFORMANCE OF PHYSICAL EDUCATION TEACHERS IN RAJASTHAN	Dr. Gajender Singh Saroha, Kailash Chand Haritwal	173-176
34.	समाज में सोशल मीडिया की भूमिका : नेटवर्कयुक्त सार्वजनिक क्षेत्र, मनोवैज्ञानिक प्रभाव और राजनीतिक गतिशीलता का एक अनुभवजन्य विश्लेषण	Dr. Sushil Kumar Daiya Hema	177-180
35.	भगवद् गीता में निहित मनोवैज्ञानिक विचारों का शैक्षिक विश्लेषण : एक दार्शनिक एवं समकालीन अध्ययन Psychological Ideas in the Bhagavad Gita : A Philosophical and Contemporary Educational Analysis	सुश्री मेघा पंवार, डॉ. आरती आर्य	181-188
36.	रचनावादी शिक्षण पद्धति का प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक, सामाजिक एवं भावनात्मक विकास पर प्रभाव : एक अई-प्रायोगिक एवं मिश्रित विधि आधारित अध्ययन	डॉ. अल्पना आर्य, डॉ. आरती आर्य	189-194
37.	स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में निहित शैक्षिक अवधारणाओं का तुलनात्मक अध्ययन	अमृता चौधरी, डॉ. आरती आर्य	195-200
38.	A STUDY OF MATH SELF-EFFICACY IN RELATION TO ACADEMIC ACHIEVEMENTOF SECONDARY SCHOOL STUDENTS	Dr. Arti Arya, Mr. Vivek Kumar Pal	201-206
39.	प्रारंभिक शिक्षा के संदर्भ में सर्वशिक्षा अभियान का क्रियान्वयन : विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. अल्पना आर्य	207-215
40.	MEDIATING ROLE OF EMOTIONAL INTELLIGENCE BETWEEN HAPPINESS CURRICULUM AND ACADEMIC PERFORMANCE AMONG MIDDLE SCHOOL STUDENTS	Dr. Arti Aarya, Mrs. Sonali Shrivastava	216-226

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में संगीत विमर्श

संगीत मानव सभ्यता की सबसे प्राचीन और प्रभावशाली अभिव्यक्तियों में से एक है। यह केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि संस्कृति, भावनाओं, परंपराओं और विचारों के आदान–प्रदान का सशक्त साधन भी है। वैश्वीकरण के वर्तमान युग में संगीत का स्वरूप और प्रभाव पहले से कहीं अधिक व्यापक और बहुआयामी हो गया है। विभिन्न देशों और संस्कृतियों के संगीत के बीच संवाद और समन्वय ने एक नए वैश्विक संगीत विमर्श को जन्म दिया है।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में संगीत आज सीमाओं से परे जाकर मानवता को जोड़ने का कार्य कर रहा है। इंटरनेट, डिजिटल प्लेटफॉर्म और आधुनिक संचार माध्यमों के कारण दुनिया के किसी भी कोने का संगीत कुछ ही क्षणों में पूरी दुनिया तक पहुँच जाता है। परिणामस्वरूप विभिन्न संस्कृतियों के संगीत में परस्पर प्रभाव दिखाई देने लगा है। पश्चिमी संगीत की धुनों में भारतीय शास्त्रीय रागों की झलक और भारतीय संगीत में पश्चिमी वाद्ययंत्रों का प्रयोग इस सांस्कृतिक आदान–प्रदान का उदाहरण है।

भारतीय संगीत परंपरा, जो राग–रागिनियों और आध्यात्मिक भावों से परिपूर्ण है, वैश्विक मंच पर अपनी विशिष्ट पहचान बना चुकी है। योग, ध्यान और आध्यात्मिकता के साथ भारतीय संगीत का संबंध इसे विश्व समुदाय के लिए आकर्षक बनाता है। आज अनेक विदेशी कलाकार भारतीय शास्त्रीय संगीत और लोकसंगीत को सीखने और प्रस्तुत करने में रुचि दिखा रहे हैं। इससे न केवल भारतीय संस्कृति का प्रचार–प्रसार हो रहा है, बल्कि वैश्विक सांस्कृतिक समन्वय भी सुदृढ़ हो रहा है।

हालाँकि वैश्वीकरण के इस दौर में कुछ चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। व्यावसायिकता और बाजारवाद के प्रभाव के कारण कई बार संगीत की मौलिकता और पारंपरिक स्वरूप प्रभावित होते हैं। त्वरित लोकप्रियता और उपभोक्तावादी प्रवृत्तियों के कारण गहराई और साधना पर आधारित संगीत पीछे छूटने का खतरा भी उत्पन्न होता है। इसलिए यह आवश्यक है कि आधुनिकता और परंपरा के बीच संतुलन बनाए रखा जाए।

वैश्विक संगीत विमर्श का उद्देश्य केवल विभिन्न शैलियों का मेल नहीं, बल्कि सांस्कृतिक विविधता का सम्मान और संरक्षण भी होना चाहिए। यदि संगीत को मानवता की साझा धरोहर मानते हुए संवाद और सहयोग की भावना से आगे बढ़ाया जाए, तो यह विश्व शांति, सांस्कृतिक एकता और मानवीय मूल्यों को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

अंततः कहा जा सकता है कि संगीत एक सार्वभौमिक भाषा है, जो शब्दों की सीमाओं से परे जाकर हृदय से हृदय को जोड़ती है। वैश्विक परिप्रेक्ष्य में संगीत का यह विमर्श हमें न केवल विभिन्न संस्कृतियों को समझने का अवसर देता है, बल्कि मानवता के साझा स्वर को भी प्रबल बनाता है। इसलिए आवश्यक है कि हम संगीत की इस वैश्विक यात्रा को संवेदनशीलता, सम्मान और रचनात्मकता के साथ आगे बढ़ाएँ।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 8–12
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

छत्तीसगढ़ के लोक संगीत का विशिष्ट अध्ययन

भारती जंघेल

सहायक प्राध्यापक

नवीन शासकीय संगीत महाविद्यालय, दुर्ग (छत्तीसगढ़)

छत्तीसगढ़ अपनी विविध संस्कृति एवं परंपराओं के लिए विश्व विख्यात जिसमें छत्तीसगढ़ की लोक संगीत अपनी एक अलग पाचन बनती है। छत्तीसगढ़ में निवास विभिन्न जाती जनजातियों का अपना अपना अलग रीति रिवाज वार संस्कृति है जिसमें उनका गीत संगीत भी उनके संस्कृति का एक अभिन्न अंग है। छत्तीसगढ़ का कोई भी क्षेत्र हो, चाहे वह मैदानी क्षेत्र हो या पहाड़ी यह के लोगों के रीति रिवाज व संस्कृति में संगीत समाहित होता है। प्राकृति की भौगोलिक दृष्टिकोण के अनुसार यहां के लोगो के रहना सहन के साथ साथ संस्कृति में भी भिन्नता है। जो छत्तीसगढ़ को संस्कृति और लोक कलाओं के दृष्टि से और भी समृद्धि बनता है।

छत्तीसगढ़ की भौगोलिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :

भौगोलिक परिचय :

1 नवंबर सन 2000 को नवगठित छत्तीसगढ़ राज्य प्राकृतिक रूप से अत्यंत सुंदर तथा मनोहरी क्षेत्र है छत्तीसगढ़ एक कृषि प्रधान औरप वन से भरा राज्य है। छत्तीसगढ़ को धान का कटोरा भी कहा जाता है। यहां की लगभग 44 प्रतिशत भूमि वनों से ढकी हुई है और यहां की जीवन दायिनी महानदी, शिवनाथ और इंद्रावती जैसी नदियां यहां की सभ्यता को सींचती है। मैदानी इलाकों के लहराते खेत और बस्तर व सरगुजा के घने जंगल यहां के निवासियों की जीवन शैली को निर्धारित करते हैं। यह का भौगोलिक के परिवेश ही यहां की संस्कृति का निर्माण करते हैं जहां प्रकृति और मनुष्य का गहरा अस्तित्व देखने को मिलता हैं। छत्तीसगढ़ राज्य प्राकृतिक रूप से अत्यंत सुंदर तथा मनोहरी रूप है भौगोलिक दृष्टि से यहां की जलवायु बड़ी सुंदर है। यहां गर्मी बरसात और ठंड तीन ऋतु में मुख्य रूप से मानी जाती है। किसी भी क्षेत्र के इतिहास लोक संस्कृति सामाजिक रीति रिवाज लोकगीत एवं लोक नृत्य की जानकारी के लिए उसके भौगोलिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना आवश्यक हैं।

ऐतिहासिक परिचय :

प्राचीन काल से ही छत्तीसगढ़ की जनजीवन में अनेक विशेषता तथा विविधताओं की जानकारी प्राप्त होती हैं। भारत के हृदय स्थल में स्थित छत्तीसगढ़ राज्य न केवल अपनी खनिज संपदा और वन विभाग के लिए जाना जाता है बल्कि यहां अपनी प्राचीन और समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के लिए भी विश्वविख्यात है। 1 नवंबर सन

2000 को मध्य प्रदेश से अलग होकर एक स्वतंत्र राज्य के रूप में अस्तित्व में आया। यह क्षेत्र प्राचीन काल से ही दक्षिण कौशल के नाम से जाना जाता था। रामायण और महाभारत काल से जुड़े इसके ऐतिहासिक प्रमाण इसे एक पौराणिक महत्व प्रदान करते हैं। प्राचीन काल में जब मानव पशु की तरह जंगलों नदियों घाटियों में घूमा करता था। कंदमूल एवं अन्य पशु पक्षी शिकार से अपना पेट भरता था। इस कार्य के लिए पत्थरों का प्रयोग विभिन्न रूपों में किया जाना किया जाता था जैसे पत्थरों को आपस में रगड़कर आग जलाना।

छत्तीसगढ़ का सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिचय :

1. सामाजिक परिचय :

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह अपने जीवन के सारे कार्य व्यापार समाज में रहकर संपन्न करते हैं। जन्म से लेकर मरणोपरांत चार कंधों में शमशान जाने तक मनुष्य को समाज की आवश्यकता पड़ती है। वह अकेला नहीं रह सकता। इसलिए वह समाज बनाते हैं समाज का निर्माण व्यक्ति की भी आपसी संबंध एवं उनके क्रियाकलापों पर निर्भर होता है। छत्तीसगढ़ की सामाजिक व्यवस्था जाति आधार पर होती है। प्रत्येक जाति का अलग–अलग समाज होता है। ग्रामीण समाज छोटी–मोटी समस्याओं का निराकरण सामाजिक स्तर पर ही कर लेते हैं। गांव में एक मुख्य होता हैं जो सब की समस्याओं का निराकरण करता हैं। जो मुख्य होता है उसे गांव का गोटिया (सियान) कहते हैं। वह सबसे धनी और प्रभावशाली व्यक्ति होता हैं। यहां का सामाजिक जीवन उत्सव है। हरेली, पोला, तीजा, दिवाली (देवरी), छेरछेरा और होली जैसे त्योहार यहां बड़े हर्ष उल्लास के साथ मनाया जाते हैं। यहां के लोगों के स्वभाव में अतिथि को देव तुल्य मानते हुए बड़े आदर सत्कार के साथ मान सम्मान दिया जाता है। कृषि, मजदूरी कर अपना भरण पोषण करते हुए सादा जीवन उच्च विचार यह की ग्रामीण जीवन का मूल मंत्र हैं।

2. सांस्कृतिक परिचय :

छत्तीसगढ़ की संस्कृति को मूल रूप से लोक संस्कृति और जनजाति संस्कृति का संगम कहा जा सकते हैं। यहां की आबादी का एक बड़ा हिस्सा आदिवासियों (जैसे गोंड, बैंगा, कमार, हलबा, माडिया, मुरीया आदि) है। जिनकी अपनी विशिष्ट परंपराएं भाषा और जीवन शैली है वहीं दूसरी ओर मैदानी क्षेत्र में रहने वाले ग्रामीण समाज की अपनी कृषि आधारित परंपराएं हैं। इन दोनों धाराओं के मिलने से ही छत्तीसगढ़ी की जो संस्कृति बनी है। वह अत्यंत सरल सहज और बाह्यडंबरो से दूर हैं। संस्कृति वह जीवन शैली है जिसे मनुष्य एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी में हस्तांतरित करते है। संस्कृति मनुष्य को जीवन जीने की आवश्यकता और उसकी पूर्ति का अलग–अलग ढंग प्राकृतिक पर्यावरण और समाजगत मान्यता पर विकसित ढांचों पर निर्भर करता हैं। अलग–अलग राज्य में अलग–अलग संस्कृति अलग–अलग परंपराएं मनाते हैं। जो निम्न हैं :

बोली :

छत्तीसगढ़ में छत्तीसगढ़ी भाषा बोली जाती हैं। इसके अलावा अलग अलग अंचलों में अलग–अलग बोली, बोली जाती है, जैसे बस्तर अंचल में गोंडी, हल्बी, भत्तरा, दोरला आदि तथा सरगुजा अंचल में कुड़ुक बोली जाती हैं। छत्तीसगढ़ की केंद्रीय भाषा छत्तीसगढ़ी है किंतु कई प्रांतों से घिरे होने के कारण उनका प्रभाव एवं संस्कृति में होने वाले परिवर्तनों के साथ सीमावर्ती क्षेत्रों की बोली भाषा का प्रभाव भी छत्तीसगढ़ी भाषा में हुआ।

खान पान :

छत्तीसगढ़ का प्रमुख फसल धान है। इसलिए छत्तीसगढ़ को धान का कटोरा भी कहते हैं। धान से चावल और चावल से भात बनता हैं भात खाने के लिए हरी पत्तियों वाली सब्जी जिसे यहां भाजी (साग) कहा जाता है। छत्तीसगढ़ में अनेक प्रकार की भाजी का उपयोग भोजन के रूप में किया जाता हैं। जैसे सेमी भाजी, मूंगा भाजी, पटवा भाजी, लाल भाजी आदि। हमारे छत्तीसगढ़ में जो रात्रि का भात बच्चा रहता है उसको पानी में डालकर सुबह नमक मिर्च और सब्जी के साथ खाया जाता हैं। इसे बासी कहते हैं। तीज त्यौहार या विशेष आयोजन पर सुहारी (पूड़ी), बरा, ठेठरी खुरमी, भजिया आदि खाद्य सामग्री बनाए जाते हैं।

रहन सहन :

यहां का रहन–सहन जीवन अत्यंत सीधा–साधा और सरल है। प्रायः मकान मिट्टी के बने होते हैं जिस पर गांव में ही बने खपरील से छत लकड़ी बांस के सहारे छाया जाता हैं। घर के दरवाजे बांस से बने होते हैं जिन्हें कपाट कहते हैं। उसे ही लगाकर खेत या मजदूरी करने चले जाते हैं। कुछ लोग पानी की उपलब्धता देख कर ही नदी, तालाब आदि के किनारे मिट्टी का मकान बनाकर निवास करते हैं। इसमें लंबी घास का छत होता है तथा बांस या लकड़ी का साधारण दरवाजा बनाया जाता है। मिट्टी के बर्तन में अनाज रखते हैं और जो संपन्न लोग होते हैं उसके घर पीतल कांसे के बर्तन मिलते हैं। मुख्य रूप से पशु पालन में गाय भैंस, बकरी आदि जानवर पालने का प्रचलन हैं।

वस्त्राभूषण :

छत्तीसगढ़ अंचल में पुरुषों का मुख्य परिधान धोती, कमीज या कुर्ता, अंगरखा, लूंगी आदि हैं। समय परिवर्तन के कारण आज लगभग सभी पुरुष वर्ग के लोग फूल पैंट, शर्ट या जींस पैंट शर्ट टी–शर्ट जैसे आधुनिक वस्त्र धारण करने लगे हैं। महिलाएं स्थानीय बुनकर से बने लुगरा पहनती थी। समय बदलने के साथ अब लाल हरी पीली रंग बिरंगी आकर्षण लुगरा पहनती हैं।

लोक की परिभाषा :

लोक से तात्पर्य संपूर्ण जनमानस से हैं इसमें सामान्य व विशिष्ट का कोई भेद नहीं है यह सब एक हो जाते हैं। यह लोग सामूहिक रूप से अपना जीवन यापन करते हैं। एक दूसरे का सुख–दुःख में साथ देते हैं। लोक वह समुचित जनता है जिसका आधार पोथी पुरान या स्कूली शिक्षा न होकर पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही परंपरा को लोक कहते हैं।

लोकगीत :

मनुष्य मनोरंज एवं सुख–दुःख में अपने मानोभावों को व्यक्त करने के लिए स्वर और लय एवं गीत के माध्यम से अपने भाव को अभिव्यक्त करते हैं तो वह लोकगीत कहा जाता है। इस कला को सीखने के लिए किसी विशिष्ट शिक्षा दीक्षा अभ्यास अथवा साधना की आवश्यकता नहीं होती। यहां लोक के मन की भावना होती है जो सामान्य बोली भाषा में होती है जो एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी में हस्तांतरित होता रहता है। लोकगीत मनोरंजन का साधन होता हैं। लोकगीत बहुत ही सरल एवं सहज भाव से गाया जाता हैं। लोक गीत के रचयिता अज्ञात होते हैं।

लोक नृत्य :

लोक नृत्य प्रकृति की अनोखी देन हैं। प्रकृति दर्शन का दूसरा नाम ही लोक नृत्य है। लोक नृत्य की उत्पत्ति संभवतः आदिमानव कल से हुआ होगा जब उनके पास भाषा का संधान नहीं रहा होगा। तब वे लोग अपने खुशी को व्यक्त करने के लिए उछल कूद करते रहे होंगे जो विकसित होते हुए विभिन्न लोक नृत्य की पद चाले यथा सैला, झूमर, लहकी, सजनी आदि ही परिलक्षित होती हैं जो प्रमाणित करता है कि लोक नृत्य प्राकृत से प्रेरित है, जिसमें पशुओं के चाल को नृत्य के पैंतरे के रूप में उपयोग में लाया गया होगा साथ ही नदी का लहराव डालियों का झुलना आदि नृत्य में प्रयुक्त होता है। इस प्रकार प्राकृति के तत्वों को आदिमानव ने ग्रहण किया। लोक नृत्य में पैरों की थिरकन, चंचलता, उछल कूद, गतिमान आदि रूप व्याप्त हैं।

लोक वाद्य :

आमतौर पर समस्त भारतीय वाद्यों का वर्गीकरण चार प्रकार से किया गया हैं : तंत्र वाद्य, सुषिर वाद्य, घन वाद्य, अवनद्ध वाद्य तंत्र वाद्य की विशेषता यह है कि इसमें स्वरों की उत्पत्ति तारों के सहयोग से होती हैं। जैसे की सारंगी, चिकारा, एकतारा, तंबूरा, रुनझु आदि। सुषिर वाद्य के अंतर्गत फूंककर बजाने वाले या हवा द्वारा बजाने वाले वाद्य होते हैं जैसे बिना ,बांसुरी, शहनाई एवं संख आदि। घन वाद्य के अंतर्गत ऐसे वाद्य यंत्र आता है जिसको आपस में टकराकर या चोट कर या आघात करके कर स्वर उत्पन्न करते हैं जैसे थाल, करताल, मजीरा, घुंघरू आदि। अवनद्ध वाद्य के अंतर्गत चमड़े से मड़े हुए वाद्य यंत्र आता हैं। जैसे मंदार, ढोलक, ढोल, खंजिरी, नगाड़ा, टीमकी, ताशा आदि।

लोग जीवन में संगीत का स्थान :

छत्तीसगढ़ के निवासियों के लिए संगीत, नृत्य और वाद्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं बल्कि संस्कृति और लोक आस्था का केंद्र भी हैं। बल्कि यह उनकी दिनचर्या और जीवन शैली का एक अभिन्न अंग है। खेत में धान की रोपाई करते किसान हो, जंगल में महुआ बिनती महिलाएं हो या फिर देवी–देवताओं की आराधना करते हुए भगत, यह हर अवसर के लिए एक विशिष्ट लोकगीत, लोकनृत्य मौजूद होती है। कठिन परिश्रम और संघर्षमय जीवन के बीच यहां का जनमानस गीतों के माध्यम से अपनी थकान मिटाता है। यहां के लोकगीत में बनावटी पन नहीं है। सीधे ह्रदय से निकलते हैं और ह्रदय तक पहुंचाते हैं। यह गीत किसी स्याही की पन्नों पर नहीं लिखे गए हैं बल्कि यह सदियों से मौखिक परंपरा के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को सौंप जाते रहे हैं।

निष्कर्ष :

लोक संगीत किसी एक व्यक्ति या वर्ग की रचना ना होकर संपूर्ण समाज की सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति है। यह संगीत जनजीवन की भावनाओं संस्कारों परंपरा आश्रम उत्सव ऋतु चक्र और सामाजिक अनुभव की गहराइयों से जुड़ा हुआ है। लोक संगीत में सरलता सहस्त्र और भावनात्मक सच्चाई प्रमुख रूप से दिखाई देती हैं। लोक संगीत के अंतर्गत लोक गाथा लोककथा लोक नृत्य लोकनाट्य लोकगीत लोक वाद्य आता है। लोक संगीत स्वतंत्र होता है। लोक संगीत लिखित परंपरा ना होकर मौखिक परंपरा है। यह एक विधि से दूसरे पीढ़ी में बढ़ता रहता है। जिससे इसमें स्थानीय बोली संस्कृति जीवन शैली की झलक स्पष्ट रूप

से दिखाई पड़ती है। कहा जा सकता है कि लोक संगीत भारतीय लोक संस्कृति की आत्मा हैं। जो समाज को एक साथ सूत्र में जोड़े रखने में महत्वपूर्ण योगदान हैं।

संदर्भ सूची :

1. भारत का लोक नृत्य, प्रोफेसर शरीफ मोहम्मद, पृष्ठ क्रमांक 1
2. कुमाऊनी लोकगीत तथा संगीत शास्त्री परिवेश, डॉ. ज्योति तिवारी, पृष्ठ 1, 2
3. छत्तीसगढ़ का लोक संगीत, पं. राम कृष्णा तिवारी, प्रकाशन : मातृकला प्रकाशन, पृष्ठ 27 और 175
4. लोक संस्कृति की वैचारिक यात्रा, डॉ. नत्थू तोड़े, पृष्ठ 297 से 298
5. मध्य प्रदेश के लोक संगीत, शरीफ मोहम्मद।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 13–15
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

बैले (Ballet) और संगीत की जुगलबंदी

दीप्ति शर्मा, शोधार्थी

डॉ. रास बिहारी दास, निर्देशक एवं असिस्टेंट प्रोफेसर,

मंच कला विभाग, वनस्थली विद्यापीठ।

बैले संगीत पर ही निर्भर होता है, संगीत ही बैले का आधार है संगीत के बिना बैले की प्रस्तुति विशिष्ट नहीं होती। बैले नृत्यकार के प्रत्येक भाव को संगीत के माध्यम से रंगमंच पर दर्शाया जाता है, चाहे वह भाव शांत रस से परिपूर्ण हो या रौद्र रस से भरा हुआ हो। शून्यता को छोड़कर बैले नृत्यकार का प्रत्येक भाव संगीत के माध्यम से रंगमंच पर उभारता हुआ दर्शकों तक पहुँचता है। बैले कलाकार के हाथ एवं पैरों का संचालन संगीत के उतार–चढ़ाव के साथ चलता है।

1. भूमिका –

बैले यानि नृत्य–नाटिका भारतीय संस्कृति को पाश्चात्य संस्कृति की देन है। यह दो शब्दों के मेल से बना है –

नृत्य–नाटिका = नृत्य. नाट्य। 'नाट्य' शब्द 'नृत्य–नाट्य' का घोतक है। जिससे रस की उत्पत्ति होती है। ये नृत्य की सामग्री से ओत–प्रोत है। इसलिए इन्ध्हें 'नृत्य–नाटिका' कहा जाता है।

2. परिभाषा –

नेथ्य में प्रस्तुत किये जाने वाले वाद्य, संगीत, गायन के अनुकूल नृत्य–युक्त वाचिकाभिनय रहित रूपक ही 'नृत्य–नाट्य यानि बैले' कहलाता है। अतः नाटक की कोई ऐसी कथा जिसे नृत्य के रूप में प्रस्तुत किया जाए 'नृत्य–नाटिका' कही जाती है।

3. आविष्कृत –

14वीं व 15वीं शताब्दी में यह कला सर्वप्रथम इटली में आविष्कृत हुई। इसके पश्चात् पूरे यूरोप में या कहे पूरे भारत में यह प्रसिद्ध हुई। 16वीं शताब्दी में केरल में कथकली नर्तकों ने शुद्ध भारतीय परंपरा के अनुसार या कहे नाट्य शास्त्रीय परंपरा के अनुसार इसका उद्गण किया। भारतीय नृत्य नाटिकाओं का उद्भव एवं विकास प्राचीन काल से ही चला आ रहा है, परन्तु अंग्रेजों के समय में पाश्चात्य बैले पद्धति से, रंगमंच व्यवस्था, प्रकाश व्यवस्था, अन्य आकर्षक सामग्री का समावेश, इस प्रथा में हुआ।

इस प्रथा का, 20वीं शताब्दी में पुनरूत्थान, भारत को पाश्चात्य संस्कृति की ही देन है।

4. रंगमंच पर बैले का उद्भव –

बैले की रंगमंच पर प्रस्तुत का श्रेय निम्न महान् विभूतियों को दिया गया है।

- भारत में वर्तमान शताब्दी में इस परिष्कृत नृत्य–नाटिका (बैले) का श्री गणेश स्व. श्री उदय शंकर जी ने किया। यह स्वयं चित्रकार, गायक एवं नर्तक थे। इन्होंने अल्मोरा में एक 'बैले सेन्टर' की स्थापना की। इनके प्रयत्नों में इनकी पत्नी श्रीमती अमलाशंकर जी ने पूर्णरूपेण सहयोग दिया। इनकी सुप्रसिद्ध नृत्य–नाटिकाएँ 'गौतम बुद्ध', 'शिव–पार्वती' रही है। विदेशी शैली से प्रभावित नृत्य–नाटिकाएं प्रस्तुत करने में इनका योगदान रहा है।
- उदयशंकर जी के पश्चात् श्रीमती गुलवर्धनजी, प्रभात गांगुली जी ने भी भोपाल में इस प्रथा का प्रचार–प्रसार किया।

इनके शिष्य संचिन शंकर जी ने बम्बई में यह कला विख्यात करने में योगदान दिया।

जोधपुर में देवीलाल सांभर जी ने इस कला का प्रचार–प्रसार किया।

- उदयशंकर घराने के अतिरिक्त कलकत्ता में, श्री रविन्द्रनाथ ठाकुर जी ने नृत्य–नाटिका को प्रसिद्ध करने में अपूर्व कार्य किया है। यह स्वयं एक प्रसिद्ध कवि, गायक, चित्रकार एवं नर्तक रहे। इन्होंने नृत्य–नाटिकाओं की रचना कर शांति निकेतन के माध्यम से इसका प्रचार किया। इनके द्वारा रचित नृत्य नाटिकाएं– श्याम, द प्रिंस आप द डार्क चेंबर चंडालिका। सुप्रसिद्ध है। नृत्य–नाट्य में इन्होंने स्थायित्वता प्रदान की।
- भरतनाट्यम में, रामगोपाल जी ने नृत्य–नाटिका के क्षेत्र में सराहनीय कार्य किया है।
- मद्रास में, श्रीमती रूक्मणी देवी जी ने 'कलाक्षेत्र' की स्थापना कर, भरतनाट्यम में नृत्य–नाटिकाओं का निर्माण कर सराहनीय योगदान दिया है।
- केरल में, स्व. कवि वैल्लाथोल जी ने 'केरला कला मंडलम' की स्ध्थापना कर कथकली के माध्यम से नृत्य–नाट्य को सारे भारत में प्रचारित किया है।

5. संगीतमय युक्त बैले –

स्व. मेडम मेनिका जी ने पूर्णरूपेण कथक शैली युक्त नृत्य–नाट्य बैले की संरचना की। इन्होंने बम्बई में एक संस्था स्थापित कर, लड़के–लड़कियों को कथक व नृत्य–नाट्य की शिक्षा दी व गुरूजनों के द्वारा भी दिलवाई।

नृत्य–नाटिकाएं – किसान
गंगावतारण
मदनरति इनकी प्रसिद्ध नृत्य–नाटिकाएं है।

सन् '1926' में इनकी प्रथम नृत्य–नाटिका कालिदास कृत 'मालविकाग्निमित्रम्' बम्बई में प्रस्तुत की गई।

सन् '1936' में जर्मन की राजधानी बर्लिन में यह 'ओलम्पियाड' में नृत्य–नाटिका लेकर प्रस्तुत हुई।

इनके पश्चात् 1957–1958 कथक में खूबसूरत व प्रभावशाली नृत्य–नाटिकाओं को भारत में विख्यात करने का श्रेय दिल्ली 'भारतीय कला केन्द्र' को जाता है। जिसमें स्व. लच्छू महाराज जी, शम्भू महाराज, बिरजू महाराज जी ने इस कला का प्रचार–प्रसार किया। शम्भू महाराज जी की 'कथक थ्रू एजेंस'। लच्छू महाराज जी की रचना 'मालती माधव' प्रसिद्ध नृत्य–नाट्य है। लच्छू महाराज जी ने अंतिम समय में भी चंद्रावली नृत्य–नाट्य का निर्देशन किया।

उपसंहार –

दिल्ली 'कथक केन्द्र' में बैले सेन्टर की स्थापना की गई, जिसके प्रथम निर्देशक पं. बिरजू महाराज जी

थे। इनके निर्देशन में 1960 में शान–ए–अवध, कुमार संभव।

- 1966 में हातो है शबो रोज तमाशा मेरे आगे।
- 1981 लय–परिक्रमा।
- 1982 नायिका।
- 1989 नृत्य केलि।
- 1984 मौनसाक्षी, नृत्य नाटिकाएँ प्रस्तुत की गई।
- गीत–गोविन्द 1977, बाज बहादुर 1975 में की गई।
- 2003–2004 में रोमियो–जूलियट प्रसिद्ध नृत्य्य–नाट्य का निर्देशन इनके द्वारा किया गया।

दिल्ली के विद्यालयों, कथक शिक्षा के केन्द्रों में यह कला आज भी सुप्रसिद्ध है। बड़ौदा में जगदीश गंगानी जी, अहमदाबाद में कुमुदिनि लाखिया, चण्डीगढ़ में श्रीमती शोभा कोसर जी, कलकत्ता में चेतना जलान जी व विजय शंकर जी आज भी इस कला का प्रचार–प्रसार कर रहे है।

सारांश –

बैले व संगीत की जुगलबंदी एक कलात्मक संयोग है। यह संगीतमय व भावमय शारीरिक हलन–चलन के साथ ताल व लय का सुन्दर संगम है। इनके माध्यम से कलाकार अपने भावों को मूर्त रूप देकर दर्शकों तक प्रस्तुत करता है। यह बैले कलाकार के प्रदर्शन को निखारता है। संगीत श्रव्य इन्द्रिय के साथ सम्बद्ध रखता है, बैले दृश्य इन्द्रिय के साथ। इस प्रकार संगीत व बैले की जुगलबंदी दृश्य और श्रव्य इन्द्रियों का अद्भूत संगम है।

संदर्भ सूची –

1. आजाद, पं. तीरथराम. कत्थक ज्ञानेश्वरी.
2. ज्योतिष ब्योहार, डॉ. चेतना. कत्थक कल्पद्रूम.
3. Ankuy, Bhardwaj. Ithias Aur Sangeet Ki Jugalbandi.
4. Banerji, Projesh. Indian Ballet Dancing.
5. Chaudhary, S.C. (1985). History of Modern India. Delhi Publication
6. Giri, Ashis. The Rich Tapestry of Indian Classical Dances.
7. Majumdar, R.C. (1983). History of Indian Freedom Movement. Calcutta Publication
8. S., Vijendra. Jugalbandi.
9. Singh, Kushwant. (1981). History of Sikhs. New Delhi Publication
10. Van Zile, Judy. Dance in India : An Annotated Guide to Source Materials.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 16–19
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

विषय–सिनेमा और संगीत का सह–अस्तित्व

डा. इंदिरा. वी

सहायक प्रोफेसर, महाविद्यालय–प्रेसीडेंसी, हेब्बाल, केंपापुरा, बेंगलूरू–२४

भारतीय सिनेमा–भारत एक भव्य एवं खासियतों से भरा देश है। भारत की संस्कृति भारत को रंगबिरंगा एवं आकर्षक बनाती है। भारतीय सिनेमा के वैविध्य विशेषताओं को प्रदर्षित करती है। भारत में रंगमंच की परंपरा प्राचीन काल से ही थी। भारतीय सिनेमा की शुरूवात मूक फिल्मों से हुई। सिनेमा मनोरंजन की नई विधा है। सिनेमा हमारे लिए विस्मय और रोमांचकारी होता है। सबसे पहले दादासाहेब ने राजा हरिशचंद्र के चरित्र को लेकर सिनेमा बनाया। पहले एक टैंट के अंदर बाईस्कोप द्वारा सिनेमा दिखाया गया। दादा साहेब को भारतीय फिल्मों का जनक कहा जाता है।

भारतीय संगीत का इतिहास–इसके तीन भाग है–प्राचीन संगीत, मध्यकाल, आधुनिक काल। प्राचीन काल में चार वेदों की रचना हुई। सामवेदों के मंत्रों का पाठ गायन मे होता है। गायन मे सात स्वर है। हमारे शास्त्रों में हर देवता किसी न किसी वाद्य–यंत्र से जुडे हैं। शिव के पास डमरू हैम नारद मुनि और सरस्वती के पास वीणा है, कृष्ण के पास बांसुरी है। विष्णु के पास शंख है। रावण स्वयं संगीत का विद्वान था। रावण ने रूद्रींणा का अविष्कार किया था। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र मे संगीत की अच्छी उन्नति हुई। रियासतों में संगीत्कारों को अच्छी तनख्वाह मिलती थी। मध्यकाल में कुछ ग्रंथ संगीत मकरंद, गीत–गोविंद और सगीत रत्नाकर हैं। अकबर के शासनकाल में संगीत की अच्छी उन्नति हुई। अकबर के दरबार में ३६ संगीतग्य थे। तानसेन ने कई रागों की रचना की। जिसमें राग दरबारी, कनाडा, सारंग और मल्हार है। आधुनिक काल में फरांसिसी, पुर्तगाली और अंग्रेज आए। इस दौर में संगीत की उपेक्षा हुई। १६०० के बाद फिर से संगीत का प्रचार शुरू हुआ। इसका श्रेय पंडित विष्णु दिगंबर और विष्णु नारायण को जाता है। आज संगीत अपने शिखर पर है। आकाशवाणी और सिनेमा द्वारा संगीत का काफी प्रचार हुआ।

गीत की परिभाषा एवं प्रकार–गीत वह साहित्यिकत रचना है, जिसमें अनुभूति, विचार एवं भावों को संगीत की मदद में अभिव्यक्ति की जाती है। गीत के शब्द सार्थक और निरथक दोनों होते है। भजन, गीत और ठुमरी तथा खैय्याल के शब्द सार्थक होते है। तरनों के शब्द तोम तनन देरे नोम निरथक होते है। गीतों की रचना विभिन्न छंदों एवं रागो में की जाती है। गीतों के अव्याय होते है–स्थाई, अन्तरा, संचारी और आभोग। स्थाई गीत के मुख्य विषय को प्रस्तुत करती है और अंतरा विकसित रूप को। इल्मी गीत भारतीय सिनेमा की अभिन्न अंग

है, जो कहानी कहने के लिए अहम भूमिका निभाती है।

फिल्मी गीतों की शुरूआत –

भारत में फिल्मी गीतों की शुरूआत १६३१ में आई। पहली बोलती फिल्म आलम–आरा से हुई और गाना था 'दर्द खुदा के नाम पर प्यारो' था। १६५० से १६७० के दौर को हम फिल्म संगीत का सुनहरा दौर कह सकते है। जे.जे. मोहन के द्वारा लिखित इंद्रसभा में ज्यादा से ज्यादा फिल्मी गानें हैं। इसमें ७२ गानें है। 'हम आपके है कौन' इस फिल्म में १४ गानें है। यश चोपड़ा द्वारा निर्देशित फिल्म सिल्सिला में १२ गाने हैं। १६६६ में सुभाष घई के द्वारा निर्मित ताल फिल्म में १२ गाने है। हम दिल दे चुके सनम इस फिल्म में ११ गाने है। २०१५ की फिल्म बाजीराव मस्तानी में १० गाने है। संजय लीला बंसाली द्वारा न्रिमित देवराज फिल्म में १० गीत है। पहला फिल्मी गीत गौहर जान के द्वारा १६३१ में गाया गया थ। इन्हें संगीत की ठुमरी रानी माना जाता है। फिल्मी गीतों के बोल अक्सर प्रतिष्ठित साहित्यकारों एवं कवियों द्वारा लिखे जाते है।

गीतों का महत्व –

संगीत का महत्व जीवन में बहुत है। मन को खुश रखने के लिए कुछ चीजें अत्यंत आवश्यक है जैसे स्वास्थ्य, चौन की जिंदगी और प्रेम। संगीत मन को स्वस्थ रखने का शक्तिशाली माध्यम है। इससे हमें सकारात्मक ऊर्जा मिलती है। संगीत वह शब्द है जो स्वर और लय के द्वारा भावों को प्रकट कर सकता है। लोक के लिए रचित गीत को हम लोक गीत कहते हैं। भोजपुरी गीतों में सामान्य लोगों के जीवन का वर्णन होता है।गीत का प्रबल प्रभाव शरीर और मन को उभयपक्षी शक्ति प्रदान करने का होता है। इससे मानसिक रोगों की चिकित्सा होती है। गीत के सुर और लय से मीरा, तुलसी, सूर और कबीर जैसे महानुभावों ने भक्त–शिरोमणी की उपाधि प्राप्त की है।

गीतों का लाभ –

संगीत सिर्फ मनोरंजन ही नहीं करता, बल्कि इससे कई सारे फायदे होते हैं। आजकल के तनाव में गीत गाने से दिमाग रिलेक्स होता है। दिमाग की नसों को आराम मिलता है। म्यूजिक थेरेपी इसे ही कहते है। दिमाग के डोपोमाइन का स्तर बढ़ता है। दर्द से पीड़ित व्यक्ति का दर्द कम होता है। फेफेडे मजबूत होते है। गंभीर सांस की बीमारी में राहत मिलती है। मेमोरी लास कम होती है। ३० मिनट तक गाने सुनने से दिल की क्षमता बढ़ती है। बेकार के विचारों से आराम मिलता है। अच्छी नींद आती है। गीत बच्चों के मस्तिष्क के कई हिस्सों को विकसित करती है। इससे जीभ, कंठ, वक्ष और हृदय की क्षमता का विकास होता है।

भारतीय सिनेमा और हिंदी गीत –

फिल्मी गाने फिल्म से पहले रिलीज होते है। और फिल्म को मशहूर बनाने मे मुख्य भूमिका निभाते है। गीतों मे शब्दों का प्रयोग भावनाओं, विचारों और कहानियों को व्यक्त करने के लिए किया जाता है। फिल्मी संगीत में विविध शैलिया होती हैं। फिल्मी, पाप, रोमांटिक, उर्जावान, आईटम इत्यादि। भारतीय फिल्मों में लोकगीतों, फिल्मी पाप और शास्त्रीय संगीत शामिल है। संगीत की दो परंपरा है–कर्नाटक और हिदुस्तानी।

फिल्मी गीतों में देश प्रेम से संबंधित, शहीदों से संबंधित, त्योहारों से संबंधित, भक्ति से संबंधित, छात्रों से

संबंधित, प्रेम से संबंधित, पर्यावरण से संबंधित, मौसम से संबंधित, मनोबल से संबद्ध, मानवीय मूल्यों से संबंधित, मजाक से संबंधित, मेहनत करने से संबंधित अनेक गाने होते है जिनके बोल अत्यंत ही अर्थपूर्ण और भावपूर्ण होते है।

'उडि–उडि जाए, उडि उडि जाए, दिल की पतंग देखो उडि जाए' ये गाना संक्रांति के पावन अवसर पर पतंग उड़ाए जाने वाली परंपरा पर आधारित है। शिव–रात्री से संबंद्ध अनेक शिवजी के गाने है। होली हमारी रंग–भरी संस्कृति को प्रदर्शित करती है। 'रंग बरसे भीगे चुनर वाली रंग बरसे' यह गाना होली के त्योहार को और भी रंग से भर देता है। हर त्योहार के पहले गणेश जी की पूजा होती है। गणेशजी को समर्पित देवा दी देवा गणपति देवा गणेश जी को समर्पित बहुत ही प्रसिद्ध गाना है। 'चलो बुलावा आया है, माता ने बुलाया है" हर मनुष्य को मां के चरणो में समर्पित हो जाने की उमंग से भर देता है।

देश–प्रेम हर नागरिक में होता है। देशानुराग देश के विकास के लिए परम आवश्यक है।' मेरे देश की धरती सोना उगले–उगले हीरे मोती' इस गाने में भारत की संपन्नता का उल्लेख है। 'भारत हमको जान से प्यारा है, सबसे प्यारा गुलिस्तान हमारा है' यह गाना विश्व के सामने भारत के प्रति निष्ठा को सामने लाता है। 'हिद देश के निवासी सभी जन एक है' यह गाना भारत की अनेकता में एकता को दिखाती है। 'छोड़ो कल की बाते, कल की बात पुराने, नए दौर पे लिखेंगे अपनी नई कहानी' यह गीत हमारे भविष्य के प्रति आशावादी भावना को हमारे सामने रखती है।

देश के संरक्षक हमारे वीर सेनानियों से जुड़े अनेक गाने है। एसे अनेक वीर सेनानी हैं, जिन्होने अपनी जान को न्यौछावर कर हमें आजादी दिलाई। एसे सेनानियों को श्रद्धांजली देते हुए अनेक फिल्म हैं। बोर्डर फिल्म का गाना 'संदेशे आते हैं, हमें तड़पाते है, चिट्ठी आती है, कि पूछे जाती है कि घर कब आओगे' यह गाना हमें यह बताता है कि किस तरह से वीर जवानों के घरवाले इन सेनानियों की वापसी का रास्ता देखते रहते है।

भक्ति फिल्मी गानों की बात ही अलग है, इसे हर इंसान गाते हुए अपनी भगवद–भक्ति को व्यक्त करता है। रामजी की निकली सवारी, रामजी की लीला है न्यारी' यह गीत भगवान रामचंद्रजी का अयोध्या वापसी एवं उल्लास को प्रकट करता है। जन्माष्टमी के दिन बजने वाला यह गाना' मच गया शोर सारी नगरी रे, आया बिरज का बांका संभाल तेरी गगरी रे' यह गीत बांके–बिहारी की लीला को व्यक्त करता है।

प्रेम की दुनिया से बढ़कर कुछ नहीं। प्रेमियों की प्रेमी दुनिया में जीने की इच्छा को और भी प्रबल बना देता है। प्रेम की भावना से जुडी ऐसी कोई भी फिल्म नहीं है, जिसमे प्यार के गीत न हो। 'हम तुम दोनो जब मिल हाएंगे, एक नया इतिहास बनांएगे' प्रिम की पराकाष्ठा को प्रदर्शित करता है। प्रेम का दूसरा पहलू विरह है। 'याद आ रही है, याद आने से तेरे जाने से जान जा रही है' यह गाना यह दिखाता है कि किस तरह प्रेम के विरह में नायक और नायिका जीना दूभर हो गया।

उपसंहार –

हर इंसान का जीवन में एक मकसद होता है। उसे जीते जी बहुत सारी जिम्मेदारिया निभानी पड़ती है। बचपन में पढाई, यौवन में नौकरी, प्रौढावस्था मे बच्चों एवं माता–पिता की जिम्मेदारी। दुनिया में उसे पूरी जिंदगी

जिम्मेदारियों के बोझ के तले रहना पड़ता है। ऐसे में इंसान को ऐसे उर्जा की आवश्यकता होती है। जो उसे थकान से परे रखे। इंसान को मनोरंजन की परम आवश्यकता होती है। जैसे कही घूमने जाना या नियमित जिंदगी से परे क्रिया–कलाप। फिल्म एक ऐसा माध्यम है जो इंसान को कुछ समय के लिए कल्पनिक दुनिया में ले जाता है और उसे खुशी प्रदान करता है। फिल्मी गीत इंसान में एक नई जान डाल देता है। तनाव के समय अगर वह कुछ गुनगुनाते तो उसे अत्यंत खुशी मिलती है। इस तरह फिल्म और फिल्मी गीत हमारे जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

सहायक ग्रंथ सूची :

१. सामयिक हिंदी निबंध, राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, एम.आई पब्लिकेशन।

२. आधुनिक निबंध, संजय गुप्ता–कास्मास बुक हौस पब्लिकेशन।

३. आधुनिक हिंदी निबंध, ओ.पी. मिश्र–बोहरा पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रिब्यूटर्स।

४. नए निबंध–श्याम जी गोकुल वर्मा–विध्याविहार।

५. हिंदी निबंध सौरभ–श्याम चंद्र कपूर–ग्रंथ अकादमी।

संगम Impact Factor : 7.834 Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 20–23
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

'ध्वनि–चयन' की दृष्टि से रामवृक्ष बेनीपुरी की कहानियों का शैली वैज्ञानिक विश्लेषण

मधु कुमारी
शोधार्थी, हिन्दी–विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़।

शैली–विज्ञान दो शब्दों को मिलाकर बनता है, शैली–विज्ञान अर्थात् शैली के वैज्ञानिक अध्ययन को शैली विज्ञान कहते हैं। शैली विज्ञान की परिभाषा रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव के शब्दों में इस प्रकार है –"शैली विज्ञान भी साहित्य को समझने–समझाने की एक दृष्टि है जो शैली के साक्ष्य पर एक ओर साहित्यिक कृति की संरचना (स्टक्चर) और गठन (टेक्सचर) पर प्रकाश डालती है और दूसरी ओर कृति का विश्लेषण करते हुए उसमें अंतनिर्हित साहित्यिकता का उद्घाटन करती है।"[1] भाषा विज्ञान और शैली विज्ञान का आपस में बहुत गहरा सम्बन्ध है। भाषा विज्ञान में ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य, अर्थ का वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण किया जाता है जबकि शैली विज्ञान में भाषिक विश्लेषण के साथ–साथ उसके प्रभाव–पक्ष का भी अध्ययन किया जाता है। इसी के साथ कथ्य की बारीकियों से भाषिक संरचना के ध्वनीय, शब्दीय, रुपीय, वाक्यीय और अर्थिय पक्षों को जोड़ता है। के पांच तत्व है – चयन, विचलन, समानांतरता, अप्रस्तुत–विधान, ध्वनीय शैली विज्ञान। पहला तत्व का 'चयन' चयन का अर्थ का 'चुनना'। शैली विज्ञान में चयन से अभिप्राय है – "भाषा की एकाधिक इकाइयों में से किसी एक का चुनाव करना अर्थात् किसी भाषा में प्राप्त एकाधिक इकाइयों या व्यवस्थाओं में, अभिव्यक्ति के लिए किसी एक को चुन लेना।"[2] रचनाकार भाषा में ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य एवं अर्थ के स्तर पर चयन करता है।

संगीत और शैली विज्ञान का संबंध अभिव्यक्ति के माध्यम और चुनावों के विज्ञान से है। शैली विज्ञान मुख्यतः शब्द–भाषा पर केन्द्रित है, लेकिन उसके सिद्धांत ध्वनि–कला पर भी लागू होते हैं। दोनों में शैली व्यक्ति, युग, संस्कृति और भाव की पहचान बनाती है। इसलिए संगीत को ध्वनि की 'भाषा' कहकर उसके शैलीगत विश्लेषण को संगीत–शैली विज्ञान के रूप में अध्ययन किया जाता है। यह संबंध भाषा और संगीत दोनों को एक–दूसरे के पूरक बनाता है और दोनों कलाओं के गहन समझ के लिए उपयोगी है।

ध्वनि–चयन :

"किसी भी रचना की भाषा में ध्वनियों का चयन नहीं होता बल्कि ध्वनि के प्रभाव और विशिष्ट भावों से उनके सम्बन्ध होने के कारण विशिष्ट ध्वनियुक्त शब्दों का चयन होता है।"[3] अपनी कहानी संग्रह 'चिता के फूल' के अंतर्गत रचनाकार ने सामाजिक चेतना के आयाम एवं सर्वहार वर्ग के शोषण का यथार्थ चित्रण किया है। रामवृक्ष बेनीपुरी ने कहानी में सहज लयबद्ध और प्रभावशाली ध्वनि–प्रवाह युक्त ध्वनि–चयन किया है। उनका

कथा साहित्य काव्यात्मक संगीत या अनुप्रास ध्वनि योजना से अधिक गद्य की स्वाभाविक लय पर केन्द्रित रहती है। अपनी रचनाओं में लय का प्राकृतिक निर्माण करने वाली ध्वनियों का बहुत ही सुंदर ढंग से चयन किया है। अनुप्रास या यमक का सीधा प्रयोग कम, लेकिन वाक्य–लय से ध्वनि–संगीत जो गद्य को काव्यात्मक प्रवाह देता है। इस शोध–पत्र में बेनीपुरी की 'कहीं धूप कहीं छाया', 'जीवन तरु', 'उस दिन झोंपड़ी रोई' कहानियाँ ली गई हैं।

'कहीं धूप कहीं छाया' कहानी के अंतर्गत रचनाकार ने ग्रामीण जीवन की आर्थिक असमानताओं, जातिगत भेद–भाव, साहूकारों द्वारा किये गए अत्याचारों का वर्णन बहुत की कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त किया गया है। शादी की तैयारी में जुटे लोग अपना अलग–अलग कार्य कर रहें हैं। एक दृश्य इस प्रकार है – "किंतु लौटा लाना जितना आसान था, धान को चिउड़ा बनाना उतना आसान न था। तो भी लग पड़ी। ईंधन नहीं था, बगीचे से पत्ते बटोर लाई। कुम्हार से कह–सुनकर एक खपड़ी माँग लाई। अब अकेले तारना, भाड़ना, घानी करना और कुटना। कभी चूल्हे–खपड़ी से झगड़ती, कभी ओखल–मूसल से युद्ध करती।"[4] इस वाक्यांश में ध्वनि–चयन सूक्ष्म घरेलू संघर्षपूर्ण और दैनिक जीवन की थकान लय को व्यक्त करने वाली ध्वनियों का बहुत सहज और यथार्थवादी प्रयोग है।

घरेलू और शारीरिक श्रम से जुड़ी ध्वनियों का सूक्ष्म चयन है। 'तारना', 'भाड़ना', 'घानी करना', 'कुटना'। 'चूल्हे–खपड़ी से झगड़ती, 'ओखल–मूसल से युद्ध करती', ये क्रियाएँ स्पष्ट ध्वनयात्मक नहीं हैं, लेकिन इनके उच्चारण और अर्थ में ही घरेलू कार्यों की खटखट, खड़खड़, कूटने, झोंकने, चटकने जैसी ध्वनियाँ छिपी हुई हैं। ध्वनि को शब्द के माध्यम से अनुभव कराया है, न कि सीधे 'खट–खट' या 'कड़–कड़' लिखकर। यह बहुत सूक्ष्म और ध्वनि–सृजन हैं।

संघर्ष और विरोध की ध्वनि का चयन है। 'झगड़ती', 'युद्ध करती' इस शब्द में ध्वनि से अधिक भाव की ध्वनि हैं जो टकराव, लड़ाई टंटा, खींचतान को व्यक्त करती है। चूल्हा, खपड़ी, ओखल, मूसल जैसे निर्जीव को भी जीवित विरोधी बना दिया गया है, जैसे वे खुद लड़ रहें हों।

ध्वनि की अनुपस्थिति और मौन का संतुलन है। कोई जोरदार चीख, कोई हँसी, कोई गीत, कोई संगीतमय ध्वनि नहीं हैं। सिर्फ श्रम की खटपट, झगड़ा, युद्ध की छोटी–छोटी ध्वनियाँ हैं। यहाँ पर ध्वनि का प्रमुख चयन शांति या संगीत में नहीं, श्रम की थकाऊ, एकाकी और दैनिक आवाजों में हैं। यह मौन और छोटी ध्वनियों का संयोजन बूढ़ी महिला के अलेके संघर्ष को बहुत मार्मिक बनाती है।

ध्वनि–चयन घरेलू, श्रम–प्रधान, संघर्षपूर्ण, सूक्ष्म–ध्वयात्मक और क्रूर यथार्थवादी है। ध्वनि युक्त शब्द 'मखाना' की बूढ़ी 'माँ' के संघर्ष को जीवंत ढंग से दर्शाया गया है।

'जीवन तरु' एक प्रभावशाली कहानी है। जिसमें ग्रामीण समाज की समस्याओं को दर्शाया गया है, जिसमें जातिगत उत्पीड़न को बहुत ही मार्मिक ढंग से व्यक्त किया गया है। जिसका उदाहरण इस प्रकार है – "और, आठ दिन भी नहीं बीते होंगे कि एक दिन सुबह–सुबह जब हकीम मामा स्नान कर, ठाकुरबाड़ी में पूजा–पाठ से निवृत्त हो लौट रहे थे, तो देखा, उनकी लीची के निकट एक मजमा जमा हैं। डुग–डुग, डुग–डुग की आवाज भी आ रही है। क्या बात है? वह दौड़े। वहाँ देखते हैं, चमार का एक बच्चा डुगडुगी दे रहा है। लाला पगड़ी बांधे अदालत का एक चपरासी दखलदिहानी का बोल बोल रहा है और बीस–पचीस मुस्तेंडे लाठी–बरछी लिए

लीची को घेरे हुए हैं। मामा देखते ही भौचक!"[5] इस वाक्यांश में ध्वनि–चयन नाटकीय, व्यंग्यात्मक और सामाजिक टिप्पणी से भरपूर है। लेखक ने बहुत ही सीमित लेकिन प्रभावशाली ध्वनि का प्रयोग किया है। जो घटना की तनावपूर्णता अचानकता और व्यंग्य को तीव्र करता है।

रचनाकार ने एकाकी और दोहराव वाली ध्वनि 'डुग–डुग', 'डुग–डुग'' का चयन किया है। यह डुगडुगी (ढोलक जैसे छोटा वाद्ययंत्र, जो अक्सर भिखारी, नाचने वाले या घोषणा करने वाले इस्तेमाल करते है) की विशिष्ट लयबद्धता लेकिन उबाऊध तेज ध्वनि है। दोहराव (डुग–डुग, डुग–डुग) से निरंतरता और खलबली का एहसास होता है, जैसे कोई असामान्य / खतरनाक घटना हो रही हो। यह ध्वनि दूर से आती हुई लगती है, जो जिज्ञासा और उत्सुकता पैदा करती है। 'डुगडुगी' ध्वनि सामान्यतः मजेदार ध्लोक उत्सव से जुड़ी होती है, लेकिन यहाँ नकारात्मक सन्दर्भ (चमार बच्चा, अदालत चपरासी, लाठियाँ) में इस्तेमाल किया गया है। समाज में निम्न वर्ग का 'नाच–गाना' या घोषणा भी डरावना और अपमानजनक बन जाता है। बेनीपुरी ने ध्वनि का न्यूनतम लेकिन लक्षित प्रयोग किया है। पूरे वाक्यांश में केवल एक ही मुख्य ध्वनि (डुग–डुग) है, अन्य ध्वनियाँ नहीं है। यह ध्वनि एकाग्रता पैदा करता है। लेखक ने जानबूझकर अन्य शोर भीड़ की आवाज, बातचीत को दबाकर सिर्फ इस अजीबोगरीब ध्वनि पर फोकस करता है, जिससे पाठक का ध्यान सीधा घटना की ओर जाता है। यह ध्वनि सस्पेंस और आश्चर्य का निर्माण करती है।

'ध्वनि सुनते ही मामा दौड़ते हैं, और फिर दृश्य (मजमा, लाठियाँ चपरासी का बोलना) सामने आता है। इस अंश में ध्वनि और दृश्य का संयोजन है। ध्वनि ट्रिगर का काम करती है। यह पूर्व–सूचना देती है कि कुछ गड़बड़ है, बिना वर्णन किए। यह मनोवैज्ञानिक तनाव बढ़ाती है।

'डुगडुगी' ध्वनि युक्त शब्द सामाजिक व्यंग्य को उभारने के लिए चयन किया है। जो परंपरागत रूप से निम्न जाति / भिखारी लोक–कलाकार से जुड़ी है। लेकिन यहाँ उसे अदालत चपरासी, मुस्तंडे, लाठियाँ के साथ जोड़ा गया है। जो समाज की शक्ति–प्रदर्शन और जातिगत उत्पीड़न की नंगी तस्वीर है। ध्वनि हास्यापद से भयावह हो जाती है जैसे कोई मजाक नहीं बल्कि धमकी का प्रतीक हो। मामा का 'भौचक' होना इस ध्वनि से ही और गहरा हो जाता है।

रचनाकार ने यहाँ ध्वनि–चयन अत्यल्प (केवल 'डुग–डुग') लेकिन अत्यधिक प्रभावी है जातिगत उत्पीड़न लेखक ने एक साधारण लोक–वाद्य की ध्वनि को सामाजिक अन्याय, जातिवाद और शक्ति के दुरूपयोग का प्रतीक बना दिया है। अभिव्यक्ति को व्यंग्ययुक्त बनाने के लिए ध्वनि का सूक्ष्म और तीखा प्रयोग किया है।

इस दृश्य को सजीव ढंग से अभिव्यक्त करने के लिए 'डुग–डुग, डुग–डुग' जैसी ध्वनि युक्त शब्दों का चयन किया है। जिससे दृश्य में चित्रात्मकता का बोध होता है।

'उस दिन झोंपड़ी रोई' मार्मिक कहानी है। कहानी में रमेश एवं राघो नामक दो पात्रों के माध्यम से बेनीपुरी ने शोषक एवं शोषित वर्ग का चित्रण किया है। रमेश का संबंध शोषक वर्ग से है जिसे बैठे बिठाए सब कुछ प्राप्त हो जाता है। राघो शोषित है जिसे हर चीज के लिए संघर्ष करना पड़ता है। जीवन के संघर्षों में राघो मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। कहानी में राघो की मृत्यु का संकेत इस प्रकार के व्यक्त किया गया है – "रुदन! हाहाकार! चीख! उसाँस! चीख!"[6] इस वाक्यांश में ध्वनि–चयन अत्यंत तीव्र, क्रमिक, भावनात्मक और नाटकीय है। लेखक ने यहाँ ध्वनियों को केवल वर्णन के लिए, बल्कि पीड़ा असहायता, आतंक और सामूहिकता विनाश की चरम स्थिति

को व्यक्त करने के लिए चुना है। जिसमें भावों का उन्माद है। बेनीपुरी शब्दों में एक क्रमिक तीव्रता का निर्माण करते हैं। 'रुदन' (रोना, विलाप–नरम, निरंतर) 'हाहाकार' (जोरदार, सामुहित पुकार), 'चीख' (तीखी, एकाकी चीख) 'उसाँस' (साँस फूलना, दम घुटना) 'चीख' (पुनः चरम, भेदक चीख)। यह ध्वनियाँ धीरे–धीरे बढ़ती हुई तीव्रता में आती हैं। शुरू में दर्द व्यक्तिगत और दबा हुआ है, फिर सामूहिक और असहनीय हो जाता है। यह पीड़ा के बढ़ते स्तर को ध्वनि से महसूस कराता है, जैसे कोई आपदा धीरे–धीरे चरम पर पहुँच रही हो। बेनीपुरी ने राघो की मृत्यु के माध्यम से सम्पूर्ण शोषित वर्ग की दुर्गति की ओर संकेत किया है।

चीख और चीख में 'ख' और 'ची' की ध्वनि बहुत तीखी, काटने वाली है। 'हाहाकार' में 'हा–हा' का दोहराव गूँजदार, निराशाजनक पुकार बनाता है। 'उसाँस' में 'साँ' की पुफकार दम घुटने की व्यथा को जीवंत करती है। चयनित यह ध्वनियाँ कानों में चुभती हैं। राघो की मृत्यु की वास्तिवक पीड़ा के दर्द को व्यक्त करती है।

विस्म्यादिबोधक चिन्ह (!) का बार–बार प्रयोग जो प्रत्येक ध्वनि के बाद किया गया है जो आघात, अचानकता और तीव्रता को बढ़ाती है। यह ध्वनियों को चीखों की तरह अलग–अलग फेंका हुआ महसूस कराती है, जैसे कोई लगातार चिल्ला रहा हो और रुक नहीं पा रहा। यह भावनात्मक उन्माद को और गहरा करता है।

सामूहिकता से व्यक्तिगत तक का संक्रमण जिसमें 'रुदन / हाहाकार' जो सामूहिक विलाप अर्थात् राघो के परिजन की पीड़ा को दर्शाता है। चीख / उसाँस / चीख व्यक्तिगत (राघो की माँ), असहाय, अंतिम संघर्ष को दर्शाता है। ध्वनि–चयन से व्यक्तिगत दर्द से सामूहिक त्रासदी तक का पूरा सफर दिखाता है।

न्यूनतम शब्दों में अधिकतम प्रभाव। केवल पाँच शब्द, कोई वर्णन नहीं, फिर भी राघो की मृत्यु की पूरी त्रासदी का चित्र उभर आता है। कम शब्दों में बेनीपुरी का भावनात्मक धमाका है। जहाँ यह ध्वनियाँ सामाजिक पीड़ा का प्रतीक बन जाती हैं। यह ध्वनियाँ केवल सुनाई नहीं देतीं, बल्कि हृदय को चीरती हैं। बेनीपुरी ने ध्वनि–चयन को पीड़ा के हथियार की तरह इस्तेमाल किया है। ध्वनि–चयन के माध्यम से राघो द्वारा लेखक ने सामाजिक ध्मानवीय त्रासदी व्यक्त किया है।

निष्कर्ष :–

ध्वनि–चयन उनकी क्रांतिकारी, प्रचारात्मक और जन सुलभ शैली का अभिन्न अंग है। ध्वनियों का भावानुकूल कठोर–मृदु संतुलन हैं। भावों की तीव्रता, संवाद की जीवंतता के लिए विशिष्ट ध्वनियों का चयन किया गया है। रचनाकार का ध्वनि चयन सामाजिक संदेश का संचार करती हैं। ध्वनि सरल, प्रभाव गहरा और लय स्वाभाविकता यही बेनीपुरी के कथा साहित्य का मूल सूत्र है।

सन्दर्भ सूची :–

1. नरेन्द्र, डॉ. अनिता, निराला के आलोचनात्मक लेखन में शैली वैज्ञानिक मान्यताएँ, आशा बुक्स प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2001, पृष्ठ संख्या 64
2. तिवारी, भोलानाथ, शैली विज्ञान, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1977, पृष्ठ संख्या 68
3. यथावत्, पृष्ठ संख्या 69
4. शर्मा, सुरेश (सम्पा०), बेनीपुरी ग्रंथावली भाग–1, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2013, पृष्ठ संख्या 33
5. यथावत्, पृष्ठ संख्या 77
6. यथावत्, पृष्ठ संख्या 86

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 24–27
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

संगीत एवं गेय शास्त्र विधा का ऐतिहासिक विवेचन

माधुरी अनंतराव पाटील
सहाय्यक प्राध्यापिका
स्वामी रामानंद तीर्थ मराठवाडा विद्यापीठ, नांदेड, महाराष्ट्र.

सारांश :

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो संगीत के उत्पत्ति के संबंध में कोई विशेष प्रमाण नहीं मिलता। संगीत प्राचीन काल से ही अपनी प्राकृतिक स्वरूप मे सदा मनुष्य के साथ जुड़ा हुआ है। संगीत पृथ्वी स्थल के हर सजीव के भावनाओं को, मन को आनंदित करता है। प्राचीन काल से लेके आधुनिक काल तक संगीत में हुए परिवर्तन के क्या मायने है, उन्नति परक क्या बदलाव आए है। यह जानने का प्रयास इस इस शोध पत्रिका के माध्यम से वर्णन किया जा रहा है।

संगीत की उत्पत्ति :

संगीत की उत्पत्ति के संबंध में विभिन्न विद्वानों ने अपने अपने विचार व्यक्त किये है। कुछ विद्वानों का यह मानना है कि संगीत की उत्पत्ति वेदों के निर्माता ब्रम्हा द्वारा हुई है, तथा ब्रह्मदेव ने यह विद्या भगवान शंकर को प्रदान की, भगवान शंकर ने या विद्या सरस्वती को दी और सरस्वती माता ने यह विद्या नारद मुनि को प्रदान की, नारद मुनि ने विद्या का प्रचलन पृथ्वी पर किया। प्रकृति के गोद मे पनप रहा यह संगीत पंचमहाभूतों से सम्मिलित है। विद्वान यह भी कहते है कि संगीत की उत्पत्ति एक शिशु के समान है, जिस प्रकार शिशु अपनी सभी क्रियाएं जैसे चिल्लाना, रोना आदि में अपने आवश्यकतानुसार करता है। उसी प्रकार संगीत को अपने अंदर स्वयं बनता पाता है। संगीत का उद्भव प्राकृतिक ध्वनियो का अनुकरण है। प्रकृति को संगीत से जोड़ते हुए विद्वानों ने पशु–पक्षियों से संगीत का जन्म हुआ माना है।

दामोदर पंडित के अनुसार संगीत के सात स्वर विभिन्न पशु पक्षी ध्वनी है, जिसमे मोर से षड्ज, चातक से ऋषभ, बकरा से गांधार, क्रोंच से मध्यम, कोयल से पंचम, मेंढक से धैवत, हाथी से निषाद की उत्पत्ति मानी है। संगीत की उत्पत्ति के अनेक धार्मिक आधार है। कुछ विद्वान संगीत का उद्भव 'ओउम्' शब्द से मानते है। यह ओउम अपने अंदर तीन शक्तियां समाहित किये हुए है अ, उ, म। अ शब्द जन्म व उत्पत्ति का प्रतीक है, उ शब्द पालक व रक्षा का प्रतीक है, म शब्द विलय शक्ति का प्रतीक है। ओम वेदों का बीज मंत्र है। संगीत के मनोवैज्ञानिक आधार को देखा जाये तो मनुष्य पहले बोलना, चलना आदि क्रियाएं सीख के तत्पशात उसमे भाव जागृत होते है। फिर उन भावों की अभिव्यक्ति के लिए संगीत की उत्पत्ति हुई।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ध्वनी आंदोलन के परिणाम स्वरूप संगीत की उत्पत्ति होती है। प्राचीन भारतीय

संगीतकारों का विचार करें तो प्रागैतिहासिक काल में मनुष्य अपनी जंगली अवस्था मे रहते थे। संगीत का कोई विकसित रूप यहा नहीं मिलता। पत्थर, लकडी का प्रयोग करके आकार देके तुकडो में आवाज करते हुए कुछ वाद्य को बनाया गया था। इस युग में नृत्य का ज्ञान नहीं था, केवल आवाज निकालते हुए गाते थे। उत्तर पाषाण काल के दौरान संगीत कला कुछ विकसित हुई। सामूहिक संगीत का जन्म हुआ जहां स्त्री–पुरुष दोनों स्वर आलाप करते हुए संगीत का आनंद लेते थे। पत्थर के उपर लकड़ी से, पत्थर से आवाज बनाकर टंकार जैसी ध्वनियां निर्माण करते थे। वैदिक काल में आर्य के मूल ग्रंथ वेदों को ही संगीत की उत्पत्ति का ग्रंथ माना जाता है। सभी विद्वान वेद को विश्व का आदि साहित्य मानते है, जिसका संगोपन करने के लिए मौखिक रूप से गुरु शिष्य परंपरा अंतर्गत होने वाले वेदों का काल 2500 ईसा पूर्व से 1200 ईसा पूर्व माना जाता है, जिसके अंतर्गत मंत्र भेद के कारण ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद का संहिता के रूप में निर्माण हुआ। सामवेद को संगीत का वेद कहा गया।

वैदिक काल में सामाजिक दृष्टि से संगीत को उच्च मान्यता प्राप्त हुई। ऋग्वेद काल में गीत, वाद्य, नृत्य तीनों का प्रचलन हुआ। ऋग्वेद की रचनायें स्वरावलियों में निबद्ध होने के कारण स्त्रोत कहलाई गई। गायत्रीन संज्ञा लौकिक एवं धार्मिक समारोह को गाथा के स्वरूप प्रस्तुत किये जाने वाले समारोह को दी जाती थी। ऋग्वेद काल में तीन ही प्रकार के वाद्य अवनद्ध, तंतू, सुषिर का उल्लेख पूर्ण तया विकसित स्वरूप में मिलता है। तीन स्वर जिने उदात्त, अनुदात्त, स्वरित के भेद में प्रस्तुत किया गया है। ऋग्वेद समय मिलते एक मेल को समान कहा जाता है। यजुर्वेद में वर्णित सोमयज्ञ में साम गायक का सर्वप्रथम उल्लेख मिलता है, जिसमें चार गायक होते हैं। अथर्ववेद में दुंदुभी नामक, आघाट, करकरी नामक वाद्य का उल्लेख मिलता है। गंधर्व लोक में इन वाद्य की ध्वनि से अनुनाद से होने वाली गर्जना वीर पुरुषो के ह्रदय में शत्रु को परास्थ करने की भावना को झंकृत करते थे। सामवेद में मुख्य रूप से आर्चिक एवं गान यह भेद है। आर्चिक में ऋग्वेद की संग्रह है दूसरा भाग गान है, इन गान ग्रंथो मे साम का स्वर मय रूप है। पौराणिक काल में संगीत की स्थिति की जानकारी के लिए हमें शिक्षा पुराण, उपनिषद ग्रंथो का अभ्यास करके संगीतशास्त्र स्वरूप का स्तर समझना होगा। पौराणिक युग में संगीत के शास्त्रीय स्वरूप का महत्व कम हो गया था, शास्त्रीय संगीत की जगा लोक नृत्य, लोकगीत लोकसंगीत ने लिए जहा सामान्य जीवन में संगीत का प्रयोग बढने लगा। सामान्य जनजीवन में शास्त्र को छोड़कर लोककलाओ को अपनाया गया। महाकाव्य काल में गायन वादन नृत्य तीनों का उल्लेख मिलता है।

महाकाव्य काल भारत का एक गौरवशाली स्वर्ण काल रहा है। इस काल में विश्व के दो प्रसिद्ध महाकाव्य की रचना हुई, प्रथम रामायण द्वितीय महाभारत जो विश्व की धरोहर है। इस काल में संगीत का उपयोग समाज में विविध स्वरूप विभिन्न क्षेत्र में होने लगा था। महाभारत काल में गायन वादन व नृत्य तीनों का उल्लेख मिलता है। महाभारत में साम व गान गाथा का बहुत उल्लेख मिलता है, गायन संबंधी कुछ शास्त्रीय शब्दों के भी संकेत महाभारत काल में मिलते है। संगीत के लिये रामायण में गंधर्व संज्ञा तथा युद्ध संगीत के लिये युद्ध गंधर्व संज्ञा मिलती है। रामायण में सामविधा का विधिवत गायन होता था। इसके अतिरिक्त उत्तर कांड में रावण के द्वारा साम स्त्रोंतों के गायन से शंकर भगवान की स्तुति करते हुए उल्लेख मिलते है। वर्ण संगीत का उल्लेख भी हमें रामायण में मिलता है। रामायण काल में स्वर, त्रिस्थान, सप्त जाति आदि का वर्णन मिलता है। तंतु वाद्यों में विपंची, बल्लरी विना तथा अवध्य वाद्य में दुंदुभी, मृदंग, पटह, मंडूक, सुषिर वाद्य में वेणू, शंख, घनवाद्य में मंजिरा, करताल का

वर्णन मिलता है। जन्म–मरण, राज्याभिषेक, पूजन आदि सभी पर 'मागध जाति' के लोग आख्यानों, वीर गाथा रचना का गायन करते थे। बौद्धकाल मे बौद्ध ज्ञान धारा मे भिक्षु के लिए संगीत निशिद्ध माना गया है, भगवान बुद्ध भी संगीत का उपयोग नही करते थे। संगीत के अंतर्गत गीत, वादित, नच्च तथा अख्खानम का उल्लेख बौद्ध धर्म की कुछ गाथाओं मे मिलता है।

जैन काल में षडज आदि सप्तस्वर, तीन ग्राम, 21 मूर्चना, अलंकार आदी का वर्णन मिलता है। आमोद, आलिंग, विचकी ताल को संगीत का आवश्यक अंग माना जाता था। हरिवंश पुराण मे वैदिक की अपेक्षा गंधर्व संगीत का अधिक प्रचलन था। मार्कंडेय पुराण में पवताल, मुर्छना, चार पद तीन ताल, जाति, तीन ग्राम, सात गीत को सप्त ग्राम का उल्लेख 23वे प्रकरण में मिलता है। विष्णु धर्मोत्तर पुराण का तीसरा खंड संगीत के लिये महत्वपूर्ण है। संगीत के तीनों स्थान उर, कंठ, शिर स्वर के साथ मंत्र मध्य तार का वर्णन मिलता है। संगीत के सैद्धांतिक पक्ष का विवरण विष्णु धर्मोत्तर पुराण में देखा जाता है। मौर्यकाल में प्रसिद्ध इतिहासकार अलामी के अनुसार पहली बार भारतीय संगीत यूनान आथा और यूनानी संगीत भारत आया था। एक महत्त्वपूर्ण घटना है जो संगीत गृह तथा विद्यमान संगीत के अध्यात्मिकता का, शास्त्रीय संगीत का प्रचार समय था। कनिष्क काल मे भाव नृत्य तथा कल्पना नृत्य का अधिक प्रचलन रहा। गुप्त काल में भरतपुत्र दत्तिल द्वारा लिखित दत्तिल ग्रंथ का उल्लेख मिलता है। चंद्रगुप्त के पश्चात उनका पुत्र समुद्रगुप्त गद्दी पर बैठा जो स्वयं एक संगीतज्ञ था। राज दरबारों में संगीत उत्सव प्रारंभ आयोजन होता था। शाही संगीत समारोह में सामान्य जनता सहभाग लेती थी।

इस युग में शास्त्रीय संगीत का भी बहुत प्रचार हुआ। गुप्तकाल को नाट्य का स्वर्ण युग कहा जाता है। कालिदास, भास, शूद्रक जैसे महान कवि नाटककार इसी काल में हुए। हर्षवर्धन काल हर्ष के नैषध चरित्र में अनेक वीणा प्रकारों का वर्णन मिलता है। हर्ष के दरबारी कवी बाणभट्ट ने संगीतमय कवितायें रची। मतंग के बृहद्देशी में कई महत्वपूर्ण तथ्य जो संगीत की शास्त्रविधा का वर्णन करते है। राजपूत काल घरानों की नींव रखी गई। भवभूति ने संगीत रचना की। राज तरंगिनी की रचना की। खिलजी काल में अलाउद्दीन खिलजी एक संगीत प्रेमी था, इसी के दरबार में अमीर खुसरो नामक संगीत जिन्होंने भारतीय संगीत पर अमित छाप छोड़ी, जो कव्वाली, गझल, तराना, ख्याल आदि के जनक माने जाते है। अमीर खुसरो भारतीय कला एवं संस्कृति के प्रशंसक थे। मुगल काल में बाबर महान संगीत प्रेमी था, उसके दरबार में अनेक गायक वादक थे।

इसी काल में कल्लीनाथ संगीतकार हुए। बाबर पुत्र हुमायुं भी संगीत प्रेमी था। शासन काल में स्वामी हरिदास संगीतज्ञ हुए जिनका संगीत अलौकिक था। इनके शिष्य में तानसेन अकबर के नवरत्न में अपनी छाप छोड़ी है। गोस्वामी तुलसीदास ने अपने रचना लिखे है जो संगीत के क्षेत्र में बहुमुल्य है। जहांगीर काल में भी संगीत को शास्त्र विधा के अनुसार अनेक ग्रंथ के साथ अपना प्रचार होते हुए देखा गया। हिंदू मुस्लिम संस्कृति का आदान प्रदान इस काल में हुआ। शहाजहां के दरबार में विराम खा, लाल खा, निरंकार खान जैसे संगीतज्ञ हुए। पंडित जगन्नाथ को कविराज से सम्मानित किया गया। संगीत के बहुत से ग्रंथ लिखे गये। औरंगजेब काल मे फकर उल्ला द्वारा राग दर्पण जैसे संगीत ग्रंथ की रचना की गई। स्वतंत्रता पूर्व काल तथा स्वातंर्त्य काल एवं आधुनिक काल तक संगीत की विधाओं मे अनेक अनेक परिवर्तन हुए हमें मिलते है।

शास्त्रीय संगीत की गेय विधा का विचार करे तो इसकी भी उन्नति धीरे–धीरे स्तर बढते हुए हुई। निबद्ध गान प्रकारों के अंतर्गत प्राचीन प्रबंध गान आता है। भारतीय संगीत के प्राचीन गान शैली का एक रूप प्रबंध है।

प्रबंध शब्द अत्यंत प्राचीन है। इसके पूर्व ध्रुव गीत होते थे । इस प्रकार अनेक राग ताल वाद्य और संगीत व्याख्या अति प्राचीन होकर अप्रचलित हो गई, उसी प्रकार संगीत का प्रबंध प्रकार भी अप्रचलित हो गया। तेरहवीं शताब्दी मे प्रबंध लोकप्रिय थे।

प्रबंध के पश्चात् जाति गायन प्रचलन में आया, जिसमें जाति की दस लक्षण है। जातियों के समावेश जाति गायन में होता था। संगीत रत्नाकर के अनुसार मेदिनी, आनंदीनी, दिपिनी, भावनी, तारावली यह पांच जातियां है। इसके पश्चात् आधुनिक प्रबंध गायन आयाढ जिसमे ध्रुवपद का समावेश है। ध्रुवपद की गोबरहार, डागूर, खंडहार, नौहार यह चार बानिया है, जो जो गाई जाती है। इसके पश्चात अनिबद्ध गान प्रकार में ख्याल, ठुमरी, टप्पा, तराना, दादरा, त्रिवट, चतरंग, सादरा, रागमाला, खमसा, गझल, धमार, होरी, कजरी, चैती, भजन, कीर्तन, लोकगीत आदी का समावेश होता है।

निष्कर्ष :

कालानुक्रमानुसार संगीत की बढ़ती हुई महत्ता को देखते हुए हम निश्चित तौर पर कह सकते है कि भारतीय संगीत प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक पूरे विश्व पर अपना अधिपथ्य जमाये हुए है। संगीत के निर्मित से लेकर आज तक उन्नति एवं प्रचार–प्रसार के अनुसार हर एक काल में संगीत का पड़ता। मनुष्य जीवन में अपना स्थान इस तरह से है कि के मनुष्य के शिशुवस्था से लेके वृद्धावस्था तक हर क्षण स्वर– ताल–लय से संगीतमय है।

संदर्भ सूची :

1. वसंत, संगीत विशारद, (2019), थर्टी फर्स्ट एडिशन, संगीत कार्यालय हाथरस, उत्तर प्रदेश।
2. एस. बिडकर, संगीत शास्त्र, (2010), संस्कार प्रकाशन, पुणे।
3. उमेश जोशी, भारतीय संगीत का इतिहास।
4. संगीत कार्यालय (2015) संगीत शोध अंक।

संगम Impact Factor : 7.834 Website : www.ginajournal.com ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 28–31
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

बैले और संगीत की जुगलबंदी : एक शोधात्मक अध्ययन

के. माधवी
एसोसिएट प्रोफेसर, मंच कला विभाग
वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान।

सारांश –

प्रस्तुत अध्ययन में बैले एवं संगीत के पारस्परिक संबंध का विश्लेषण किया गया है। यह संबंध केवल सहायक न होकर, परस्पर आश्रित एवं पूरक स्वरूप का है। बैले की संकल्पना, संरचना तथा अभिव्यक्ति संगीत के अभाव में पूर्ण रूप से साकार नहीं हो सकती। इसी प्रकार संगीत भी बैले के माध्यम से दृश्यात्मक एवं भावात्मक अभिव्यक्ति प्राप्त करता है।

इस शोध पत्र में बैले और संगीत की अंतर्संबद्धता का ऐतिहासिक, सैद्धांतिक तथा संरचनात्मक दृष्टिकोण से विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में यह प्रतिपादित किया गया है कि संगीत बैले को लय, भाव एवं नाटकीयता प्रदान करता है, जबकि बैले संगीत को दृश्यात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से सजीव बनाता है। दोनों कलाओं के समन्वय से मंचीय प्रस्तुति अधिक प्रभावशाली, संवेदनशील तथा संप्रेषणीय बनती है। यह शोध नृत्य एवं संगीत की अंतःक्रियात्मक प्रकृति को समझने में सहायक सिद्ध होगा तथा प्रदर्शन कलाओं के क्षेत्र में सौंदर्यबोध एवं अभिव्यक्ति के अध्ययन को सुदृढ़ आधार प्रदान करेगा।

मुख्य शब्द : बैले, संगीत, अंतर्संबद्धता, लय, ताल, भावाभिव्यक्ति, मंचीय कला।

भूमिका –

जहाँ पूर्व के अधिकांश नृत्य शताब्दियों से विकसित एवं उच्चकोटि की परंपरागत नृत्य शैलियों की पुनरावृत्ति करते रहे हैं, वहीं पश्चिमी यूरोप तथा वे समस्त देश जहाँ यूरोपीय सभ्यता का प्रभाव रहा है, उन्होंने नृत्य को अपने सामाजिक और सांस्कृतिक विकास का अभिन्न अंग बनाया। पाश्चात्य नर्तकों ने अपने नृत्य रूपों के विकास हेतु निरंतर नवीन प्रयोगों को आत्मसात किया, जिसके परिणामस्वरूप नृत्य कला में सृजनात्मकता एवं स्पष्ट वैचारिकता दृष्टिगोचर होती है। प्राचीनतम उपलब्ध साक्ष्यों से यह ज्ञात होता है कि पाश्चात्य नृत्यकला ने सामाजिक अथवा धार्मिक नृत्यों के विविध स्वरूपों को समाहित किया है। इनमें समाज के विभिन्न स्तरों पर प्रचलित सामुदायिक नृत्य भी सम्मिलित रहे हैं तथा बौद्धिक–चिंतनयुक्त रचनात्मक नृत्य भी विकसित हुए हैं, जिन्हें प्रायः विकास की चरम अवस्था के रूप में देखा जाता है।

भारत के समान ही स्पेन और फ्रांस के गुफा–चित्रों में भी कुछ आदिम नृत्य आकृतियों के साक्ष्य प्राप्त होते हैं, जिनसे यह अनुमान लगाया जाता है कि उस युग में यूरोपीय सभ्यता में मानव धार्मिक कृत्यों के रूप

में तथा घटनाओं को अभिव्यक्त करने के साधन के रूप में नृत्य किया जाता था। विद्वानों के अनुसार, उस काल में भी नृत्य के माध्यम से भावनात्मक, आध्यात्मिक तथा सामाजिक अभिव्यक्ति की जाती थी, जो पाश्चात्य नृत्य परंपरा के विकास का प्रारंभिक आधार सिद्ध होती है।

नृत्य एवं संगीत का अंतर्संबंध –

कला के क्षेत्र में नृत्य और संगीत का संबंध अत्यंत प्राचीन एवं घनिष्ठ रहा है। विश्व की लगभग सभी नृत्य परंपराओं में संगीत को अनिवार्य तत्व के रूप में स्वीकार किया गया है। नृत्य की लयात्मक संरचना, भावाभिव्यक्ति तथा गतियों की स्पष्टता संगीत के माध्यम से ही साकार होती है। इसी कारण नृत्य को संगीत की दृश्यात्मक अभिव्यक्ति माना जाता है। सभी नृत्य परंपराओं में संगीत को अनिवार्य तत्व के रूप में स्वीकार किया गया है। विशेष रूप से शास्त्रीय नृत्य विधाओं में संगीत का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। नृत्य की शारीरिक गतियाँ, हस्त–मुद्राएँ, भाव तथा संपूर्ण संरचना संगीत की लयात्मकता के कारण ही पहचान प्राप्त करती हैं। संगीत के साथ अपनी अभिन्नता के कारण ही नृत्य को विशिष्ट पहचान मिलती है।

बैले के संदर्भ में यह तथ्य और अधिक स्पष्ट हो जाता है। बैले की शारीरिक गतियाँ, संतुलन, सौंदर्य और भाव–संप्रेषण संगीत के लयात्मक संगठन से नियंत्रित होते हैं। बैले में संगीत की संरचना के अनुरूप नृत्य की गति, भाव तथा मंचीय विन्यास निर्धारित किया जाता है। इस प्रकार बैले में नृत्य और संगीत का समन्वय नाटकीयता एवं सौंदर्यबोध को सुदृढ़ करता है। नृत्य–संगीत की इस अंतर्संबद्धता का अध्ययन नृत्य–सौंदर्यशास्त्र की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इससे यह स्पष्ट होता है कि संगीत नृत्य को केवल सहारा नहीं देता, बल्कि उसे अर्थ, प्रभाव और संपूर्णता प्रदान करता है।

बैले (Ballet) –

बैले पाश्चात्य देशों में विकसित एक अत्यंत सुसंस्कृत रंगमंचीय नृत्य कला है, जिसमें संगीत, नृत्य, मंच–सज्जा, वेश–विन्यास तथा कथ्य का समन्वित प्रयोग किया जाता है। इसमें संगीत के साथ लयात्मक संतुलन, शारीरिक अनुशासन तथा विशिष्ट सौंदर्यबोध का विशेष महत्व होता है।

बैले : अवधारणा एवं व्युत्पत्ति –

शैलीबद्ध नृत्य की संकल्पना बैले से जुड़ी हुई है। बैले अपने नृत्य, संगीत तथा अलंकरण के माध्यम से किसी नाटकीय कथानक का विकास भी कर सकता है। बिना किसी वर्णात्मक विवरण के, केवल नृत्य और संगीत के संयोजन द्वारा भी बैले में कथ्य की दृश्यात्मक प्रस्तुति संभव होती है।

'बैले' (Ballet) शब्द की व्युत्पत्ति इटालियन भाषा के 'बल्लारे' (Ballare) शब्द से मानी जाती है, जिसका अर्थ 'नृत्य करना' है। इस संदर्भ में लक्ष्मीनारायण गर्ग ने 'बैले' शब्द की उत्पत्ति 'बॉल' शब्द से बताई है, जिसका आशय नृत्य करना है; यद्यपि कुछ विद्वानों का मत है कि नृत्य–गीत को 'बैलेड' कहा जाता था, जिससे 'बैले' शब्द का प्रयोग प्रचलन में आया। ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी ऑफ डांस के अनुसार, बैले पश्चिमी अकादमिक रंगमंचीय नृत्य की एक प्रमुख विधा है, जो शास्त्रीय विद्यालय (The Classical School) की सुव्यवस्थित तकनीक पर आधारित होती है। इसमें नृत्य को प्रायः नाटकीय तत्वों, संगीत, मंच–सज्जा एवं वेश–विन्यास के साथ प्रस्तुत किया जाता है, जिससे इसकी अभिव्यक्ति अधिक प्रभावशाली एवं सौंदर्यपूर्ण बनती है। इस प्रकार बैले न केवल एक नृत्य शैली है, बल्कि यह संगीत, नाट्य और दृश्य कला के समन्वय से विकसित एक समग्र रंगमंचीय कला

रूप के रूप में प्रतिष्ठित है।

बैले : अर्थ एवं ऐतिहासिक विकास –

बैले का शाब्दिक अर्थ रंगमंच पर गीत–संगीत के सहयोग से नृत्य के माध्यम द्वारा कथानक का नाटकीय अथवा काव्यात्मक प्रभाव उत्पन्न करना है। इसमें नृत्य, संगीत और दृश्यात्मक संयोजन के द्वारा भावों एवं घटनाओं का सजीव मंचन किया जाता है। बैले का प्रारंभ 15वीं एवं 16वीं शताब्दी में इटालियन राजपरिवारों के दरबारी नाट्यात्मक मनोरंजन के रूप में हुआ। इन नाट्य प्रस्तुतियों में नर्तक स्वयं ही किसी पौराणिक अथवा काल्पनिक कथानक के आधार पर नृत्य, मुख–अभिनय, गीत, संवाद, संगीत और भव्य वेश–विन्यास के साथ प्रस्तुति देते थे। नृत्य एवं वेश–विन्यास के इन प्रयोगों से जब रंगमंचीय अभिव्यक्ति को एक सुसंगठित रूप प्रदान किया गया, तब यह कला–रूप 'बैले' के रूप में विकसित हुआ। इस विकासक्रम में बैले को एक स्वतंत्र और सुस्पष्ट कला–रूप के रूप में प्रतिष्ठित करने में कई शताब्दियाँ लगीं। बैले ने अपने भीतर तकनीकी अनुशासन, शारीरिक संतुलन, लयात्मक संरचना तथा सौंदर्यात्मक स्पष्टता को आत्मसात किया। इस कला–रूप की तकनीक को इटली में 15वीं सदी के यूरोपीय पुनर्जागरण काल के दरबारी मनोरंजन से विकसित माना जाता है। इस प्रकार बैले का विकास केवल एक नृत्य शैली के रूप में नहीं, बल्कि एक समग्र रंगमंचीय कला के रूप में हुआ, जिसमें नृत्य, संगीत, अभिनय और दृश्य तत्वों का समन्वित प्रयोग इसकी प्रमुख विशेषता है।

यूरोप में बैले का प्रारंभिक विकास –

इटली में वर्ष 1489 ई. में एक समारोह के अवसर पर 'एंटी' नामक नृत्य की प्रस्तुति की गई, जिसे प्रारंभिक बैले प्रस्तुति के रूप में स्वीकार किया जाता है। इसके पश्चात 1581 ई. में बैले के विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण घटना घटित हुई, जब फ्रांस में 'बैले द ला रेन' (Ballet de la Reine) नामक भव्य बैले का मंचन किया गया। यह प्रस्तुति लगभग पाँच घंटे तक चली, जिसे लगभग दस हज़ार दर्शकों ने देखा। इस बैले में नृत्य के साथ–साथ संगीत एवं नाटकीय तत्वों का प्रभावशाली समन्वय किया गया था। इस प्रस्तुति में बैले को केवल मनोरंजन के साधन के रूप में नहीं, बल्कि एक संगठित नाट्य कला के रूप में प्रस्तुत किया गया। बैले की संरचना में कथानक, अभिनय, संगीत तथा मंचीय विन्यास को समान महत्व दिया गया, जिससे इसकी पहचान एक स्वतंत्र रंगमंचीय कला के रूप में स्थापित हुई।

1581 ई. में ही फेब्रित्सियो कारोसो (Fabrizio Caroso) ने 'बल्लारीनी' नामक पुस्तक की रचना की, जिसमें इटली के बैले की तकनीकी पद्धति का विस्तृत वर्णन किया गया। सोलहवीं शताब्दी के अंत तक बैले में तकनीकी स्पष्टता एवं संरचनात्मक परिष्कार दिखाई देने लगा, जिससे यह कला अधिक परिपक्व स्वरूप में विकसित हुई। अठारहवीं शताब्दी में बैले के क्षेत्र में और अधिक सैद्धांतिक एवं तकनीकी विकास हुआ। इस काल में कोरियोग्राफी (Choreographic) विषयक ग्रंथों की रचना की गई। राउल ऑजे फेइये (Raoul Auger Feuillet) द्वारा प्रकाशित कोरियोग्राफी संबंधी ग्रंथ ने बैले की गतियों, संरचना और प्रस्तुति को लिखित रूप में संरक्षित करने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस प्रकार यूरोप में बैले का विकास एक क्रमिक प्रक्रिया के रूप में हुआ, जिसमें दरबारी मनोरंजन से लेकर एक सुसंस्कृत, सैद्धांतिक और तकनीकी रूप से परिपक्व रंगमंचीय कला तक की यात्रा स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

बैले में संगीत की भूमिका एवं उपयोग –

बैले के इतिहास में यह पहली बार देखा गया कि नृत्य को संगीत की भाँति लिपिबद्ध (Notation) करने का प्रयास किया गया। इस संदर्भ में प्रयुक्त शब्द कोरियोग्राफी (Choreography) फ्रेंच भाषा से लिया गया है। यह शब्द ग्रीक भाषा के कोरियो (नृत्य अथवा गति) तथा ग्राफीन (लिखना) शब्दों से निर्मित है, जिसका तात्पर्य नृत्य गतियों को लिखित रूप में संरक्षित करना है। हास्केल अर्नोल्ड अपनी पुस्तक Going to the Ballet में उल्लेख करते हैं कि बैले में संगीत केवल श्रव्य माध्यम न होकर दृश्यात्मक प्रभाव भी उत्पन्न करता है। बैले में संगीत का प्रयोग नृत्य को एक सजीव दृश्य रूप प्रदान करता है। यह संगीत विशेष रूप से बैले के लिए रचा जाता है अथवा शास्त्रीय पाश्चात्य संगीत परंपरा से चयनित किया जाता है। संगीत की ताल नर्तक की गति को नियंत्रित करती है, जबकि उसकी रागात्मक संरचना वातावरण एवं भावनात्मक संदर्भ को सशक्त बनाती है। संगीत के माध्यम से कथ्य, वातावरण तथा चरित्रों के मनोवैज्ञानिक पक्ष को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त किया जाता है।

बैले–संगीत की उत्कृष्टता के प्रमुख उदाहरणों में योग क्लासिक (Yog Classic) एवं प्योत्र इलिच त्चाइकोव्स्की द्वारा रचित स्वान लेक, द नटक्रैकर तथा स्लीपिंग ब्यूटी जैसी अमर रचनाएँ उल्लेखनीय हैं। इन कृतियों में संगीत एवं नृत्य का अद्वितीय समन्वय दृष्टिगोचर होता है, जो बैले को एक संपूर्ण रंगमंचीय कला के रूप में स्थापित करता है।

बैले में संगीत-नृत्य की अंतःक्रियात्मक संरचना –

बैले, संगीत एवं नृत्य की एक आदर्श समन्वित कला का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है। इन दोनों कलाओं में संगीत और नृत्य का ऐसा गहन पारस्परिक संबंध स्थापित होता है कि उन्हें पृथक करना प्रायः असंभव प्रतीत होता है। यह समन्वय केवल बाह्य नहीं, बल्कि आंतरिक एवं भावात्मक स्तर पर भी प्रभावी होता है। अपने सिद्धांतों की दृष्टि से बैले एक प्रयोगधर्मी कला है, जो तकनीकी दृष्टि से नृत्य की विविध विधियों को समाहित करती है। बैले में नर्तक की शारीरिक संरचना, संतुलन एवं नियंत्रण पर विशेष बल दिया जाता है, जो इसे शास्त्रीय नृत्य की परंपरा से जोड़ता है। बैले की संरचना में नृत्य, दृश्य–सज्जा, वेशभूषा तथा मंच–सज्जा का समन्वित योगदान स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

उपसंहार –

बैले एवं संगीत की युगलबंदी एक सजीव कलात्मक संवाद है, जिसमें दोनों कलाएँ एक–दूसरे को पूर्णता प्रदान करती हैं। संगीत बैले को लय, भाव एवं संरचना प्रदान करता है, जबकि नृत्य संगीत को दृश्यात्मक अभिव्यक्ति देता है। इस पारस्परिक संबंध के माध्यम से नृत्य और संगीत की संयुक्त शक्ति एक समग्र कलात्मक अनुभव का सृजन करती है, जो दर्शक को सौंदर्यबोध एवं भावनात्मक अनुभूति से समृद्ध करती है। इस प्रकार बैले एक ऐसी मंचीय कला के रूप में विकसित होता है, जिसमें संगीत और नृत्य साथ–साथ विकसित होकर एक पूर्ण कला रूप का निर्माण करते हैं।

सन्दर्भ सूची –

1. दाधीच, पुरु. (2019). कथक नृत्य शिक्षा. इन्दौर : बिन्दु प्रकाशन, पृ. सं. – 65
2. दाधीच, पुरु. (2019). कथक नृत्य शिक्षा. इन्दौर : बिन्दु प्रकाशन, पृ. सं. – 65

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 32–38
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

दूरदर्शन पर प्रसारित राष्ट्रवादी गीतों का समाज पर प्रभाव

डॉ. मनीष चौधरी
सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान)
माता जीजाबाई शा. (स्वशासी) स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला इंदौर (म. प्र.)

शोध सार –

राष्ट्रवाद एक सामूहिक मनोवैज्ञानिक चेतना है, जो किसी क्षेत्र के निवासियों को अतीत और वर्तमान के आधार पर जोड़ने के साथ सुखद भविष्य के साझे सपने बुनती है। इतिहास साक्षी है अपनी अद्भुत भौगोलिक विशेषताओं के कारण भारत ने न तो अपनी सीमाओं को लांघा है और न ही भारत को उसकी प्राकृतिक सीमाओं से विचलित किया जा सका है। साथ ही यह सत्य है कि भारत में सदैव सांस्कृतिक, सामाजिक और भाषायी विविधता विद्यमान रही है, फिर भी सम्पूर्ण भारत में एक ही आध्यात्मिक चेतना का आबाध प्रवाह रहा है और इसी कारण यहां के नागरिकों में राष्ट्रवाद की भावना पनपी, जिसे स्वार्थवश प्रभावित किए जाने के प्रयास होते रहे हैं।

जब बात स्वतंत्र भारत की होती है तो नागरिकों में राष्ट्रवाद की भावना जगाने और बनाए रखने में दूरदर्शन की महती भूमिका रही है। इस पर विविध कार्यक्रमों के अंतराल में नियमित रूप से ऐसे गीत दिखाए जाते थे, जो भारतीय संस्कृति को समग्र रूप से प्रस्तुत कर जनमानस पर सकारात्मक भाव अंकित करने में सक्षम रहें हैं। प्रस्तुत शोध प्रमुख गीतों और उनके प्रभाव की पड़ताल कर रहा है।

प्रस्तावना –

राष्ट्रवाद केवल एक राजनीतिक अवधारणा नहीं है, बल्कि यह एक सामूहिक मनोवैज्ञानिक चेतना है, जो किसी भौगोलिक क्षेत्र के निवासियों को साझा इतिहास, संस्कृति और भविष्य के सपनों से जोड़ती है। भारत जैसे महाद्वीपीय विविधता वाले राष्ट्र में, जहाँ कोस–कोस पर पानी और चार कोस पर वाणी बदल जाती है, वहाँ 'राष्ट्रीय एकीकरण' (National Integration) का कार्य सदैव से चुनौतीपूर्ण रहा है। स्वतंत्रता के पश्चात के प्रारंभिक दशकों में जहाँ आधुनिक भारत की नींव रखी जा रही थी, वहीं 1980 का दशक तकनीकी और संचार क्रांति के संधिकाल के रूप में उभरा। इसी कालखंड में 'दूरदर्शन' ने भारतीय घरों में अपनी दस्तक दी और देखते ही देखते यह केवल मनोरंजन का साधन न रहकर 'राष्ट्र–निर्माण' (Nation Building) का एक प्राथमिक

उपकरण बन गया।

प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य केंद्र उन 'राष्ट्रवादी गीतों' का विश्लेषण करना है, जिन्होंने सन् 1980 से 2010 के मध्य दूरदर्शन के माध्यम से भारतीय जनमानस पर अपनी अमिट छाप छोड़ी। सन् 1980 के दशक के उत्तरार्द्ध में भारत कई आंतरिक चुनौतियों, क्षेत्रीय असंतोष और अलगाववादी प्रवृत्तियों से जूझ रहा था। ऐसे में समाज को भाषाई और सांस्कृतिक सीमाओं से परे एक सूत्र में पिरोने के लिए 'दृश्य–श्रव्य' (Audio-Visual) माध्यम का सहारा लिया गया। शोध का तर्क यह है कि संगीत की सार्वभौमिक भाषा और दूरदर्शन की व्यापक पहुँच ने मिलकर एक ऐसे 'कल्पित समुदाय' (Imagined Community) की अवधारणा को धरातल पर उतारा, जहाँ कश्मीर से कन्याकुमारी तक का नागरिक स्वयं को एक साझी पहचान 'भारतीयता' में ढूँढने लगा।

यह प्रस्तावना इस तथ्य को भी रेखांकित करती है कि ये गीत केवल सरकारी सूचनाएँ या विज्ञापन मात्र नहीं थे, बल्कि ये कलात्मक श्रेष्ठता और सामाजिक इंजीनियरिंग का एक अनूठा संगम थे। 'मिले सुर मेरा तुम्हारा' या 'विजयी विश्व तिरंगा प्यारा' जैसे गीतों ने दृश्य प्रतीकों (Visual Symbols) के माध्यम से विविधता को एक शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया। यह शोध पत्र इस बात की पड़ताल करेगा कि कैसे इन गीतों ने सांस्कृतिक कूटनीति (Cultural Diplomacy) के माध्यम से देश के भीतर एकता के भाव को सुदृढ़ किया और तत्कालीन समाज की मनोवैज्ञानिक संरचना को प्रभावित किया।

शोध के उद्देश्य –

भारत की विविधता में एकता को सुनिश्चित करने के लिए दूरदर्शन द्वारा संगीत में कार्यक्रमों की जो भूमिका रही है उसका मूल्यांकन करना।

☐ भारतीय एकता और अखंडता के लिए राष्ट्रवादी गीतों का दूरदर्शन पर प्रसारण के महत्व का मूल्यांकन करना और समाज में इनके प्रभावों का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि –

उक्त शोध पत्र भारत में दूरदर्शन द्वारा प्रसारित राष्ट्रवादी गीतों के महत्व और समाज में उनकी उपयोगिता का अध्ययन करने हेतु बनाया गया है जिसमें प्राथमिक स्त्रोत के रूप में अवलोकन एवं सर्वेक्षण पद्धति का प्रयोग किया गया है। साथ ही द्वितीय स्त्रोत के रूप में कुछ पत्र–पत्रिकाओं पुस्तकों का अध्ययन कर तथ्यों का संकलन किया गया है। तदोपरांत तार्किक विश्लेषण कर निष्कर्ष तक पहुँचा गया है।

दूरदर्शन का सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभाव (Social-Cultural Impact)

1980 और 90 के दशक में दूरदर्शन का प्रभाव केवल एक प्रसारण माध्यम तक सीमित नहीं था, बल्कि यह भारतीय समाज के आधुनिकिकरण और एकीकरण की धूरी बन चुका था। इस कालखंड को समाजशास्त्रीय दृष्टि से 'सामूहिक चेतना के निर्माण का युग' कहा जा सकता है। निजी सैटेलाइट चैनलों के आगमन से पूर्व, दूरदर्शन ही वह एकमात्र खिड़की थी जिसके माध्यम से पूरा भारत एक साथ दुनिया को देख रहा था और स्वयं को समझ रहा था।

- **सांस्कृतिक साक्षरता और दृश्य एकीकरण :** भारत की भौगोलिक विशालता के कारण देश का एक बड़ा हिस्सा अन्य क्षेत्रों की परंपराओं से अनभिज्ञ था। दूरदर्शन पर प्रसारित राष्ट्रवादी गीतों ने पहली बार केरल के

कथकली, पंजाब के भांगड़ा और पूर्वोत्तर के बिहू को एक ही मंच पर लाकर खड़ा किया। इसने समाज में 'सांस्कृतिक साक्षरता' (Cultural Literacy) को बढ़ाया। जब दर्शकों ने 'मिले सुर मेरा तुम्हारा' में अलग–अलग राज्यों के पहनावे और वाद्ययंत्रों को देखा, तो उनके मन में 'अलगाव' का भाव समाप्त हुआ और 'आत्मीयता' का उदय हुआ।

- **राष्ट्रीय उत्सव का सामूहिक अनुभव :** दूरदर्शन ने राष्ट्रीय पर्वों (15 अगस्त और 26 जनवरी) को घरों के भीतर एक उत्सव का रूप दे दिया। इन राष्ट्रवादी गीतों का बार–बार प्रसारण एक प्रकार का 'सामाजिक अनुकूलन' (Social Conditioning) था, जिसने नागरिकों के भीतर राज्य और राष्ट्र के प्रति सम्मान के भाव को सुदृढ़ किया। यह माध्यम साक्षर और निरक्षर दोनों वर्गों के लिए समान रूप से प्रभावी था क्योंकि संगीत और दृश्यों को समझने के लिए किसी औपचारिक शिक्षा की आवश्यकता नहीं थी।
- **शास्त्रीयता से सुगमता की ओर :** दूरदर्शन ने 'उच्च कला' (High Art) को अभिजात्य वर्ग के ड्राइंग रूम से निकालकर आम जनता के आँगन तक पहुँचाया। पंडित भीमसेन जोशी, एम. बालमुरली कृष्णन और लता मंगेशकर जैसे दिग्गजों को इन गीतों के माध्यम से घर–घर में पहचाना जाने लगा। इसने भारतीय शास्त्रीय संगीत को राष्ट्रवाद के एक अनिवार्य अंग के रूप में स्थापित किया।
- **विविधता का उत्सव :** तत्कालीन सामाजिक तनावों के बीच, दूरदर्शन ने 'एकता' के उस मॉडल को प्रस्तुत किया जो समावेशी (Inclusive) था। इन गीतों ने यह संदेश दिया कि भारतीयता का अर्थ अपनी क्षेत्रीय पहचान को त्यागना नहीं, बल्कि उसे राष्ट्र के व्यापक संदर्भ में स्वीकार करना है। इस प्रकार, दूरदर्शन ने एक ऐसे 'सामाजिक गोंद' (Social Glue) का कार्य किया जिसने खंडित समाज को जोड़ने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

प्रमुख गीतों का विस्तृत विश्लेषण (Case Studies)

दूरदर्शन द्वारा निर्मित राष्ट्रवादी गीतों की श्रृंखला में कुछ ऐसी रचनाएँ रहीं जिन्होंने न केवल लोकप्रियता के कीर्तिमान स्थापित किए, बल्कि भारतीय राष्ट्रवाद के 'दृश्य व्याकरण' (Visual Grammar) को ही बदल दिया। यहाँ हम तीन प्रमुख गीतों का गहन विश्लेषण करेंगे :–

1988 में प्रसारित यह गीत स्वतंत्र भारत के संचार इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण मोड़ माना जाता है। इसका निर्माण 'लोक सेवा संचार परिषद' द्वारा किया गया था।

- **संगीतमय रागमलिका :** इस गीत की महानता इसके संगीत संयोजन में निहित है। इसकी शुरुआत राग 'भैरवी' से होती है, जो भारतीय संगीत में अत्यंत पवित्र और शांति पूर्ण राग माना जाता है। पंडित भीमसेन जोशी की गंभीर और भारी आवाज से शुरू होकर यह गीत कर्नाटक संगीत के प्रकांड विद्वान बालमुरली कृष्णन की सुरीली तानों तक पहुँचता है। यह शास्त्रीय संगीत के उत्तर और दक्षिण ध्रुवों का मिलन था।
- **भाषायी और क्षेत्रीय समावेश :** गीत में हिंदी के अतिरिक्त कश्मीरी, पंजाबी, सिंधी, तमिल, कन्नड़, तेलुगु, मलयालम, बांग्ला, ओड़िया, गुजराती और मराठी का प्रयोग किया गया। शोध की दृष्टि से, यह 'भाषायी विविधता' को समस्या के बजाय 'शक्ति' के रूप में पेश करने का पहला बड़ा प्रयोग था। जब एक कश्मीरी बच्चा 'च्येनि म्येनि सुर ग्वयि मिलिथ' सुनता है, तो वह राष्ट्र की मुख्यधारा से जुड़ाव महसूस करता है।
- **विजुअल सिमेंटिक्स (दृश्य अर्थ) :** वीडियो में भारतीय रेल, हाथियों का झुंड, हिमालय और समुद्र के दृश्य

भारत की भौगोलिक अखंडता को दर्शाते हैं। अमिताभ बच्चन, प्रकाश पादुकोण, और कमल हासन जैसे सितारों का एक सामान्य नागरिक की तरह दिखना 'अभिजात्य' और 'आम आदमी' के बीच की दूरी को कम करता है।

- **तुलनात्मक विश्लेषण (सन् 1988 बनाम 2010) :** सन् 2010 में ए. आर. रहमान द्वारा संगीतबद्ध 'फिर मिले सुर' में आधुनिक वाद्ययंत्रों और बॉलीवुड सितारों की बहुलता थी। जहाँ सन् 1988 का संस्करण 'आध्यात्मिक और सांस्कृतिक एकता' पर केंद्रित था, वहीं सन् 2010 का संस्करण 'आधुनिक और गतिशील भारत' की तस्वीर पेश करता था। हालांकि, शोध यह भी बताता है कि सन् 1988 के संस्करण का भावनात्मक प्रभाव अधिक गहरा था, क्योंकि वह 'सादगी' पर आधारित था।

'सुन-सुन-सुन मेरे नन्हे सुन' : भावी पीढ़ी का निर्माण :

1998 के आसपास प्रसारित इस गीत ने विशेष रूप से 'जेन–जी' और 'मिलेनियल्स' की प्रारंभिक चेतना को प्रभावित किया।

- **बाल मनोविज्ञान और नायकत्व :** जैकी श्रॉफ, जो उस समय के लोकप्रिय अभिनेता थे, का बच्चों के बीच बैठकर यह गीत गाना एक प्रभावशाली रणनीति थी। 'सारा भारत ये कहे, देश में एकता रहे' का संदेश बच्चों के लिए राष्ट्रवाद का पहला पाठ बना।
- **सामाजिक समरसता :** दृश्य के स्तर पर, विभिन्न धार्मिक पहचान वाले बच्चों को एक साथ खेलते दिखाना भारत के 'धर्मनिरपेक्ष ताने–बाने' (Secular Fabric) को मजबूत करने का प्रयास था। यह गीत सिखाता है कि राष्ट्रवाद केवल सीमाओं पर लड़ना नहीं, बल्कि आपस में प्रेम के साथ रहना भी है।

'विजयी विश्व तिरंगा प्यारा' : ऐतिहासिक गौरव और प्रतीकवाद :

- श्यामलाल गुप्त 'पार्षद' द्वारा रचित यह झंडा गीत दूरदर्शन पर अपनी विजुअल प्रस्तुति के कारण अमर हो गया।
- **ऐतिहासिक निरंतरता :** सन् 1924 में लिखा गया यह गीत स्वतंत्रता संग्राम का 'एंथम' था। दूरदर्शन ने इसे 26 जनवरी की परेड और लहराते हुए विशाल तिरंगों के साथ जोड़कर नागरिकों में 'सामूहिक गौरव' भरा।
- **प्रतीकात्मक विश्लेषण :** 'सदा शक्ति बरसाने वाला' – यहाँ 'शक्ति' को 'प्रेम' (प्रेम सुधा सरसाने वाला) के साथ जोड़ा गया है। यह भारतीय राष्ट्रवाद के उस दर्शन को दर्शाता है, जहाँ शक्ति का उपयोग विनाश के लिए नहीं, बल्कि जनकल्याण के लिए किया जाता है। यह गीत नागरिकों के भीतर 'ध्वज' के प्रति एक पवित्र श्रद्धा भाव पैदा करने में सफल रहा।
- **''बजे सरगम हर तरफ से, गूँज बनकर देश राग'' :** दूरदर्शन पर प्रसारित राष्ट्रवादी गीतों की परंपरा में "बजे सरगम हर तरफ से, गूँज बनकर देश राग" एक विशिष्ट सांस्कृतिक प्रस्तुति के रूप में उभरता है। यह गीत भारतीय शास्त्रीय संगीत के राग देश पर आधारित है, जो स्वयं में राष्ट्रभाव, गरिमा और सांस्कृतिक एकता का प्रतीक माना जाता है। गीत की संकल्पना इस विचार को रेखांकित करती है कि भारत की विविध भाषाएँ, सुर, वाद्य और कलात्मक परंपराएँ मिलकर एक साझा 'देश राग' की रचना करती हैं। इसमें 'सरगम' का प्रयोग प्रतीकात्मक रूप से भारत की बहुरंगी सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों को दर्शाता है, जो जब एक साथ गूँजती हैं, तो राष्ट्रीय एकता का स्वर निर्मित करती हैं। यह प्रस्तुति केवल संगीत तक सीमित न रहकर दृश्य माध्यम के द्वारा

विभिन्न क्षेत्रों, कलाकारों और पारंपरिक वाद्ययंत्रों को एक मंच पर लाकर भारत की विविधता में एकता की अवधारणा को सशक्त रूप से अभिव्यक्त करती है। इस प्रकार यह गीत दूरदर्शन के उस सांस्कृतिक दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करता है, जिसमें कला और संगीत को राष्ट्र निर्माण तथा सामाजिक समरसता के प्रभावी माध्यम के रूप में देखा गया।

मनोवैज्ञानिक और समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण (Psychological and Sociological Perspective)

- राष्ट्रवादी गीतों का प्रभाव केवल कानों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि यह गहरे मनोवैज्ञानिक और सामाजिक स्तर पर कार्य करता है। संगीत में वह शक्ति होती है जो तार्किक मस्तिष्क को पार कर सीधे भावनाओं को स्पर्श करती है।
- **संवेगात्मक अनुनाद (Emotional Resonance) :** मनोवैज्ञानिक रूप से, जब कोई व्यक्ति सामूहिक लय या 'कोरस' में गाता है, तो उसके भीतर 'ऑक्सीटोसिन' नामक हार्मोन का स्राव होता है, जिसे 'बॉन्डिंग हार्मोन' भी कहा जाता है। दूरदर्शन के गीतों में 'मिले सुर मेरा तुम्हारा' जैसी रचनाएँ जब करोड़ों लोग एक साथ सुनते थे, तो इसने एक 'सामूहिक उत्साह' (Collective Effervescence) पैदा किया। यह भावना व्यक्ति को उसके संकीर्ण व्यक्तिगत हितों से ऊपर उठाकर एक वृहद इकाई (राष्ट्र) से जोड़ देती है।
- **दृश्य अनुकूलन और राष्ट्र की कल्पना :** प्रसिद्ध विचारक बेनेडिक्ट एंडरसन ने राष्ट्र को एक 'कल्पित समुदाय' कहा है। भारत जैसे देश में, जहाँ एक व्यक्ति कभी भी अपने जीवन में सभी साथी नागरिकों से नहीं मिल सकता, वहाँ ये गीत 'दृश्य सेतु' का कार्य करते हैं। जब दर्शक स्क्रीन पर विभिन्न प्रांतों के लोगों को मुस्कुराते और तिरंगे के साथ देखते हैं, तो उनका मस्तिष्क एक ऐसी छवि बनाता है, जहाँ वे अज्ञात लोगों के साथ भी एक भावनात्मक जुड़ाव महसूस करते हैं।
- **सॉफ्ट राष्ट्रवाद बनाम उग्र राष्ट्रवाद :** समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से, दूरदर्शन के इन गीतों की सबसे बड़ी विशेषता इनका 'समावेशी' (Inclusive) होना था। ये गीत किसी शत्रु देश के प्रति घृणा पर आधारित नहीं थे, बल्कि अपनी ही आंतरिक विविधता के प्रति प्रेम पर आधारित थे। यह 'सॉफ्ट राष्ट्रवाद' समाज में सहिष्णुता और समरसता को बढ़ावा देने का कार्य करता था।
- **अधिगम और समाजीकरण (Socialization) :** बच्चों के लिए 'सुन–सुन–सुन मेरे नन्हे सुन' जैसे गीत समाजीकरण की एक प्रक्रिया थे। ये गीत बच्चों के कोमल मन पर यह अंकित कर देते थे कि तिरंगा, राष्ट्रगान और विविधता भारत की पहचान के अनिवार्य अंग हैं। इस प्रकार, संगीत ने एक 'अदृश्य शिक्षक' की भूमिका निभाई।

तुलनात्मक अध्ययन और वर्तमान स्थिति (Comparative Study) :

यदि हम सन् 1980 के दशक के गीतों की तुलना आज के डिजिटल युग के राष्ट्रवादी कंटेंट से करें, तो कई महत्वपूर्ण शोध बिंदु उभरते हैं :–

- **एकाधिकार बनाम बिखराव :** दूरदर्शन के पास उस समय सूचना का एकाधिकार था, जिससे वह एक 'साझा नैरेटिव' (Shared Narrative) बनाने में सफल रहा। आज सोशल मीडिया और हजारों चैनलों के युग में दर्शक और उनकी विचारधाराएँ खंडित (Fragmented) हो गई हैं। आज कोई एक गीत पूरे भारत को वैसे ही

एक सूत्र में बांध पाए, इसकी संभावना कम हो गई है।

- **कला बनाम व्यावसायिकता :** पुराने गीतों में शास्त्रीय शुद्धता और कलात्मकता को प्राथमिकता दी जाती थी। वर्तमान में देशभक्ति गीत अक्सर फिल्मों के विपणन (Marketing) या 'ट्रेंड' का हिस्सा बनकर रह गए हैं, जिससे उनकी स्थायी विरासत वैसी नहीं बन पाती जैसी 'मिले सुर' की बनी।

निष्कर्ष (Conclusion) :

प्रस्तुत शोध पत्र के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि दूरदर्शन पर प्रसारित होने वाले राष्ट्रवादी गीत केवल मनोरंजन या सरकारी सूचना के माध्यम नहीं थे, बल्कि वे आधुनिक भारत की 'सांस्कृतिक रीढ़' के निर्माण के गंभीर प्रयास थे। इन गीतों ने सिद्ध किया कि जब संगीत की शक्ति, कलात्मक श्रेष्ठता और दृश्य संचार का समावेश होता है, तो वह किसी भी राजनीतिक भाषण से अधिक प्रभावी ढंग से जनमानस को प्रभावित कर सकता है।

शोध के मुख्य निष्कर्षों को निम्नलिखित बिंदुओं में समेटा जा सकता है–

- **एकीकरण का उपकरण :** 'मिले सुर मेरा तुम्हारा' जैसे गीतों ने सफलतापूर्वक यह संदेश दिया कि विविधता राष्ट्र के लिए बोझ नहीं, बल्कि उसकी सबसे बड़ी पूंजी है। इसने भाषायी और क्षेत्रीय दीवारों को गिराकर 'भारतीयता' की एक साझी पहचान गढ़ी।
- **संस्कार और चेतना :** 'सुन–सुन–सुन मेरे नन्हे सुन' जैसे गीतों ने आने वाली पीढ़ियों के भीतर राष्ट्रीयएकता के बीज बोए, जो सामाजिक समरसता के लिए अनिवार्य थे।
- **विरासत की निरंतरता :** यद्यपि आज संचार के माध्यम बदल चुके हैं और सूचनाओं का बिखराव बढ़ा है, परंतु दूरदर्शन के इन गीतों की 'उदात्त भावना' और 'समावेशी राष्ट्रवाद' आज भी प्रासंगिक है।

निष्कर्षत :–

दूरदर्शन के इन गीतों ने भारत के एक ऐसे रूप की कल्पना को साकार किया, जो अपनी परंपराओं में गहराई तक जड़ा हुआ है और अपने भविष्य के प्रति आधुनिक और गतिशील है। ये गीत आज भी हमें याद दिलाते हैं कि राष्ट्र केवल मानचित्र की रेखाओं से नहीं, बल्कि साझा सुरों, साझा सपनों और साझा गौरव से बनता है। भविष्य के शोधकर्ताओं के लिए यह अध्ययन एक आधार प्रदान करता है कि कैसे डिजिटल युग में भी संगीत और कला के माध्यम से सामाजिक सद्भाव और राष्ट्रीय एकता को पुनः सुदृढ़ किया जा सकता है।

सुझाव :

दूरदर्शन पर प्रसारित किए जाने वाले इन गीतों का प्रसारण दूरदर्शन के अतिरिक्त विभिन्न टीवी चैनलों पर भी किया जाना चाहिए जिससे इनकी भावनाओं का पूर्ण उपयोग किया जा सके और समाज में इन गीतों के प्रभाव को और अधिक बढ़ाया जा सके।

संदर्भ सूची (References) :

1. दूरदर्शन अभिलेखागार. (1988). राष्ट्रीय एकता पर आधारित विशेष संगीत प्रस्तुतियाँ. नई दिल्ली : प्रसार भारती।

2. पांडे, पीयूष. (2009). मिले सुर मेरा तुम्हारा : संकल्पना और सांस्कृतिक प्रभाव. भारतीय जनसंचार पत्रिका, 14(2), 45–58।
3. शर्मा, रामकुमार. (2012). भारतीय राष्ट्रवाद और संगीत की भूमिका. वाराणसी : भारतीय ज्ञानपीठ।
4. त्रिपाठी, सुधा. (2015). टेलीविजन और राष्ट्र–निर्माण : दूरदर्शन का योगदान. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
5. Rao, S. (2010). Public Service Broadcasting in India : Doordarshan and National Integration. Journal of Media Studies, 6(1), 21–34.
6. Chatterjee, P. (1997). The Nation and Its Fragments. Princeton University Press.
7. प्रसार भारती. (1990). राष्ट्रीय पर्वों पर प्रसारित सांस्कृतिक कार्यक्रमों की भूमिका. सरकारी प्रकाशन, भारत सरकार।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 39–40
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

काव्य और संगीत का अन्तर्सबंध

डॉ. मंजु पटेल
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी
श्री भगवानदास आदर्श संस्कृत महाविद्यालय, हरिद्वार।

काव्य और संगीत दो ऐसी कलाएं हैं जो एक दूसरे के पूरक हैं। काव्य शब्दों से भावों को अभिव्यक्त करता है और संगीत स्वरों के माध्यम से। भारतीय साहित्य में काव्य और साहित्य का ललित कलाओं में सर्वोच्च स्थान हैं। इन दो कलाओं के अभाव में मनुष्य को पशु के समान कहा गया है।

साहित्यसंगीतकलाविहीनः साक्षात्पशुः पुच्छविषाणहीनः।[1]

काव्य और संगीत का परम प्रयोजन रस निष्पत्ति है। जहां काव्य व्यंजनावृत्ति से रस का आस्वादन करता है वहीं संगीत सुर से। प्राचीन काल से ही काव्य और संगीत का अन्तर्सम्बन्ध चला आ रहा है। सामवेद संगीत और काव्य के अनन्य सम्बन्ध का प्रमाण है। ऋचाओं का गायन उदात्त अनुदात्त स्वरित स्वर में किया जाता है। भक्तिकाल में सुरदास, तुलसीदास, मीराबाई कबीरादि के पद शुद्ध रागों पर आधारित थे जिन्हें आज भी उन्हीं रागों में गाया जाता है। काव्य के स्वरूप का प्रतिपादक ग्रन्थ नाट्यशास्त्र में अनेकों प्रसंगों में संगीत की चर्चा की गयी है. क्योंकि संगीत काव्य का उपकारक है। काव्य का ही अपर रूप नाट्य है। नाटक में सर्वप्रथम उपस्थापित किया जाने वाला पूर्वरंग संगीत के साथ ही प्रारम्भ की प्राचीन पद्धति है। नाटक के मध्य में संगीत अत्यावश्यक अंग बनकर रसपोष में सहायक सिद्ध होता है। अंक के प्रारम्भ और अन्त में गीतादि रहते ही है। महर्षि भरत द्वारा संगीत का नाट्य शास्त्र में बहुलता से वर्णन करना इसे नाट्य का अपरिहार्य अंग सिद्ध करता है। नाट्य में भाव तथा रस की परम अवस्था दर्शानी हो तो संगीत रस भाव के परम अवस्था के प्रदर्शन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। संगीत का सन्तुलित प्रयोग नाट्य में रसवत्ता प्रकाशन में अनन्य सहभागिता निभाता है। नाट्यशास्त्र का 28 वां अध्याय आतोद्य विधानाध्याय से प्रख्यात है। यह संगीत का विवरण देने वाला अध्याय है। संगीत ही नाट्य के अन्तर्गत रसभावादि की उद्रेकमयी अवस्था को उन्नत दशा तक ले जाने में सहयोगी बनता है। जिससे नाटक सफल होता है और उसका सौन्दर्य भी बना रहता है। जैसा कि कहा गया है–

हास्यश्रृंगारयोः कार्यौ स्वरौ मध्यमपंचमौ।
षड्जर्षभौ च कर्तव्यौ वीररौद्राद्भुतेष्थ।।[2]
गान्धारश्च निषादश्च कर्तव्यौ करूणे रसे।
धैवतश्च प्रयोक्तव्यो बीभत्से सभयानके।।[3]

श्रृंगार और हास्य रस में मध्यम व पंचम का प्रयोग करना चाहिये। षडज् और ऋषभ वीर व अदभुत् रस

के अनुकूल स्वर है। करूण रसानुकूल गान्धार व निषाद तथा धैवत बीभत्स व भयानक में प्रयोज्य है।

आधुनिक विद्नद्नर्ग ने भी काव्य में संगीत को अनिवार्य तत्व के रुप में स्वीकार किया तथा उसके औचित्यानुसार प्रयोग पर बल दिया है। काव्य में संगीत की अनिवार्यता को स्वीकरते हुये डॉ0 दीनदयालु गुप्त कहते है–

गायक कवि को अपने पदों को विशेष राग विशेष स्वरों से मण्डित करके उन्हें ताल में बाँधना होता है, ताल–बद्ध रूप प्रदान करना होता है। अतः संगीत के कलात्मक पक्ष के आग्रह के कारण शब्दों में लोच लाना तथा परिवर्तन करना अनिवार्य हो जाता है। स्वरों का स्थूल स्वरूप, स्वर संगीत, मुक्त स्वरों का निरूपण तथा उसकी स्थापना, किसी निश्चित स्वर से गीत के वाक्य का आरम्भ करके उसे रागात्मक वाक्य का रूप प्रदान करना।

इस प्रकार गीत के वाक्य को संगीतात्मक वाक्य का रूप प्रदान करते हुये एक एक भावात्मक कल्पना को पूरा करते जाना, ताल के आघात के साथ गीत के वाक्यों का सौष्ठव बैठाना तथा रागात्मक लम्बाई का ध्यान रखना, संगीत की इन कलात्मक विशेषताओं कर ध्यान रखने के कारण भ्रमर का भँवरा, माह का महियां आदि विभिन्न उच्चारण बन जाना स्वाभाविक है।[4]

निष्कर्ष :

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि काव्य और संगीत परस्पर एक दूसरे के पूरक है। काव्य का परम प्रयोजन रस निष्पत्ति है। संगीत उस रस निष्पत्ति में काव्य का महत्त्वपूर्ण सहायक अंग है।

सन्दर्भ :

1. भर्तृहरिशतकत्रयम्, चौखम्बा संस्कृत विद्याभवन, वाराणसी।
2. नाट्यशास्त्र, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।
3. नाट्यशास्त्र, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।
4. अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय, डॉ. दीनदयालगुप्त, भाग 2, पृ0 881

संगम Impact Factor : 7.834 Website : www.ginajournal.com ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 41–44
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

स्मृति का इतिहासलेखन : लोकगीत पद्धति के रूप में

डॉ. नेहा प्रधान
सहायक आचार्य
कैरियर पाइंट यूनिवर्सिटी, कोटा, राजस्थान।

भारतीय लोक संगीत की परंपरा बहुत प्राचीन है और इसकी जड़ें वैदिक काल तक जाती हैं। उस समय इन गीतों को "गाथा" कहा जाता था, जिसका आशय गीत या गायन से था। ये गाथाएँ वैदिक मंत्रों से अलग, साधारण लोकधुनों में गाई जाती थीं, जिससे आम जन उनसे सहज रूप से जुड़ सकें। समय के साथ यही गाथाएँ विकसित होकर आगे चलकर लोकगीतों और गाथागीतों के रूप में प्रचलित हो गईं और भारतीय लोक–संस्कृति का महत्वपूर्ण हिस्सा बन गईं। "जब इतिहास लिखे गए दस्तावेजों से पहले गाया जाता है, तब लोकगीत समाज की स्मृति बन जाते हैं।" इतिहास केवल राजाओं, युद्धों और तिथियों का क्रम नहीं है, बल्कि वह उन अनुभवों, पीड़ाओं, संघर्षों और आशाओं का जीवंत संग्रह है जिन्हें समाज पीढ़ी–दर–पीढ़ी संजोकर रखता है। इस सामूहिक अनुभव को सुरक्षित रखने में लोकगीत एक अत्यंत प्रभावशाली माध्यम रहे हैं। जब औपचारिक इतिहास लेखन आम जनजीवन से दूर था, तब लोकगीतों ने ऐतिहासिक घटनाओं को स्मृति के रूप में जीवित रखा।

लोकगीतों के माध्यम से समाज ने अकाल, युद्ध, विद्रोह, औपनिवेशिक शोषण, सामाजिक आंदोलनों और सांस्कृतिक परिवर्तनों को केवल याद ही नहीं किया, बल्कि उन्हें भावनात्मक अर्थ भी प्रदान किया। ये गीत किसी एक व्यक्ति की स्मृति नहीं होते, बल्कि सामूहिक स्मृति का प्रतिनिधित्व करते हैं, जहाँ इतिहास भावना, अनुभव और पहचान के साथ जुड़ जाता है। इस प्रकार लोकगीत इतिहास का वह अनौपचारिक लेकिन सशक्त स्रोत हैं, जो हमें यह समझने में सहायता करते हैं कि ऐतिहासिक घटनाएँ केवल घटित ही नहीं हुईं, बल्कि समाज द्वारा कैसे महसूस की गईं और कैसे याद रखी गईं। लोकगीतों के अध्ययन के माध्यम से हम इतिहास को केवल अभिलेखों में नहीं, बल्कि जनता की स्मृति और चेतना में घटित होते हुए देख सकते हैं। प्रसिद्ध ललित निबंधकार विद्यानिवास मिश्र ने अपनी कृति में इस भावपूर्ण लोकगीत 'मोरे राम के भीजै मुकुटवा लछिमन के पटुकवा, मोरी सीता के भीजै सेनुरवात राम घर लौटहिं।।' का प्रयोग इस प्रकार किया है जिसमें कौशल्या माता द्वारा जिस प्रकार अपने पुत्र के लिए चिंता व्यक्त की गई है।

उसी की अनुभूति को लेखक ने अपनी पुत्री सदृश्य मेहमान के लिए व्यक्त किया है। लोकगीत केवल सांस्कृतिक अभिव्यक्ति नहीं हैं, बल्कि वे समाज की ऐतिहासिक चेतना को स्वर देते हैं। इनमें घटनाएँ तिथियों के रूप में नहीं, बल्कि अनुभूतियों के रूप में सुरक्षित रहती हैं। किसी युद्ध की विजय या पराजय, किसी शासक

की क्रूरता या उदारता, अकाल की पीड़ा या विद्रोह की आग 'ये सब लोकगीतों में प्रतीक, रूपक और भावनात्मक भाषा के माध्यम से स्थान पाते हैं। यही कारण है कि लोकगीत इतिहास के औपचारिक स्रोतों से भिन्न होकर भी उन्हें समझने के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होते हैं। इसलिए कहा जाता है "जहाँ लिखित इतिहास मौन हो जाता है, वहाँ लोकगीत बोलने लगते हैं।"

भारत के विभिन्न राज्यों में लोकजीवन की भावनाओं को अभिव्यक्त करने वाले अनेक लोकगीत प्रचलित हैं। उत्तर प्रदेश में रसिया, होरी, सोहर और कजरी प्रमुख हैं, जबकि जम्मू–कश्मीर में भाखा, छकरी और लादिशाह प्रसिद्ध हैं। महाराष्ट्र में लावणी, ओवी और पोवाड़ा, उत्तराखंड में झोड़ा और थड्या, तथा अरुणाचल प्रदेश में जा–जिन–जा और बारयी गाए जाते हैं। गोवा में ओवी, मंडो और बनवरह, पंजाब में टप्पा, भांगड़ा और जुगनी, तथा पश्चिम बंगाल में बाउल, भटियाली और रवींद्र संगीत लोकप्रिय हैं। मध्य प्रदेश का आल्हा, असम का बिहु, तमिलनाडु के विल्लू पट्टू, कुम्मी पट्टू व अम्मानैवारी, कर्नाटक के भावगीते और जानपद गीते, गुजरात के डांडिया और गरबा, राजस्थान के पानीहारी, मांड और तीज, छत्तीसगढ़ की पंडवानी, केरल के भूत गीत, मणिपुर के साना लामोक व खोंगजोम पर्व, मिजोरम के सैकुति जाई, सिक्किम के घा–तो–कीटो, बिहार का सुकर के बियाह, झारखंड का डोमकाच, हिमाचल का लेमैन, ओडिशा का दस्काथिया और आंध्र प्रदेश की बुर्रा कथा– ये सभी लोकगीत भारत की सांस्कृतिक विविधता और लोक परंपराओं को जीवंत रूप में प्रस्तुत करते हैं।

भारतीय संदर्भ में, लोकगीतों ने सदियों तक उस इतिहास को सुरक्षित रखा है, जो शासकीय अभिलेखों में दर्ज नहीं हो सका। उदाहरणस्वरूप, राजस्थान और बुंदेलखंड के लोकगीत 19वीं शताब्दी के अकालों की स्मृति को आज भी जीवित रखते हैं। इन गीतों में सूखे खेत, भूख से बिलखते बच्चे, पलायन करते परिवार और शासन की उदासीनता का मार्मिक चित्रण मिलता है। ये गीत अकाल को केवल प्राकृतिक आपदा नहीं, बल्कि सामाजिक अन्याय के रूप में प्रस्तुत करते हैं। लोकगीतों की विशेषता यह है कि वे सत्ता के दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि सामान्यजन के अनुभवों से इतिहास को प्रस्तुत करते हैं। जहाँ राजकीय अभिलेख विजेताओं की कहानी कहते हैं, वहीं लोकगीत पराजित, उपेक्षित और हाशिए पर खड़े लोगों की स्मृति को जीवित रखते हैं। इस दृष्टि से लोकगीत इतिहास के "नीचे से लिखे गए" रूप (History from Below) का सशक्त उदाहरण हैं।

"लोकगीतों में इतिहास तर्क से नहीं, संवेदना से संरक्षित होता है।" लोकगीतों के माध्यम से ऐतिहासिक घटनाएँ केवल सूचनात्मक नहीं रहतीं, बल्कि वे सामूहिक भावना का हिस्सा बन जाती हैं। उदाहरणस्वरूप, 1857 के विद्रोह से जुड़े लोकगीत उत्तर भारत में आज भी गाए जाते हैं। रानी लक्ष्मीबाई पर रचे गए लोकगीत उनके शौर्य और बलिदान को केवल ऐतिहासिक तथ्य के रूप में नहीं, बल्कि नारी–वीरता और जनप्रतिरोध की सामूहिक स्मृति के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इनमें रानी को राजसत्ता की प्रतिनिधि नहीं, बल्कि जनता की रक्षक के रूप में देखा जाता है। इसी प्रकार, संथाल विद्रोह (1855–56) से जुड़े आदिवासी लोकगीत औपनिवेशिक शोषण, विस्थापन और संघर्ष की स्मृति को स्वर देते हैं। ये गीत उस इतिहास को सामने लाते हैं, जिसे मुख्यधारा के लिखित इतिहास में अक्सर सीमित स्थान मिला। औपनिवेशिक काल में किसानों और मजदूरों द्वारा गाए गए लोकगीत 'विशेषकर नील विद्रोह से जुड़े गीत' ब्रिटिश शासन की आर्थिक नीतियों, बेगार और अत्याचारों को उजागर करते हैं। इन गीतों में शोषण के विरुद्ध आक्रोश और प्रतिरोध की चेतना स्पष्ट दिखाई देती है।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान लोकगीत राजनीतिक चेतना के प्रसार का प्रभावी माध्यम बने। गांधीजी,

स्वदेशी आंदोलन, सत्याग्रह और असहयोग आंदोलन पर आधारित लोकगीतों ने राष्ट्रवाद को भावनात्मक आधार प्रदान किया। ये गीत निरक्षर जनसमूह तक स्वतंत्रता के विचारों को पहुँचाने में सहायक बने और बलिदान, त्याग तथा एकता की स्मृति को जनमानस में स्थायी रूप से स्थापित किया। ऐसा ही एक लोकगीत था नूरपुरी का 'ऐथों उड़ जा भोल्या पंछिया' जिसने किसानों को अंग्रेजों के शोषण के खिलाफ जाग्रत किया। इन गीतों में बार–बार दोहराव (repetition) स्मृति को स्थायित्व प्रदान करता है। दक्षिण के मराठी लोकगीत 'कार सागर प्रण तलमल्ता' भी इन्हीं में से एक है। पीढ़ी–दर–पीढ़ी गाए जाने वाले ये लोकगीत इतिहास को निरंतर पुनर्जीवित करते रहते हैं, जिससे अतीत वर्तमान का हिस्सा बन जाता है। यह प्रक्रिया सामूहिक स्मृति को सुदृढ़ करती है और समाज की ऐतिहासिक पहचान को आकार देती है।

"जो समाज अपने गीतों को भूल जाता है, वह अपने इतिहास से भी कटने लगता है।" लोकगीत सामूहिक स्मृति के साथ–साथ सामूहिक पहचान का भी निर्माण करते हैं। किसी क्षेत्र, जाति, समुदाय या वर्ग के लोकगीत उस समूह के ऐतिहासिक अनुभवों को साझा करते हैं और उन्हें एक सांस्कृतिक इकाई में बाँधते हैं। उदाहरणस्वरूप, भोजपुरी, मैथिली, राजस्थानी या आदिवासी लोकगीत अपने–अपने क्षेत्रीय इतिहास और संघर्षों को सामूहिक चेतना में संरक्षित रखते हैं। ऐसे ही एक लोकगीत की रचना उर्चिन ने की थी 'टोडी टोडी बच्चे रे तेरी ऐसी की तेसी' ने जनमानस में आजादी की भावना का शंखनाद किया। इस प्रकार लोकगीत केवल अतीत का स्मरण नहीं, बल्कि सामाजिक एकता और ऐतिहासिक निरंतरता का माध्यम बनते हैं। इतिहास के अध्ययन में लोकगीतों को शामिल करना हमें यह समझने में सहायता करता है कि इतिहास केवल सत्ता द्वारा रचित आख्यान नहीं है, बल्कि वह समाज की स्मृति में जीवित एक सतत प्रक्रिया है। लोकगीत इस प्रक्रिया के सबसे सशक्त वाहक हैं – जो इतिहास को गाकर, महसूस कराकर और याद रखकर आगे बढ़ाते हैं।

"लोकगीत इतिहास के स्रोत ही नहीं, इतिहास को देखने की एक पद्धति भी हैं।" इतिहासलेखन में परंपरागत रूप से राजकीय अभिलेखों, यात्रावृत्तांतों और औपचारिक दस्तावेजों को प्रमुख स्रोत माना गया है। किंतु इन स्रोतों की सबसे बड़ी सीमा यह है कि वे प्रायः सत्ता–केंद्रित दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करते हैं। ऐसे में लोकगीत इतिहासलेखन के लिए एक वैकल्पिक और पूरक पद्धति प्रस्तुत करते हैं, जो समाज के सामान्य जन की स्मृति, अनुभव और दृष्टि को इतिहास का हिस्सा बनाती है। लोकगीतों की पद्धतिगत उपयोगिता इस तथ्य में निहित है कि वे इतिहास को घटना के रूप में नहीं, अनुभव के रूप में दर्ज करते हैं। जहाँ लिखित इतिहास यह बताता है कि क्या हुआ, वहीं लोकगीत यह उजागर करते हैं कि उस घटना को समाज ने कैसे जिया और महसूस किया। इस प्रकार लोकगीत ऐतिहासिक घटनाओं के भावनात्मक, सामाजिक और नैतिक आयामों को समझने में सहायक होते हैं।

1. 'नीचे से इतिहास' (History from Below) की पद्धति :

लोकगीत इतिहासलेखन की उस पद्धति को सुदृढ़ करते हैं जिसे 'नीचे से इतिहास' कहा जाता है। ये गीत किसानों, श्रमिकों, स्त्रियों, आदिवासियों और अन्य हाशिए के समुदायों की आवाज को सामने लाते हैं। उदाहरणस्वरूप, अकाल, नील विद्रोह या संथाल विद्रोह से जुड़े लोकगीत यह स्पष्ट करते हैं कि इन घटनाओं का प्रभाव आम जनजीवन पर क्या पड़ा।

2. मौखिक परंपरा और दीर्घकालिक स्मृति :

लोकगीत मौखिक परंपरा का हिस्सा होते हैं और पीढ़ी–दर–पीढ़ी गाए जाते हैं। इस निरंतरता के कारण वे इतिहास की दीर्घकालिक स्मृति को सुरक्षित रखते हैं। इतिहासलेखन की पद्धति के रूप में लोकगीत यह समझने में सहायक हैं कि समाज किन घटनाओं को याद रखना चाहता है और किन्हें भूल जाना। इस चयन प्रक्रिया के माध्यम से सामूहिक चेतना और सामाजिक प्राथमिकताओं का अध्ययन संभव होता है। यद्यपि लोकगीत इतिहासलेखन के लिए अत्यंत उपयोगी हैं, फिर भी उनकी पद्धतिगत सीमाओं को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। लोकगीतों में अतिरंजन, प्रतीकीकरण और कालान्तर में परिवर्तन संभव है। इसलिए इतिहासकार के लिए आवश्यक है कि वह लोकगीतों का उपयोग अन्य स्रोतों के साथ तुलनात्मक विश्लेषण के माध्यम से करे।

संदर्भ-सूची :-

1. चौधरी, के. एन. (2009). इतिहास और संस्कृति. नई दिल्ली : ओरिएंट ब्लैकस्वान. (विशेषतः पृ. 112–130)
2. चक्रवर्ती, रणजीत (2011). इतिहासलेखन : सिद्धांत और व्यवहार. नई दिल्ली : पीयरसन इंडिया. (पृ. 85–102)
3. शर्मा, रामशरण (2001). भारतीय इतिहास की समस्याएँ. नई दिल्ली : ओरिएंट लॉन्गमैन. (पृ. 47–63)
4. पाणिग्रही, के. सी. (1992). लोकसंस्कृति और इतिहास. कटक : ग्रंथ निकेतन. (पृ. 21–45)
5. दुबे, एस. एन. (1998). परंपरा, लोक और इतिहास. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन. (पृ. 90–118)
6. वर्मा, हजारीप्रसाद (2006). लोकजीवन और साहित्य. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन. (पृ. 134–156)
7. पांडेय, ज्ञानेंद्र (2006). स्मृति, इतिहास और राष्ट्र. नई दिल्ली : स्थायी प्रकाशन. (पृ. 55–78)

संगम Impact Factor : 7.834 Website : www.ginajournal.com ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 45–49
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

भारतीय संगीत में संतों का योगदान

डॉ. निधि वर्मा
सहायक प्राध्यापक
नवीन शासकीय संगीत महाविद्यालय, दुर्ग (छत्तीसगढ़)

सार :

मराठी काव्य परंपरा का प्रारंभ संत काव्य से हुआ, जो ज्ञानदेव से तुकाराम तक विस्तृत वारकरी भक्ति धारा के साथ परिपक्वता को प्राप्त हुआ। नामदेव, एकनाथ और तुकाराम जैसे वारकरी संतों की काव्य परंपरा ने अन्य मराठी कवियों को प्रेरित किया। समर्थ रामदास ने भक्ति साहित्य के सार्वभौमिक दर्शन को व्यवस्थित रूप प्रदान किया। तेरहवीं से सत्रहवीं शताब्दी तक विस्तृत इस संतकाव्य धारा ने गहन, सशक्त और समृद्ध विचारधारा प्रस्तुत की, जिसमें भक्ति, उपासना और मानव कल्याण ही मूल सूत्र रहे।

संतकवियों ने बहुजन समाज को मोक्ष–सुलभ बनाने हेतु ईश्वर–मीमांसा को भक्ति–साधना का अभिन्न अंग बनाया। उनकी काव्य–रचना में सैद्धांतिक और व्यवहारिक दोनों आयाम समाहित थे। विविध संप्रदायों के प्रभुत्व के बावजूद वैमनस्य का अभाव था, किंतु साम्प्रदायिक निष्ठा के साथ–साथ समाज की व्यथा ने उन्हें काव्य–सृजन की ओर प्रेरित किया। प्रत्येक संत का जीवन जन–जीवन से अभिन्न हो गया था।

जातिवाद और वर्ण–व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन असंभव मानकर संतकवियों ने धार्मिक चिंतन को मानवतावादी आधार प्रदान किया। समाज की मानसिकता परिवर्तन के लिए उन्होंने कीर्तन, उपदेश और लोक परंपराओं को अपनाया। पंढरपुर वारी इस क्रांतिकारी प्रक्रिया का आधार बनी। संतों ने भक्ति के माध्यम से समाज के दुख–दर्द को अभिव्यक्त किया और प्रत्येक अपने समय की 'जननी' बनकर मातृ–करुणा से समाज को एकजुट करने का प्रयास किया।

अंधविश्वासों का खंडन कर मानवता की सर्वत्र वकालत करते हुए उन्होंने कीर्तन को सामाजिक जागरण का सशक्त माध्यम बनाया। 'नाचू कीर्तनाचे रंगी, ज्ञानदीप लावू जगी'[1] की भावना से संतकवि समाज के साथ समरस हो गए। कीर्तन का नृत्य अज्ञान की कालिख मिटाकर ज्ञान, चरित्र और सद्भाव का प्रकाश फैलाता है। इस प्रकार संतकाव्य ने न केवल धार्मिक चेतना को जागृत किया, बल्कि सामाजिक समरसता और मानवीय मूल्यों की स्थापना का भी प्रयास किया।

बीज शब्द : संत ज्ञानेश्वर, संत तुकाराम, संत एकनाथ, संत नामदेव, समर्थ रामदास।

मूल आलेख :

प्रत्येक युग के संतकवि अपने समाज के दर्पण और जागरणकर्ता बने। भावुक हृदय वाले इन संतों ने

ज्ञान और चेतना का संचार किया। पौराणिक कर्मकांडों के अतिरेक, रूढ़िवादिता, आर्थिक विपन्नता, प्राकृतिक आपदाओं और चक्रवर्ती आक्रमणों से त्रस्त समाज में संतकवियों ने पहचान और आत्मविश्वास जागृत करने की भूमिका निभाई। वे आध्यात्मिक साधक होते हुए भी कवि के रूप में सक्रिय रहे। 'बुडती हे जन, न देखवे डोळा'[2] – इस करुण हृदयस्पर्शी पंक्ति से संतकवि ने समाज की दयनीय दशा का चित्रण किया, जिसे पढ़कर पाठक नेत्र मिलाने से भी विमुख हो जाते हैं। उनका काव्य न केवल साहित्यिक सौंदर्य का वाहक है, बल्कि साधना का भी माध्यम है। यह काव्य सांस्कृतिक परिवेश में पल्लवित हुआ, जो समान रूप से आध्यात्मिक और सामाजिक दोनों आयामों को समाहित करता है।

सभी मराठी संतों ने ईश्वर प्राप्ति और मोक्ष को ही अपनी साधना का अंत माना है। उन्होंने मंगलत्व की प्राप्ति के लिए साधना की। आत्मज्ञान के पथ पर चलते हुए उन्होंने मुमुक्षु को अपना सहयात्री बनाकर मेल–मिलाप और लोक कल्याण की भावना से अनेक रचनाएँ कीं। संतों ने ब्रह्मांड के रहस्य, जीव जगत और ईश्वर के बीच संबंध का पता लगाया। साथ ही समाज की जनसंख्या पर भी विचार किया गया है और यह विचार जितना शाश्वत है उतना ही कालसापेक्ष भी है। उन्होंने स्वधर्म की रक्षा की भूमिका निभाई है। चूँकि पारलौकिक मोक्ष प्राप्त करने के लिए की जाने वाली साधना इसी सांसारिक जीवन में पूरी होगी, इसलिए सभी संतों ने नरदेह के बारे में कई कथन दिए हैं और इसके महत्व को समझाने की कोशिश की है। भक्ति की सहायता से व्यक्ति भौतिक संसार और निराकार कक्षाओं, संतों (ज्ञानदेवों) की भूमिका को जान सकता है।

इसके लिए 16वें अध्याय (ज्ञानेश्वरी) में दैवी सम्पदा और आसुरी सम्पदा का वर्णन देखना चाहिए। अथवा आपको दशबोध में उत्तमपुरुषलक्षण, मुर्खलक्षण के समास को देखना चाहिए। पसायदान के दर्शन को मूल्यों का समुच्चय माना जाना चाहिए। संत साहित्य द्वारा मानव जीवन की मूल्य प्रणाली, व्यक्तित्व विकास और एक सामंजस्यपूर्ण समाज का प्रतिपादन किया गया है। भले ही पंथ अलग–अलग थे, दर्शन अलग–अलग थे, लेकिन मानव कल्याण के एक ही लक्ष्य से प्रेरित होकर संत एकता के सूत्रधार बने। संतों ने सांस्कृतिक एकीकरण, लोक विधान की चाहत, मानवतावाद का पुरस्कार, लोक संग्रह, लोकसाहित्य लोक जीवन के प्रबंधन के लिए अपना जीवन बेच दिया। इसके लिए उन्हें कष्ट भी सहना पड़ा, लेकिन वे अपने लक्ष्य और उद्देश्यों से पीछे नहीं हटे। लोगों का मानस उनके निजी जीवन और कर्मों से गहन रूप से प्रभावित होता है। ज्ञानदेव, नामदेव, एकनाथ और तुकाराम जैसे संतों के जीवन और साहित्य की गहनता–असामान्यता का वर्णन शब्दों के परे है। उन्होंने व्यक्तिगत जीवन को ब्रह्मांडीय चेतना से जोड़ा। 'हे विश्वाची माझे घर' के माध्यम से ज्ञानदेव ने वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को साकार किया। 'दिसो परतत्त्व डोळा, पाहो सुखाचा सोहळा'[3] में उन्होंने समाज को आनंदमय दृष्टि प्रदान की।

मराठी साहित्य परंपरा भारतीय आध्यात्मिक चेतना का पवित्र प्रतीक है, जिसने शताब्दियों तक समाज का मार्गदर्शन किया। संतों ने भक्ति को सामाजिक एकीकरण का सूत्र बनाया। 'देह मंदिर आत्मा'[4] के सिद्धांत से उन्होंने देह–मन की समानता स्थापित की। नामस्मरण और नामभक्ति के माध्यम से विठोबा प्रत्येक बालक बन गए। आषाढ़ी–कार्तिकी वारी के पदन्यास ने समाज को अखंड भक्ति–सूत्र में बांध दिया।

संतकवियों ने प्रमाणित किया कि ईश्वर के समक्ष कोई श्रेष्ठ–निम्न नहीं। उनकी जीवनियाँ दर्शाती हैं कि सच्ची भक्ति ही सामाजिक कलह, जातिवाद और आर्थिक विपन्नता से मुक्ति का मार्ग है। 'आम्ही वारीकरी सेना

नाई, ऊस डोंगरपारी, कांदामुळाभाजी सावतामाळी'[5] –सभी वर्ण–वृत्ति के लोग विठ्ठल–भक्ति में समाहित हो गए। मुक्ताबाई, जनाबाई, सोयराबाई, निर्मला ने 'दलिता कंदिता तुज गायिन अनंत'[6] कहकर भक्ति को सर्वसमावेशी बनाया।

संतों ने लोकतांत्रिक जीवन–संस्कृति को साकार किया। भजन–कीर्तन, उपदेश और लोक परंपराओं को आत्मसात कर उन्होंने काव्य–सृजन किया। लोकगीत, त्योहार, ग्रामीण प्रथाओं को भक्तिमार्ग के माध्यम से प्रस्तुत कर सामाजिक जागरण का कार्य किया। व्यक्तिपरकता के बजाय समूह–निष्ठा को प्राथमिकता देकर वे समाज के साथ एकरूप हो गए। महाराष्ट्र का समाज भक्ति–सूत्र में एकजुट और संगठित हो गया।

संतकवियों ने ज्ञानदेव के आदर्शवाद, नामदेव के प्रचार–उपदेश, एकनाथ के समन्वयवादी दृष्टिकोण, पंडितकवियों की पौराणिक कथात्मकता, तुकाराम के विद्रोही स्वर और रामदास की वीरतापूर्ण चुनौती को आत्मसात कर तर्कसंगत नैतिक चिंतन का निर्माण किया। उनकी नैतिकता विवेक, चरित्र की अखंडता, ईश्वर–विश्वास और मानवताप्रेम पर आधारित थी। तुकाराम का काव्य भाषा को हथियार की तीक्ष्णता और फूल की कोमलता प्रदान करता है।

महाराष्ट्र के सांस्कृतिक निर्माण में संतकाव्य का योगदान अभूतपूर्व है। सदाचार, सद्भाव, अपरिग्रह, अहिंसा, करुणा, प्रेम, भक्ति, सत्यनिष्ठा, नम्रता, आत्मसंयम–इन मूल्यों का उद्घोष संतकाव्य का मूलमंत्र बना। अनासक्ति, विवेक, दया, क्षमा, शांति के संदेशों ने समाज को दिशा प्रदान की।

मध्यकालीन धार्मिक संतों का आत्मविश्वासपूर्ण और सौहार्दपूर्ण जीवन सामाजिक जागरण का प्रतीक है। गरीबी और सामाजिक विपन्नता से ग्रस्त लाखों लोगों के जीवन में भक्ति और आध्यात्मिकता का संचार संतों ने किया। संत प्रशस्ति, भक्त चरित्र, ईश्वरगुण–लीलावर्णन को कीर्तन के माध्यम से आदर्श उपदेश के रूप में प्रस्तुत किया गया। संतों का वैराग्यपूर्ण व्यक्तित्व उनकी वाणी को हल्कापन प्रदान करता था। उनका दृष्टिकोण ईमानदारी, परोपकारिता, उदारता, सहनशीलता और करुणा से परिपूर्ण था। इसीलिए हर युग का समाज उनका अनुसरण करता रहा और उनका साहित्य आस्था का प्रतीक बन गया।

रामदास के अनुसार, कवि युगधर्म का निर्माणकर्ता है। साहित्य और सामाजिक मामलों में उनकी भूमिका अभूतपूर्व है। 'कवि ब्रह्मांड रचने वाले देवता हैं' –इस दृष्टिकोण ने संतकाव्य को सांस्कृतिक उत्थान का सशक्त माध्यम बनाया। संतकवि केवल कवि नहीं, समाज के प्रहरी, नैतिक मार्गदर्शक और मानवतावादी चिंतक भी थे। संतसाहित्य ने एक बहुजन समाजोन्मुख धार्मिक मंदिर एवं भक्ति मंदिर की स्थापना की है। इसकी नींव तेरहवीं शताब्दी में रखी गई थी और इसका निर्माण सत्रहवीं शताब्दी में रामदास–तुकाराम ने करवाया था। संतकवि का लक्ष्य सभी को ज्ञान देना था और इसके लिए उन्होंने अपने काव्य की रचना की। इसकी व्यापकता एवं काव्यात्मकता का जनमानस पर विशेष प्रभाव पड़ा। मध्यकालीन मराठी संत कवियों की प्रतिभा भी ऋतंभरा की ही प्रतिभा थी। उनके शब्द विशकार का उच्चारण किया गया और उनकी बानी को सार्वभौमिकता प्राप्त हुई। स्वानुभूत वाणी को साहित्य का कला रूप प्राप्त हुआ। साहित्य का मानक मध्यकालीन संतों की कविता द्वारा प्रस्तुत किया गया था। मध्यकालीन मराठी साहित्य का स्वरूप समग्रता से जीवन की ओर उन्मुख और भक्ति चिंतन से ओत–प्रोत है।

महाराष्ट्र में रामभक्ति का प्रारंभिक संचार एकनाथ ने किया, जिसे समर्थ रामदास ने बाद में गतिमान

बनाया। भारूड के विविध रूपों के माध्यम से एकनाथ ने जनजागरण का कार्य किया। आसमानी–सुल्तानी संकटों से जूझते समाज में उन्होंने साहस और एकता का संचार किया। विदेशी आक्रमणों से त्रस्त समाज को भक्ति–सूत्र में पिरोकर एकजुट करने वाले एकनाथ को 'अनाथों का नाथ, लोकनाथ' कहा गया।

बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न संतों में तुकाराम कंठमणि के रूप में विख्यात हैं। साधारण मनुष्य से सिद्धयोगी तक की उनकी आध्यात्मिक यात्रा अभंगवाणी में साकार हुई। तुकाराम के अभंगों में भाषा और संस्कृति का अद्भुत सामंजस्य है। मराठी संतकाव्य की समृद्ध विरासत को उन्होंने सरल, अनगढ़ भाषा में प्रस्तुत किया। 'आम आदमी के सुख–दुख'[6] को उनकी कविता में जीवंत रूप मिला। तुकाराम का अभंग इसलिए निकटवर्ती लगता है क्योंकि यह सांस्कृतिक संघर्ष, अमानवीयता और शाश्वत समस्याओं का प्रतिबिंब है। ज्ञानदेव के आदर्शवाद, नामदेव के स्वप्नभोग और एकनाथ के समन्वयवाद के विपरीत, तुकाराम ने आत्मनिर्भरता को केंद्रीय स्थान दिया। प्रपंच और परमार्थ का उनका सामाजिक विश्लेषण उनकी सत्यनिष्ठा का प्रमाण है।

संतकवियों ने भक्ति को करुणा–मय भगवत् धर्म के साथ काव्यबद्ध किया। नामदेव और चोखामेळा का संपूर्ण परिवार काव्य–सृजन में संलग्न दिखता है। भारतीय संतकाव्य पर मराठी संतकविता, विशेषकर नामदेव की कविता का गहन प्रभाव पड़ा। इस परंपरा ने भक्ति को सामाजिक चेतना का सशक्त माध्यम बनाया।

वतन आमुची मिरास पंढरी। विठोबाचे घरी नांदणूक सेवा करु तेथे नित्या महाद्वारी। नामाच्या उजरी जागवती साधुसंता शरण जाऊ मनोभावे। प्रसाद स्वभावे देती घेती नामा म्हणे आम्ही पायरीचे चिरे। संत पाय हिरे देती वरु।।

संतों ने विठोबा कदम का हिस्सा बनकर खुद को धन्य माना है। तीर्थ विठ्ठल क्षेत्र विठ्ठल देव विठ्ठल देवपूजा विठ्ठल। सभी संतों के काव्य में भरा हुआ प्रतीत होता है। तुकारामशिष्य निलोबा ने कहा है कि विठोबा संतमंडियाली के प्रमुख हैं। विठोबा के बाद, भक्त मंडियाली को ज्ञानदेवों और उनके साहित्य से अत्यधिक प्रेम रहा है।

"विठ्ठल विठ्ठल गजरी। अवघी दुमदुमली पंढरी होतो नामाचा गजर।
दिंडया पताकांचा भारनिवृत्ति ज्ञानदेव सोपान।
अपार वैष्णव ते जाण हरिकीर्तनाची दाटी। तेथे चोखा घाली मिठी।"[7]

ऐसी भावना संत कवियों की है, कितने विनम्र भाव से भगवान में विलीन हो गए हैं।

एक अभंग में एकनाथ कहते हैं कि : **"जनार्दनी पूर्व पुण्य फळले। श्रीगुरुभेटले ज्ञानेश्वर?"**[8]

दत्तोपासना और भानुदास ज्ञानदेव से विठ्ठलोपासना समन्वय नाथों द्वारा किया गया था और उन्होंने जन तोची जनार्दन के रूप में समन्वय की भूमिका निभाई और रचना की थी। भारुड़ से गुमराह लोगों को एकजुट करने का उपदेश दिया। एकनाथ की कविता ज्ञानदेव–नामदेव और तुकाराम–रामदास के बीच एक मजबूत कड़ी है। नाथों ने भक्ति के माध्यम से सांस्कृतिक और धार्मिक परिवर्तन के महत्व को पहचाना और समाज के जनमानस बन गये। उन्होंने पैठण में उपदेश और कीर्तन के माध्यम से समाज को ज्ञानदेव की महानता और महत्व के बारे में आश्वस्त किया, जो भक्ति काव्य का एक अंश है। भागवत जैसी सैद्धांतिक अभंग जैसी व्यावहारिक रचनाएँ और लोक काव्य जैसी प्रायोगिक रचनाएँ नाथों द्वारा प्रभावी ढंग से की गई हैं और इसके संस्कार समाज मानस पर दिखाई देते हैं। एकनाथ ज्ञानदेव को माता का रूप देते हैं।

निष्कर्ष :

मराठी संतकाव्य का स्वरूप बहुआयामी और समृद्ध है, जो सांस्कृतिक परिवर्तन की गतिशीलता को स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित करता है। संतों की गहन ईश्वर–साधना ने काव्य का अमूर्त रूप धारण कर लिया, जिससे इसकी प्रकृति विविधतापूर्ण हो गई। मराठी संतकाव्य परंपरा न केवल साहित्यिक धरोहर है, बल्कि मराठी संस्कृति और अस्मिता का जीवंत प्रतीक भी है। यह स्मरणीय है कि संतों की रचनाएँ कविता के साथ–साथ पूजा का भी स्वरूप समेटे हैं। यह काव्य आध्यात्मिक अनुभूति और सामाजिक चेतना का अद्‌भुत संगम है।

संदर्भ सूची :

1. https://emarmik.com/3-7-shyamsundar-sonnar-lekh/
2. https://nasayeotikar.blogspot.com/2018/05/35.html
3. श्री ज्ञानेश्वरी ग्रंथ, अध्याय. 13, (1163)
4. अखंडध्याननाम, अध्याय 8. श्लोक–15
5. कांदा मुळा भाजी – संत सावतामाळी महाराज सार्थ अभंग – 1
6. https://www.apnimaati.com/2024/10/blog-post_20.html#
7. https://www.aathavanitli-gani.com/Song/Vitthal_Vitthal_Gajari
8. मराठी काव्य में संत की परंपरा डॉ. शोभणे।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 50–52
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

भारतीय संगीत में रस सिद्धांत का महत्व

सरला साहू
अतिथि व्याख्याता (गायन विभाग)
नवीन शासकीय संगीत महाविद्यालय, दुर्ग।

परिचय :

भारतीय संगीत विश्व की उन प्राचीन परंपराओं में से एक है, जिसने हजारों वर्षों की सांस्कृतिक यात्रा के दौरान निरंतर विकास करते हुए अपनी मौलिकता और आध्यात्मिकता को सुरक्षित रखा है। इसकी उत्पत्ति वैदिक काल में मानी जाती है, जहाँ सामवेद के मंत्रों का गेय स्वरूप भारतीय संगीत का प्रारंभिक आधार बना। वैदिक ऋचाओं में निहित स्वर–संरचना, छंद और भाव–संयोजन ने आगे चलकर राग–संगीत की नींव रखी। भारतीय दर्शन में "नाद–ब्रह्म" की अवधारणा यह स्पष्ट करती है कि ध्वनि ही सृष्टि का मूल तत्त्व है। जब यह ध्वनि स्वर, लय और ताल के माध्यम से संयोजित होती है, तब वह संगीत का रूप धारण करती है। किंतु भारतीय संगीत का उद्देश्य केवल श्रवण–सुख प्रदान करना नहीं है, इसका अंतिम लक्ष्य श्रोता के अंतःकरण में भावोत्पत्ति कर उसे आनंद की अनुभूति तक पहुँचाना है।

भारतीय सौंदर्यशास्त्र में इस आनंद को 'रस' कहा गया है। रस वह स्थिति है जहाँ कलाकार और श्रोता दोनों एक साझा भाव–जगत में प्रवेश करते हैं। इस सिद्धांत का व्यवस्थित प्रतिपादन भरतमुनि ने अपने ग्रंथ नाट्यशास्त्र में किया। उनके अनुसार विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से स्थायी भाव रस में परिणत होता है।

कश्मीर के महान दार्शनिक अभिनव गुप्त ने रस को 'आलोकीय आनंद' की संज्ञा देते हुए उसे आध्यात्मिक अनुभव के स्तर तक उठाया। उनके अनुसार रस की अनुभूति 'ब्रह्मानंद सहोदर' है, अर्थात् वह ब्रह्मानंद के समान है।

अतः यह स्पष्ट है कि भारतीय संगीत की आत्मा रस में निहित है।

रस सिद्धांत का दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक आधार :

भरतमुनि का प्रसिद्ध सूत्र –

"विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः"।

रस सिद्धांत का मूल है। विभाव वह कारण है जो भाव को जागृत करता है। अनुभाव वह बाह्य अभिव्यक्ति है जिससे भाव प्रकट होता है और संचारी भाव वे क्षणिक अवस्थाएँ हैं जो स्थायी भाव को पुष्ट करती हैं।

अभिनव गुप्त के अनुसार जब श्रोता अपनी व्यक्तिगत सीमाओं से ऊपर उठकर भाव में तल्लीन हो जाता

है, तब 'अहंकार' का लोप हो जाता है और रस की अनुभूति होती है। यह स्थिति मनोवैज्ञानिक दृष्टि से गहन एकाग्रता और भावनात्मक समर्पण की अवस्था है।

आधुनिक मनोविज्ञान भी स्वीकार करता है कि संगीत मस्तिष्क के भावनात्मक केंद्रों को सक्रिय करता है और आनंद की अनुभूति उत्पन्न करता है।

नव-रस और उनका विस्तृत विश्लेषण :

भारतीय परंपरा में नौ रस माने गए हैं—श्रृंगार, वीर, करुण, रौद्र, हास्य, भयानक, बीभत्स, अद्भुत और शांत।

श्रृंगार रस :

यह प्रेम, सौंदर्य और माधुर्य का प्रतीक है। ठुमरी, दादरा और ख्याल में इसका व्यापक प्रयोग मिलता है। कोमल स्वरों का प्रयोग इसकी अनुभूति को गहन बनाता है।

वीर रस :

साहस और पराक्रम का द्योतक। तेज लय, ऊँचे स्वर और दृढ़ प्रस्तुति इसके प्रमुख साधन हैं।

करुण रस :

शोक और संवेदना का भाव। विलंबित लय और कोमल स्वरों का प्रयोग इसे मार्मिक बनाता है।

शांत रस :

आध्यात्मिक संतुलन और वैराग्य का प्रतीक। ध्रुपद और भजन शैली में इसकी प्रधानता मिलती है।

अद्भुत रस :

विस्मय और आश्चर्य की अनुभूति। तानों और स्वर—विस्तार से यह प्रकट होता है।

अन्य रस नाट्य—संगीत और लोक—संगीत में अधिक स्पष्ट रूप से देखे जाते हैं।

राग और रस का गहन संबंध :

भारतीय संगीत में राग भाव—सृष्टि का केंद्र है।

- दरबारी कान्हड़ा : करुण और गाम्भीर्य।
- मालकौंस : आध्यात्मिकता।
- भूपाली : शांति।
- भैरव : श्रद्धा।
- यमन : माधुर्य।

रागों की समय—परंपरा भी रस से जुड़ी है। प्रातःकालीन राग गंभीर भाव उत्पन्न करते हैं, जबकि रात्रिकालीन राग श्रृंगार या करुण भाव जागृत करते हैं।

भक्ति आंदोलन और रस :

मध्यकालीन भक्ति आंदोलन ने संगीत को आध्यात्मिक अभिव्यक्ति का माध्यम बना दिया। भक्ति—रस के माध्यम से संगीत साधना और ईश्वर—भक्ति का साधन बना।

लोकसंगीत और रस :

लोकसंगीत में जीवन के प्रत्येक प्रसंग में रस की उपस्थिति मिलती है। विवाह गीतों में श्रृंगार, लोरियों

में वात्सल्य, वीर गाथाओं में वीर रस स्पष्ट होता है।

पाश्चात्य सौंदर्यशास्त्र से तुलना :

पाश्चात्य संगीत सिद्धांत में 'Emotion' या 'Aesthetic Pleasure' की चर्चा मिलती है, किंतु भारतीय रस सिद्धांत की तरह व्यवस्थित दार्शनिक संरचना वहाँ नहीं मिलती। भारतीय सिद्धांत अधिक समग्र और आध्यात्मिक है।

समकालीन संदर्भ :

आज भी फिल्म–संगीत और मंचीय प्रस्तुतियों में भावानुकूल धुन और राग का चयन किया जाता है। इससे स्पष्ट है कि रस सिद्धांत आज भी प्रासंगिक है।

विस्तृत निष्कर्ष :

भारतीय संगीत में रस सिद्धांत केवल सैद्धांतिक अवधारणा नहीं, बल्कि व्यावहारिक सत्य है। यह संगीत को ध्वनि से अनुभूति में परिवर्तित करता है।

रस के बिना संगीत निर्जीव है, रस ही उसे चेतना, गहराई और आध्यात्मिक ऊँचाई प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. भरतमुनि. नाट्यशास्त्र, पृ. सं. 112–145.
2. शारंगदेव. संगीत रत्नाकर, पृ. सं. 45–78.
3. वि. ना. भातखंडे. हिंदुस्तानी संगीत पद्धति, पृ. सं. 23–40.
4. ओमकारनाथ ठाकुर. संगीतांजलि, पृ. सं. 58–72.
5. डॉ. लक्ष्मी नारायण गर्ग. भारतीय संगीत का इतिहास, पृ. सं. 101–125.
6. अभिनव गुप्त. अभिनव भारती, पृ. सं. 210–238.
7. आचार्य विश्वनाथ. साहित्य दर्पण, पृ. सं. 89–105.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 53–55
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

कथक और तबला संगति (संगीत और नित्य)

सीमा ढींगरा, शोधार्थी,
प्रोफेसर वंदना चौबे, शोध निर्देशिका
मंच कला विभाग, वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान (भारत)

शोध सारांश :

भारतीय परंपरा में गायन वादन और नृत्य इन तीनों कलाओं के संयोग को ही संगीत कहा गया है। शुद्ध कथक नृत्य में तबला की लय ताल और नर्तक के पदचाप के बीच में उच्च्य स्तरीय कोशल तथा आपसी समझ जिससे मिलकर ही कलात्मक अनुभव को प्रस्तुत किया जाता है। संगीत का भव्य भवन टाल की सुद्रण आधार भूमि (नीव) पर टीका हुआ है, अर्थात् कथक नृत्य व तबला वादन एक दूसरे के पूरक है। एक उत्कृष्ट कोटि का तबलावादक साधारण नर्तकी के प्रदर्शन को भी प्रभावशाली बना देता है। यहाँ हम उन कतिपय बातों पर चर्चा करेंगे जिनकी जानकारी कथक नृत्य के संगति के लिए आवश्यक है।

मुख्य शब्द : नित्य, नर्तक, तबला, मंच, वादक, पदचाप, बोल, प्रदर्शन, ताल, लय, संगीत।

संगीत में ताल का जन्म प्राकृतिक रूप से हुआ है। आदिमानव ने कलकल निनादिनी नादियों में निर्झरों के शाश्वत प्रवाह में, क्रमिक सूर्योदय में ऋतुओ के नियमिक चक्र में जीवन के क्रमिक इन्ही संगीत तालों का अनुभव किया होगा और गति प्रमाण बन्न कर ताल बन संगीत में प्राण फूकने लगी।

तबला का उद्‌गम प्राचीन अवनद्ध वाद्यों के संदर्व में ज्ञात करने पर प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में त्रिपुष्कर से विघटित होकर यह दो हिस्से में बंट गया। एक हिस्से में द्वीपस्वर्मुखी आंकिक और उर्ध्वक व आलिग्या। उर्ध्वमुखी द्विपुष्कर जोड़ी ही आगे चलकर नए परिवेश में मध्यकालीन चित्रों में तबला जोड़ी के रूप में दिखाई पड़ता है। प्राचीन द्विपुष्कर व मध्यकालीन तबला जोड़ी दोनों का अंकन प्रायः नृत्य के साथ बजाते हुए दिखायी पड़ता है।

दिल्ली घराने के उस्ताद सिद्धार्थ खां के दो पौत्र वख्सा खां और भोध खां लखनऊ आए तब इनका सामना तत्कालीन दिग्गज पखवाजियो एवम कथक नृत्य शैली के प्रवीण कलकारों से हुआ। दिल्ली घराने के वादन में कोमलता एवम दो उँगलियों की वादन परंपरा थी जोकि कथक नित्यकारों द्वारा बोलो के साथ पग संचालन करके घुंघरू की झंकार और पैरों की थाप के साथ उत्तम प्रतीत नहीं होता था। अतः कथक नृत्यकारों के साथ तालमेल बैठाने की प्रक्रिया में इन लोगों को कथाकनित्यकारों के थाप के अनुरूप अपने तबले के बोलों में गूँज और खनक स्थापित करना पड़ा।

कथक शब्द का शाब्दिक अर्थ : कथा कहने वाला (कथ = कथा, क = कहो)

कथक की यह लोकोक्ति सर्वप्रचलित है – **"कथक का करे सो कथक कहावे"।**

कथक शब्द संस्कृत के कथा से निकला है जिसका अर्थ है कहानी। इस नृत्य का प्रारंभ प्राचीन मंदिरों में हुई थी और पौराणिक कथाओ को नृत्य और हाव भाव के द्वारा प्रस्तुत करते थे।

मुगल काल में कथक ने राज दरबारों में जगह बनायी, इसमें कुछ फारसी और मध्य एशियाई शैली भी सामिल हुई, यही कारण है कि कथक नृत्य के प्रदर्शन में पखावज की जगह धीरे–धीरे तबला वादन की संगति ने ले लिया।

कथक और तबला का अटूट संबंध है। नृत्य की संगत में सर्वप्रथम तबला वादक को नृत्य के बोलों का प्रचुर मात्रा में ज्ञान होना चाहिए। जहाँ तबला वादक नर्तक को लयबृद्ध (तीन ताल, झप ताल व अन्य किसी ताल) का ढाँचा प्रदान करता है और पैरो की जटिल चाल (तत्कार) के साथ मिलकर मंत्रमुग्ध कर देने वाला सामंजस्य बनाता है।

जिस प्रकार तबले के दस वर्ण होते है ठीक उसी प्रकार कथक नृत्य की अपनी वर्णमाला है जिनसे नृत्य के बोलों की रचना होती हैं

कथक नृत्य में तबला प्रमुख वाद्य यंत्र है जो नर्तक के तत्कार के टुकड़े की गति को दिशा प्रदान करता है, तत्कार के तीन वर्ण है : ता थेई ततं इससे बनने वाले बोल प्रायः निम्लिखित बोल के ही पलटे हैं ता थेई तत थेई आ थेई तत थेई थेईत थेईत थेईथेई थेई तत तत तां प्रायः तबले पर इस प्रकार से बजाया जाता है : ता धा कत धा ता धा कत धा धात धात धा धा धा कत कत धां

कथक नृत्य में नर्तक जब नृत्य के समय भूमि पर अपने पैर से आघात करता है या पटकता है तब तबला वादक अपने वादन से उन बोलों की निकासी दोहराते हुए करता है जिससे जुगलबंधी का रूप भी माना जाता है।

नटवरी टुकड़ो में तिग्धा दिगदिग बोलों की प्रधानता रहती है। जिससे तबले पर तत धा तिरकिट या कट धा तिरकित के रूप मे बजाया जाता है। कतिपय बोलों की निकासी में विशेष तकनीक का प्रयोग भी किया जाता है जैसे "कुकू के लिए पंचों उँगलियों को मिलाकर नाखून की कोर से स्वियाही पर आघात करना या 'थर्र' के लिए सिहाई पर आघात करना और उससे हथौड़ी से फलक से धीरे–धीरे दबाकर कंपन पैदा करना।

कवीत्त छंद प्रायः चतुरस् तीस्र या मिश्र जाती में ही रहते है जिन्हें कहरवा दादरा के ठेके के द्वारा भी बजाया जाता है। कथक नृत्य में सबसे महत्वपूर्ण अंग सम है जहाँ नर्तक एवम तबलावादक एक साथ ताल को पूरा करते है। समर्थ तबलावादक अपनी बुद्धि से वादन शैली के द्वारा कथक नृत्य की श्रृंगारिकता बढ़ाने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। तबला कथक नृत्य के संगत में जो लय निर्धारित करता है वह विलंबित, मध्य एवम द्रुत लय की गति में होता है। तबला के विभिन्न प्रकार की चालें, रेला, लयबाँट, नृत्य के संगत में यह सभी छोटी छोटी चीजें ही सर्वाधिक उपयोग होती है, इन्ही से नृत्य में भराव आता है। कथक नृत्य की संगत करने के लिए तबलावादक को विभिन्न प्रकार की लय कारियाँ, लय जाती वाली परन, तोड़ा टुकड़ो का मुख रूप से अच्छा ज्ञान और अभ्यास होना चाहिए। अतः तबलावादक के लिए यह बहुत आवश्यक है कि वह अधिक समय तक नित्यकारों की संगति में रहे तभी वह व्यावहारिक रूप से समझ पाएगा की नृत्यकार नृत्य में कहाँ क्या चाहता है और उसे कैसे अदा करे।

कथक नृत्य एक खुला नाच है "जिसमें पहले से ही कुछ बँधा हुआ या निर्धारित नहीं रहता मंच पर नर्तक अपनी प्रतिभा के बल पर नए नए लयकरो को संकल्पित कर प्रस्तुत करता जाता है। तबलावादक विभिन्न घराने जैसे जयपुर घराना, बनारस एवम लखनऊ घराने के बोलों के अनुरूप संगति करता है। कथक में लखनऊ तथा बनारस घराना पूरब बाज पीआर आधारित है।

इस प्रकार हम यह देख सकते है कि यह तालबृद्ध संगति है जो कथक नर्तक अपनी भावनाओ को पैरो की चाल को स्पष्ट रूप से दर्शकों तक पहुचने में तबला संगति का अहम् भूमिका होती है जोकि एक सफल नृत्य को मंच पर दर्शक के समक्ष सक्षम बनाता है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. आजाद पंडित तीरथराम (2015) कथक ज्ञानेश्वरी।
2. दधीच पुरु (2004) कथक नृत्य शिक्षा, इंदौर बिंदु प्रकाशन।
3. दधीच पुरु (2004) नृत्य निबंध, बिंदु प्रकाशन।
4. आजाद पंडित तीरथराम (2020) कथक दर्पण, नटेश्वर कला मंदिर।
5. गर्ग लक्ष्मीनारायण (2016) कथक नृत्य उत्तर प्रदेश संगीत कार्यालय, हाथरस।
6. शास्त्री बाबू लाल (2024) नाट्यशास्त्र चौकंभा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 56–59
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

संगीत शिक्षा और सामाजिककरण की प्रक्रिया

डॉ. स्नेहलता शर्मा
सहायक व्याख्याता, समाजशास्त्र,
राजकीय कन्या महाविद्यालय, रामपुरा कुन्हाड़ी कोटा, राजस्थान।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और उसका व्यक्तित्व समाज के निरंतर संपर्क और अंतःक्रिया के माध्यम से विकसित होता है। इस प्रक्रिया को समाजशास्त्र में सामाजिककरण कहा जाता है। सामाजिककरण केवल परिवार, विद्यालय या समाज के औपचारिक नियमों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक माध्यमों के द्वारा भी सम्पन्न होता है, जिनमें संगीत का विशेष स्थान है। संगीत न केवल मनोरंजन का साधन है, बल्कि यह मूल्यों, भावनाओं, परंपराओं और सामूहिक चेतना के संप्रेषण का सशक्त माध्यम भी है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री एमिल दुर्खीम के अनुसार, "शिक्षा समाज द्वारा व्यक्ति पर किया गया वह प्रभाव है जिसके माध्यम से वह सामाजिक जीवन के लिए तैयार होता है।" इस दृष्टि से संगीत शिक्षा को सामाजिककरण की एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया के रूप में देखा जा सकता है, क्योंकि यह व्यक्ति को सामाजिक मानदंडों, सांस्कृतिक प्रतीकों और सामूहिक पहचान से जोड़ती है। संगीत के माध्यम से व्यक्ति न केवल सौंदर्यबोध विकसित करता है, बल्कि अनुशासन, सहयोग, सहनशीलता और सामूहिकता जैसे सामाजिक मूल्यों को भी आत्मसात करता है। प्लेटो ने भी संगीत के सामाजिक महत्व को रेखांकित करते हुए कहा था कि "संगीत आत्मा को वह आकार देता है, जो समाज चाहता है।" यह कथन इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि संगीत शिक्षा व्यक्ति के व्यवहार, सोच और सामाजिक दृष्टिकोण को प्रभावित करती है।

समाजशास्त्र में सामाजिककरण को व्यक्ति के सामाजिक जीवन में प्रवेश की प्रक्रिया माना जाता है। इसके माध्यम से व्यक्ति समाज के नियमों, मूल्यों, विश्वासों और व्यवहार प्रतिमानों को सीखता है। चार्ल्स हॉर्टन कूले ने सामाजिककरण को "स्व का सामाजिक निर्माण" कहा, जबकि जॉर्ज हर्बर्ट मीड ने इसे प्रतीकात्मक अंतःक्रिया के माध्यम से विकसित होने वाली प्रक्रिया बताया। सामाजिककरण के बिना व्यक्ति सामाजिक जीवन में समायोजन नहीं कर सकता। यह प्रक्रिया जीवन भर चलती रहती है और विभिन्न चरणों में विभिन्न माध्यमों द्वारा प्रभावित होती है। संगीत शिक्षा इन्हीं माध्यमों में से एक है, जो व्यक्ति को समाज से जोड़ने का कार्य करती है।

संगीत : एक सामाजिक और सांस्कृतिक माध्यम :

संगीत केवल ध्वनियों का संयोजन नहीं है, बल्कि यह सामाजिक अनुभवों, भावनाओं और सांस्कृतिक अर्थों का प्रतीक है। प्रत्येक समाज का अपना संगीत होता है, जो उसकी सामाजिक संरचना, ऐतिहासिक अनुभवों और सांस्कृतिक मूल्यों को प्रतिबिंबित करता है। लोक संगीत, शास्त्रीय संगीत, धार्मिक संगीत या आधुनिक पॉप

संगीत सभी किसी न किसी रूप में सामाजिक यथार्थ से जुड़े होते हैं। संगीत के माध्यम से समाज अपनी परंपराओं, संघर्षों, विश्वासों और आकांक्षाओं को व्यक्त करता है। यही कारण है कि संगीत शिक्षा व्यक्ति को समाज की सांस्कृतिक चेतना से जोड़ने का कार्य करती है। संगीत शिक्षा का तात्पर्य केवल गायन या वादन की तकनीक सिखाने से नहीं है, बल्कि इसके अंतर्गत संगीत की समझ, अनुशासन, सौंदर्यबोध और सांस्कृतिक चेतना का विकास भी शामिल है। भारतीय परंपरा में गुरु–शिष्य परंपरा संगीत शिक्षा का प्रमुख आधार रही है, जिसमें केवल कला ही नहीं, बल्कि जीवन मूल्यों का भी हस्तांतरण होता है।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली में संगीत को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया गया है, जिससे बच्चों के सर्वांगीण विकास को प्रोत्साहन मिलता है। संगीत शिक्षा व्यक्ति को आत्म–अभिव्यक्ति का अवसर देती है और सामाजिक समरसता को बढ़ावा देती है। परिवार सामाजिककरण की प्रथम और सबसे महत्वपूर्ण संस्था है। परिवार में ही बच्चे का पहला परिचय संगीत से होता है 'लोरी, भजन, लोकगीत या धार्मिक गीतों के माध्यम से। ये संगीतात्मक अनुभव बच्चे के भावनात्मक विकास के साथ–साथ सामाजिक मूल्यों के बीजारोपण का कार्य करते हैं। परिवार के माध्यम से संगीत शिक्षा बच्चे में सांस्कृतिक पहचान का निर्माण करती है। उदाहरण के लिए, किसी लोक संगीत परंपरा से जुड़े परिवार में बच्चा उसी सांस्कृतिक धारा को आत्मसात करता है, जिससे उसकी सामाजिक पहचान सुदृढ़ होती है। विद्यालय सामाजिककरण की एक औपचारिक संस्था है, जहाँ संगीत शिक्षा संगठित रूप में प्रदान की जाती है। विद्यालयों में संगीत के माध्यम से अनुशासन, सहयोग, सामूहिक कार्य और नेतृत्व जैसे सामाजिक गुणों का विकास होता है। संगीत कार्यक्रम, सामूहिक गायन और सांस्कृतिक गतिविधियाँ छात्रों में सामाजिक सहभागिता को बढ़ाती हैं। इससे छात्रों में 'हम' की भावना विकसित होती है, जो सामाजिक एकता का आधार है।

संगीत शिक्षा व्यक्ति में नैतिक मूल्यों के विकास में भी सहायक होती है। संगीत के माध्यम से करुणा, सहानुभूति, शांति और सहिष्णुता जैसे गुणों का विकास होता है। प्लेटो ने कहा था, "संगीत आत्मा को वह आकार देता है, जो समाज चाहता है।" यह कथन इस बात को स्पष्ट करता है कि संगीत शिक्षा व्यक्ति के नैतिक और सामाजिक चरित्र को गढ़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। संगीत शिक्षा सामाजिककरण के माध्यम से सामूहिक पहचान के निर्माण में सहायक होती है। राष्ट्रीय गीत, देशभक्ति संगीत और धार्मिक भजन व्यक्ति को व्यापक सामाजिक समूह से जोड़ते हैं। जब व्यक्ति सामूहिक रूप से संगीत का अनुभव करता है, तो उसमें सामाजिक एकता और सामूहिक चेतना का विकास होता है। यह प्रक्रिया सामाजिककरण को और अधिक प्रभावशाली बनाती है।

युवा अवस्था सामाजिककरण का एक महत्वपूर्ण चरण है। इस अवस्था में संगीत युवाओं की सोच, जीवन शैली और पहचान को गहराई से प्रभावित करता है। आधुनिक संगीत, रैप, पॉप या फ्यूजन संगीत युवाओं को अपनी भावनाओं और विचारों को व्यक्त करने का मंच प्रदान करता है। संगीत शिक्षा युवाओं को सकारात्मक दिशा प्रदान कर सकती है, जिससे वे सामाजिक उत्तरदायित्व और रचनात्मकता को अपनाते हैं। डिजिटल तकनीक ने संगीत शिक्षा और सामाजिककरण की प्रक्रिया को नए आयाम दिए हैं। ऑनलाइन प्लेटफॉर्म, सोशल मीडिया और डिजिटल संगीत ने संगीत को वैश्विक बना दिया है। अब व्यक्ति विभिन्न संस्कृतियों के संगीत से परिचित हो रहा है, जिससे हाइब्रिड सामाजिक पहचान का निर्माण हो रहा है। यह प्रक्रिया सामाजिककरण को अधिक

व्यापक और जटिल बनाती है।

संगीत शिक्षा और सामाजिक समानता :

संगीत शिक्षा सामाजिक समानता और समावेशन को बढ़ावा देने का एक प्रभावशाली माध्यम बन सकती है, क्योंकि यह सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक सीमाओं को पार करने की क्षमता रखती है। संगीत एक ऐसी सार्वभौमिक भाषा है, जो जाति, वर्ग, लिंग, धर्म और क्षेत्रीय भेदों से ऊपर उठकर लोगों को आपस में जोड़ती है। जब विभिन्न सामाजिक वर्गों और समुदायों के लोग संगीत शिक्षा और सामूहिक संगीत गतिविधियों में भाग लेते हैं, तो उनके बीच आपसी समझ, सहिष्णुता और सहयोग की भावना विकसित होती है। इस प्रकार संगीत शिक्षा सामाजिक विभाजनों को कम करने और सामाजिक एकता को सुदृढ़ करने में सहायक सिद्ध होती है।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से संगीत शिक्षा को सामाजिक समावेशन का साधन माना जा सकता है, क्योंकि यह हाशिए के समुदायों 'जैसे दलित, आदिवासी और आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग' के लिए संगीत केवल मनोरंजन का साधन नहीं रहा, बल्कि यह अपने अनुभवों, संघर्षों और आकांक्षाओं को व्यक्त करने का माध्यम भी रहा है। विशेष रूप से दलित और जनजातीय आंदोलनों में संगीत ने सामाजिक चेतना जागृत करने और सामूहिक संघर्ष को संगठित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। दलित चेतना से जुड़े गीतों और भजनों ने सामाजिक अन्याय, भेदभाव और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने का कार्य किया है।

इसी प्रकार, जनजातीय समुदायों के पारंपरिक गीत और नृत्य उनकी ऐतिहासिक स्मृति, सामूहिक पहचान और सामाजिक एकजुटता को बनाए रखने का साधन रहे हैं। जब इन संगीत रूपों को शिक्षा के माध्यम से मान्यता और स्थान मिलता है, तो यह सामाजिक समानता की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम सिद्ध होता है। इसके अतिरिक्त, संगीत शिक्षा आत्मविश्वास और आत्मसम्मान के विकास में भी सहायक होती है। जब हाशिए के वर्गों के बच्चों को अपनी सांस्कृतिक अभिव्यक्ति को सीखने और प्रस्तुत करने का अवसर मिलता है, तो वे स्वयं को समाज का सक्रिय और मूल्यवान सदस्य अनुभव करते हैं। यह प्रक्रिया सामाजिक सशक्तिकरण (Social Empowerment) को बढ़ावा देती है और असमानताओं को चुनौती देती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि यदि संगीत शिक्षा को समावेशी, लोकतांत्रिक और संवेदनशील दृष्टिकोण के साथ लागू किया जाए, तो यह सामाजिक समानता के निर्माण का एक सशक्त साधन बन सकती है। यह न केवल समाज के विभिन्न वर्गों के बीच संवाद स्थापित करती है, बल्कि सामाजिक न्याय और सांस्कृतिक विविधता को भी प्रोत्साहित करती है।

सबसे महत्वपूर्ण आलोचना संगीत के बढ़ते व्यावसायीकरण से संबंधित है। आधुनिक पूँजीवादी समाज में संगीत एक सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के बजाय एक बाजार उत्पाद के रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा है। मनोरंजन उद्योग द्वारा निर्मित संगीत में सामाजिक सरोकारों, नैतिक मूल्यों और सांस्कृतिक गहराई के स्थान पर उपभोक्तावादी मानसिकता, त्वरित लोकप्रियता और लाभ को प्राथमिकता दी जाती है। इस प्रकार का संगीत युवाओं के सामाजिककरण को सतही बनाता है और उन्हें सामूहिक चेतना के बजाय व्यक्तिगत उपभोग और प्रदर्शन की संस्कृति की ओर उन्मुख करता है। परिणामस्वरूप संगीत शिक्षा का मूल उद्देश्य 'सांस्कृतिक और नैतिक विकास' कई बार पीछे छूट जाता है। दूसरी महत्वपूर्ण आलोचना सामाजिक असमानता से जुड़ी हुई है। संगीत शिक्षा तक पहुँच सभी सामाजिक वर्गों को समान रूप से उपलब्ध नहीं है। उच्च वर्ग और शहरी पृष्ठभूमि के बच्चों को औपचारिक संगीत शिक्षा, महंगे संस्थान और आधुनिक संसाधन आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं,

जबकि ग्रामीण, आर्थिक रूप से कमजोर और हाशिए के समुदायों के लिए संगीत शिक्षा सीमित रह जाती है। इससे संगीत शिक्षा सामाजिक समावेशन का माध्यम बनने के बजाय सामाजिक विभाजन को प्रतिबिंबित करने लगती है। पियरे बॉर्दियू के सांस्कृतिक पूँजी के सिद्धांत के अनुसार, ऐसी असमानताएँ सामाजिक संरचना को और अधिक स्थायी बना देती हैं।

इसके अतिरिक्त, कुछ आलोचक यह भी मानते हैं कि संगीत शिक्षा कभी–कभी प्रभावी संस्कृति (Dominant Culture) को बढ़ावा देती है, जिससे स्थानीय और लोक संगीत परंपराएँ हाशिए पर चली जाती हैं। औपचारिक शिक्षा संस्थानों में प्रायः चयनित शैलियों को ही 'श्रेष्ठ' माना जाता है, जिससे विविध सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों की उपेक्षा होती है। यह स्थिति सामाजिककरण की प्रक्रिया को एकांगी बना देती है और सांस्कृतिक विविधता को कमजोर करती है। अंततः यह कहा जा सकता है कि संगीत शिक्षा, यद्यपि सामाजिककरण का एक महत्वपूर्ण साधन है, फिर भी इसके आलोचनात्मक पक्षों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। आवश्यक है कि संगीत शिक्षा को केवल बाजार या विशेष वर्गों तक सीमित न रखकर उसे सामाजिक समानता, सांस्कृतिक विविधता और नैतिक मूल्यों के संरक्षण का माध्यम बनाया जाए। तभी संगीत शिक्षा सामाजिककरण की एक समावेशी और संतुलित प्रक्रिया के रूप में सार्थक सिद्ध हो सकेगी।

संदर्भ सूची :-

1. बोर्दियू, पियरे. (2004). सांस्कृतिक पूँजी और सामाजिक असमानता. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, पृ. 45–62।
2. दुर्खीम, एमिल. (2008). शिक्षा और समाज. (हिंदी अनुवाद). नई दिल्ली : रावत पब्लिकेशंस, पृ. 71–89।
3. फ्रेयर, पाउलो. (2010). उत्पीड़ितों की शिक्षा पद्धति. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, पृ. 101–118।
4. ग्राम्शी, एंटोनियो. (2015). संस्कृति, वर्चस्व और शिक्षा. नई दिल्ली : सेज हिंदी, पृ. 56–74।
5. कुमार, विवेक. (2016). दलित चेतना और सांस्कृतिक आंदोलन. नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 133–150।
6. मीड, जॉर्ज हर्बर्ट. (2009). मन, आत्म और समाज. (हिंदी अनुवाद). जयपुर : एटलांटिक पब्लिशर्स, पृ. 92–110।
7. मिश्रा, शिवकुमार. (2018). संगीत, संस्कृति और समाज. वाराणसी : चौखंबा प्रकाशन, पृ. 27–44।
8. शर्मा, रामअवतार. (2017). भारतीय समाज में शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन. नई दिल्ली : मैकग्रा–हिल इंडिया, पृ. 165–182।
9. सिंह, योगेन्द्र. (2012). आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन. नई दिल्ली : रावत पब्लिकेशंस, पृ. 201–220।

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 60-63
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

वैश्विक बाल–संगीत परंपराओं के संदर्भ में हिंदी नर्सरी राइम्स का संगीतात्मक अध्ययन

आर. आर. सौमियाश्री
शोधार्थी, उच्च शिक्षा एवं शोध संस्थान,
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास।

1. प्रस्तावना :

बाल–साहित्य का संगीतात्मक आयाम – विशेषकर नर्सरी राइम्स (बाल–गीत/बाल कविताएँ) – शिशु एवं पूर्व–बाल्यावस्था में भाषा, स्मृति, भावनात्मक सुरक्षा तथा सांस्कृतिक संलग्नता के निर्माण में केंद्रीय भूमिका निभाता है। विश्वभर में नर्सरी राइम्स अलग–अलग भाषायी ओर संगीतात्मक परंपराओं के अनुरूप विकसित हुए हैं, परन्तु भारत में हिंदी नर्सरी राइम्स की संगीतात्मक विशेषताएँ – लोक–तत्त्व, लयात्मकता, दोहराव और सांस्कृतिक संदेश – एक मिश्रित पहचान प्रस्तुत करती हैं जो स्थानीय तथा वैश्विक प्रवाहों (हॉकिंग/आधुनिक मीडिया) के साथ संवाद में रहती है। इस शोध–पत्र का उद्देश्य हिंदी नर्सरी राइम्स को वैश्विक बाल–संगीत परंपराओं के संदर्भ में संगीतात्मक दृष्टि से विश्लेषित कर, उनकी विशेषताओं, उपयोगिता तथा समकालीन परिवर्तन की विवेचना प्रस्तुत करना है।

2. शोध के उद्देश्य :

इस शोध का प्रमुख उद्देश्य हिंदी नर्सरी राइम्स की संगीतात्मक संरचना – लय, ताल, तुकबंदी तथा सरल स्वर–विन्यास – का सूक्ष्म विश्लेषण करते हुए उसे वैश्विक बाल–संगीत परंपराओं के संदर्भ में समझना है। इसके अंतर्गत यह अध्ययन यह स्पष्ट करने का प्रयास करता है कि किस प्रकार हिंदी नर्सरी राइम्स में निहित संगीतात्मक तत्त्व बाल–भाषा अर्जन, स्मृति–विकास और भावनात्मक संलग्नता को प्रभावित करते हैं तथा वे पाश्चात्य नर्सरी राइम्स से संरचनात्मक और सांस्कृतिक स्तर पर किस प्रकार समानता और भिन्नता प्रदर्शित करते हैं। साथ ही, शोध का उद्देश्य डिजिटल युग और वैश्वीकरण के प्रभाव में हिंदी नर्सरी राइम्स के संगीतात्मक रूपांतरण की पड़ताल करना है, ताकि यह देखा जा सके कि समकालीन माध्यमों में उनकी मौलिक सांस्कृतिक पहचान किस हद तक संरक्षित या परिवर्तित हो रही है।

3. शोध पद्धति :

यह शोध गुणात्मक–निमित (Qualitative-Descriptive) पद्धति पर आधारित है। प्राथमिक स्रोतों में NCERT के बाल–गीत संग्रह, लोकप्रिय हिंदी नर्सरी राइम्स के लिखित एवं ऑडियो संस्करण तथा यूट्यूब/डिजिटल

संकलन शामिल किए गए। द्वितीयक स्रोतों के रूप में अंतरराष्ट्रीय और भारतीय शोध–पत्र, भाषाविज्ञान एवं संगीतशास्त्र संबंधी ग्रंथ तथा मीडिया–अध्ययन के लेखों का संदर्भ लिया गया।

4. विश्लेषण : हिंदी नर्सरी राइम्स की संगीतात्मक विशेषताएँ :

हिंदी नर्सरी राइम्स की संगीतात्मकता केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि वह बाल–मन, भाषा और संस्कृति के निर्माण में सक्रिय भूमिका निभाती है। इनके भीतर निहित लय, तुक, ताल, ध्वन्यात्मक सौंदर्य और लोक–संगीतीय संकेत बच्चों की ग्रहणशीलता के अनुरूप रचे गए हैं। नीचे इस संगीतात्मक संरचना का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत है –

4.1. लय (Rhythm) और पुनरावृत्ति (Repetition) :

हिंदी नर्सरी राइम्स की सबसे प्रमुख विशेषता उनकी सरल, स्पष्ट और चक्रीय लय है। लय बच्चों के लिए स्मरण–सहायक होती है और सामूहिक गायन को सहज बनाती है।

''मछली जल की रानी है,
जीवन उसका पानी है।''

यहाँ दो पंक्तियों में समान मात्रात्मक प्रवाह और समान ध्वनि–संरचना है। "है" की पुनरावृत्ति लयात्मक स्थिरता उत्पन्न करती है। यह तालात्मक दोहराव बच्चों को बिना किसी औपचारिक प्रशिक्षण के गीतात्मक अनुभव देता है।

बाल–मनोविज्ञान के अनुसार, ऐसी पुनरावृत्ति बच्चे के श्रवण–स्मृति (Auditory Memory) को सुदृढ़ करती है और भाषा–अर्जन की प्रक्रिया को तेज करती है।

4.2. तुकबंदी (Rhyme) और ध्वन्यात्मक सौंदर्य :

तुकबंदी हिंदी नर्सरी राइम्स का केंद्रीय तत्व है। अंतिम शब्दों की ध्वनि–समानता बच्चों को शब्दों के बीच संबंध पहचानने में सहायता करती है।

''आलू कचालू बेटा कहाँ गए थे,
बैंगन की टोकरी में सो रहे थे।''

यहाँ "थे–थे" की तुक और आंतरिक ध्वनि–साम्य (क–ल–ट ध्वनियाँ) ध्वन्यात्मक खेल (Phonetic Play) रचती हैं। यह खेल बच्चों में भाषा के प्रति आनंद–बोध उत्पन्न करता है।

पाश्चात्य नर्सरी राइम्स (जैसे Twinkle Twinkle Little Star) की तरह ही, हिंदी राइम्स में भी तुकबंदी भाषिक संरचना को संगीतमय अनुभव में बदल देती है – परंतु हिंदी में यह अधिक लोकधर्मी और संवादात्मक होती है।

4.3. ताल (Tempo) और शारीरिक समन्वय :

हिंदी नर्सरी राइम्स में प्रयुक्त ताल प्रायः मध्यम होती है, जिससे बच्चों को हाथ–तालियाँ, उछलना, चलना जैसी क्रियाओं के साथ गाने का अवसर मिलता है।

''एक, दो, तीन,
टिप्पी टिप्पी ता।''

संख्याओं के साथ लयात्मक उच्चारण और ध्वन्यात्मक निरर्थकता ("टिप्पी टिप्पी ता") बच्चों में Motor

Coordination और ताल–समझ विकसित करती है।

यह विशेषता हिंदी राइम्स को केवल श्रवणात्मक नहीं, बल्कि शारीरिक–संगीतात्मक अनुभव बनाती है।

4.4. स्वर-सरलता और लोक-संगीतीय संकेत :

हिंदी नर्सरी राइम्स में जटिल रागात्मक संरचना नहीं होती, परंतु इनमें लोक–संगीत की सहज धुनें अंतर्निहित रहती हैं। ये धुनें सीमित स्वरों पर आधारित होती हैं, जिससे बच्चे आसानी से उन्हें दोहरा सकें।

"चंदा मामा दूर के,
पूए पकाए बूर के।"

इस गीत में लोरी–शैली की मृदु लय है, जो माँ–शिशु संबंध और भावनात्मक सुरक्षा का संकेत देती है। यह धुन लोकलोरियों से निकली हुई प्रतीत होती है, जहाँ संगीत का उद्देश्य सुलाना, शांत करना और स्नेह उत्पन्न करना होता है। वैश्विक संदर्भ में, जहाँ पाश्चात्य राइम्स अक्सर मेजर स्केल पर आधारित होती हैं, हिंदी राइम्स मोडल और लोक–आधारित स्वर–संरचना को प्राथमिकता देती हैं।

4.5. कथ्य, संगीत और सांस्कृतिक संकेत :

हिंदी नर्सरी राइम्स का संगीत उनके कथ्य से गहराई से जुड़ा होता है। पशु–पक्षी, परिवार, प्रकृति और दैनिक जीवन – ये सभी विषय संगीतात्मक लय के माध्यम से बच्चों के अनुभव का हिस्सा बनते हैं।

"नानी तेरी मोरनी को मोर ले गए,
बाकी जो बचा था काले चोर ले गए।"

यह गीत कथा, हास्य और संगीत – तीनों का समन्वय है। इसकी धुन में नाटकीय उतार–चढ़ाव है, जो बच्चों की कल्पनाशीलता को सक्रिय करता है। यह विशेषता हिंदी नर्सरी राइम्स को केवल गीत नहीं, बल्कि सांस्कृतिक आख्यान बना देती है।

4.6. संगीत और बाल-भावनात्मक विकास :

इन राइम्स की संगीतात्मकता बच्चों में आनंद, सुरक्षा और सहभागिता की भावना उत्पन्न करती है। सामूहिक गायन से सामाजिकता और व्यक्तिगत गायन से आत्म–अभिव्यक्ति को बल मिलता है।

हिंदी नर्सरी राइम्स की सरल धुनें बच्चे के अवचेतन में सकारात्मक भाव–संस्कार स्थापित करती हैं – जो आगे चलकर भाषा, साहित्य और संस्कृति के प्रति रुचि का आधार बनते हैं।

5. तुलनात्मक वैश्विक परिप्रेक्ष्य :

वैश्विक स्तर पर नर्सरी राइम्स के कुछ सार्वभौमिक गुण 'लय, तुकबंदी और सारांशात्मक कथ्य' प्रत्येक परंपरा में मिलते हैं, परन्तु सांस्कृतिक–विषयक अंतर गहन हैं। उदाहरणतः– पाश्चात्य राइम्स में कल्पनात्मकता, काल्पनिक पात्र और शिकायती–हास्य का प्रचलन अधिक दिखता है (जैसे "Humpty Dumpty", "Jack and Jill"), जबकि भारतीय हिंदी राइम्स में पारिवारिक, पशु–पक्षी और नैतिक अनुभव (आचार, विनय) से संबंधित सन्देश अधिक निर्निहित होते हैं। इसके अतिरिक्त, औपनिवेशिक–विरासत और वैश्विक मीडिया के चलते अंग्रेजी राइम्स का भारत में प्रभुत्व बढ़ा है जिसका प्रभाव स्थानीय सांस्कृतिक सामग्री के शिक्षण–चयन पर देखा गया है। इस सन्दर्भ में कुछ अध्ययनों ने अंग्रेजी राइम्स के बहुल्यकरण को सांस्कृतिक असतर्कता (Cultural Hegemony) से जोड़ा है।

6. **बाल-मनोविकास और शैक्षिक प्रभाव :**

नर्सरी राइम्स का संगीतात्मक रूप बच्चों के भाषिक कौशल, स्मृति, और सामाजिक–भावनात्मक विकास को प्रभावित करता है। संगीतयुक्त दोहराव (Repetition with Melody) शब्दावली–अर्जन (Vocabulary Acquisition) और ध्वन्यात्मक जागरूकता को बढ़ाता है। शैक्षिक अध्ययनों में यह पाया गया है कि कक्षा–कार्य में राइम्स का समावेश सीखने की गति व संलग्नता दोनों बढ़ाता है। हिंदी संदर्भ में पारंपरिक लोकीराएँ (Loris) और बाल–गीत मातृत्व–बन्धन (Mother-infant Bonding) में सहायक होती हैं तथा भावनात्मक सुरक्षा प्रदान करती हैं। अतः नर्सरी राइम्स केवल सृजनात्मक टेक्स्ट नहीं, बल्कि मानसिक तथा शारीरिक विकास के सक्रिय साधन हैं।

निष्कर्ष :

हिंदी नर्सरी राइम्स, अपने संगीतात्मक तत्व 'लय, तुक, ताल तथा सरल धुनों' के माध्यम से न केवल भाषा तथा स्मृति विकास में योगदान देते हैं, बल्कि सांस्कृतिक पहचान और भावनात्मक जुड़ाव का माध्यम भी हैं। वैश्विक परिप्रेक्ष्य में इन गीतों की तुलना से स्पष्ट होता है कि जबकि कुछ सार्वभौमिक–संगीतात्मक तत्त्व साझा हैं, सांस्कृतिक सामग्री और उद्देश्य में विविधता है। डिजिटल रोमांच और वैश्वीकरण ने पहुँच बढ़ाई है परन्तु संगीतात्मक एवं सांस्कृतिक विशिष्टता की रक्षा के लिए समुचित नीतियाँ और शैक्षिक दृष्टिकोण आवश्यक हैं। कुल मिलाकर, हिंदी नर्सरी राइम्स का अध्ययन न केवल साहित्यिक–म्यूजिकल विश्लेषण की दृष्टि से फलदायी है बल्कि शैक्षिक–नीतिगत निर्णयों के लिए भी उपयोगी निर्देश प्रदान करता है।

संदर्भ सूची :

- Oxford Bibliographies. "Nursery Rhymes".
- NCERT (National Council of Educational Research and Training). Baal Geet / Primary school rhyme collections (audio/print). (NCERT audiobooks, Baal Geet).
- Research article: "Learning through Rhymes in Early Childhood Education: A Cognitive Stylistics Approach" (ResearchGate, 2025).
- Study on cultural hegemony: "Western Cultural Hegemony and English Rhymes in Indian Schools" (ResearchGate, 2024).
- Additional background: Selected digital compilations of Hindi nursery rhymes (YouTube educational channels; comparative media examples).

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 64–66
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में संगीत विमर्श : संगीत और विज्ञान/गणित का अंतर्संबंध

तपन कुमार नाथ
बी.पी.ए. (तृतीय वर्ष)
नवीन शासकीय संगीत महाविद्यालय, दुर्ग (छत्तीसगढ़)

सार :

संगीत केवल एक कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि यह विज्ञान और गणित से गहराई से जुड़ा हुआ एक सुव्यवस्थित ज्ञानतंत्र है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक संगीत के स्वर, लय, ताल और संरचना को वैज्ञानिक एवं गणितीय सिद्धांतों के माध्यम से समझा गया है। यह शोधालेख वैश्विक परिप्रेक्ष्य में संगीत और विज्ञान/गणित के अंतर्संबंध का अध्ययन करता है। इसमें भारतीय एवं पाश्चात्य संगीत परंपराओं में प्रयुक्त गणितीय अनुपात, ध्वनि–विज्ञान, तरंग सिद्धांत, फ्रिक्वेंसी, ताल–प्रणाली तथा आधुनिक तकनीकी शोधों का विश्लेषण किया गया है। शोध का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि संगीत और विज्ञान/गणित एक–दूसरे के पूरक हैं तथा इनके समन्वय से संगीत शिक्षा, अनुसंधान और तकनीकी विकास को नई दिशा मिल सकती है।

मुख्य शब्द : संगीत, विज्ञान, गणित, ध्वनि–विज्ञान, स्वर, ताल, वैश्विक दृष्टिकोण।

1. परिचय :

संगीत मानव सभ्यता का अभिन्न अंग रहा है। विश्व की प्रत्येक संस्कृति में संगीत का कोई न कोई रूप विद्यमान है। यद्यपि संगीत को प्रायः भावनाओं और सौंदर्य से जोड़ा जाता है, किंतु इसके मूल में वैज्ञानिक और गणितीय सिद्धांत निहित हैं। ध्वनि की उत्पत्ति, उसकी ऊँचाई–नीचाई, तीव्रता, लय और ताल 'ये सभी वैज्ञानिक नियमों के अधीन होते हैं।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में देखें तो पाश्चात्य संगीत में स्केल, हार्मोनी और रिद्म की गणितीय संरचना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है, वहीं भारतीय शास्त्रीय संगीत में स्वर–व्यवस्था, श्रुति सिद्धांत और ताल–प्रणाली गहन गणितीय सोच का परिणाम है। इस प्रकार संगीत और विज्ञानध्गणित का संबंध केवल सैद्धांतिक नहीं बल्कि व्यावहारिक भी है।

2. संगीत और विज्ञान का संबंध

2.1 ध्वनि–विज्ञान :

ध्वनि–विज्ञान भौतिकी की वह शाखा है जो ध्वनि तरंगों के उत्पादन, संचरण और प्रभाव का अध्ययन

करती है। संगीत की प्रत्येक ध्वनि कंपन से उत्पन्न होती है। जब कोई तार, वायु स्तंभ या झिल्ली कंपन करती है, तो ध्वनि तरंगें उत्पन्न होती हैं।

भारतीय संगीत में तानपुरा की ध्वनि एक उत्कृष्ट उदाहरण है, जहाँ ओवरटोन और हार्मोनिक्स के सिद्धांत स्पष्ट रूप से अनुभव किए जा सकते हैं। पाश्चात्य संगीत में भी वायलिन, पियानो और फ्लूट जैसे वाद्ययंत्र ध्वनि–विज्ञान के नियमों पर आधारित हैं।

2.2 फ्रिक्वेंसी और स्वर :

प्रत्येक स्वर की अपनी एक निश्चित फ्रिक्वेंसी होती है। उदाहरण के लिए, पाश्चात्य संगीत में 'A' स्वर की मानक फ्रिक्वेंसी 440 Hz मानी जाती है। भारतीय संगीत में भी 'सा' की फ्रिक्वेंसी स्थिर आधार स्वर पर आधारित होती है, जो गायक की सुविधा के अनुसार तय की जाती है।

3. संगीत और गणित का संबंध

3.1 स्वर और गणितीय अनुपात :

प्राचीन यूनानी दार्शनिक पाइथागोरस ने यह सिद्ध किया कि स्वर गणितीय अनुपातों पर आधारित होते हैं। तार की लंबाई के अनुपात बदलने पर स्वर बदल जाता है। भारतीय संगीत में भी षड्ज (सा) से पंचम (i) का अनुपात लगभग 3 : 2 माना जाता है।

3.2 ताल और मात्राएँ :

ताल पूर्णतः गणितीय संरचना है। भारतीय संगीत में ताल की मात्राएँ, विभाजन (विभाग), ताली और खालीकृसभी एक निश्चित गणना पर आधारित होते हैं।

जैसे –

- दादरा ताल : 6 मात्राएँ।
- कहरवा ताल : 8 मात्राएँ।
- तीनताल : 16 मात्राएँ।

यह गणितीय अनुशासन संगीत को संतुलन और सौंदर्य प्रदान करता है।

4. वैश्विक परिप्रेक्ष्य में संगीत, विज्ञान और गणित :

पाश्चात्य संगीत में टेम्पर्ड स्केल, हार्मोनी, और पॉलीरिद्म जैसी अवधारणाएँ गणितीय सूत्रों से विकसित हुई हैं। आधुनिक कंप्यूटर संगीत, डिजिटल ऑडियो प्रोसेसिंग, और म्यूजिक सॉफ्टवेयर विज्ञान एवं गणित के बिना संभव नहीं हैं।

भारतीय संगीत में भी आज डिजिटल तानपुरा, ताल ऐप्स, और स्वर विश्लेषण सॉफ्टवेयर का उपयोग बढ़ रहा है, जो संगीत शिक्षा को अधिक वैज्ञानिक और सुलभ बना रहे हैं।

5. कार्यप्रणाली :

इस शोधालेख में गुणात्मक अनुसंधान पद्धति अपनाई गई है।

- **प्राथमिक स्रोत :** शास्त्रीय संगीत ग्रंथ, वैज्ञानिक लेख, संगीताचार्यों के विचार।
- **द्वितीयक स्रोत :** शोध–पत्रिकाएँ, ऑनलाइन जर्नल, संगीत एवं विज्ञान से संबंधित पुस्तकें।
- **तुलनात्मक अध्ययन :** भारतीय एवं पाश्चात्य संगीत परंपराओं का तुलनात्मक विश्लेषण।

6. उपसंहार :

अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि –

1. संगीत विज्ञान और गणित से गहराई से जुड़ा हुआ है।
2. स्वर और ताल गणितीय नियमों पर आधारित हैं।
3. आधुनिक तकनीक ने संगीत को अधिक वैज्ञानिक और वैश्विक बनाया है।
4. संगीत शिक्षा में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने से अधिगम अधिक प्रभावी हो सकता है।

आज के वैश्विक युग में संगीत केवल मंचीय कला नहीं रह गया है। यह थेरेपी, शिक्षा, तकनीक और अनुसंधान का महत्वपूर्ण क्षेत्र बन चुका है। संगीत चिकित्सा में ध्वनि तरंगों का वैज्ञानिक उपयोग इसका उदाहरण है। यदि संगीत शिक्षा में गणित और विज्ञान की समझ को समुचित रूप से जोड़ा जाए, तो विद्यार्थियों में तार्किक सोच और रचनात्मकता दोनों का विकास संभव है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि संगीत, विज्ञान और गणित परस्पर पूरक हैं। वैश्विक परिप्रेक्ष्य में इनका समन्वय न केवल संगीत की समझ को गहरा करता है, बल्कि शिक्षा और अनुसंधान के नए द्वार भी खोलता है। भविष्य में संगीत का विकास वैज्ञानिक और गणितीय आधारों पर और अधिक सुदृढ़ होगा।

7. संदर्भ :

1. शर्मा, पं. ओंकारनाथ : भारतीय संगीत का वैज्ञानिक अध्ययन।
2. दास, लक्ष्मीनारायण : संगीत और ध्वनि विज्ञान।
3. Pythagoras – On Music and Mathematics.
4. Rossing, T. D. – The Science of Sound.
5. Jairazbhoy, Nazir Ali – The Ragas of North Indian Music.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 67–70
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

नृत्य और संगीत का अविभाज्य संबंध

डॉ. संतोष कुमार पाठक, एसोसिएट प्रोफेसर
वेंकट चिन्ना राव, शोधार्थी
मंच कला विभाग, वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान।

सारांश :

भारतीय कला परंपरा में नृत्य और संगीत का संबंध अत्यंत घनिष्ठ एवं अविभाज्य माना जाता है। नृत्य जहाँ शारीरिक गतियों, भाव–भंगिमाओं और अभिनय के माध्यम से सौंदर्य एवं भावों की अभिव्यक्ति करता है, वहीं संगीत उसे लय, स्वर और ताल के माध्यम से भावनात्मक गहराई एवं आंतरिक संवेदन प्रदान करता है।

प्रस्तुत शोधपत्र नृत्य और संगीत के पारस्परिक संबंध, उनके ऐतिहासिक विकास, सैद्धांतिक आधार तथा व्यावहारिक प्रयोगों का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करता है। इस शोध में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि संगीत के बिना नृत्य अपनी पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकता तथा नृत्य के बिना संगीत की दृश्यात्मक अभिव्यक्ति सीमित रह जाती है।

अतः यह अध्ययन नृत्य और संगीत को एक समन्वित एवं परस्पर पूरक कला के रूप में स्थापित करने का प्रयास करता है।

मुख्य शब्द : नृत्य संगीत, ताल, लय, रस, अभिनय नृत्य भारतीय शास्त्रीय कला।

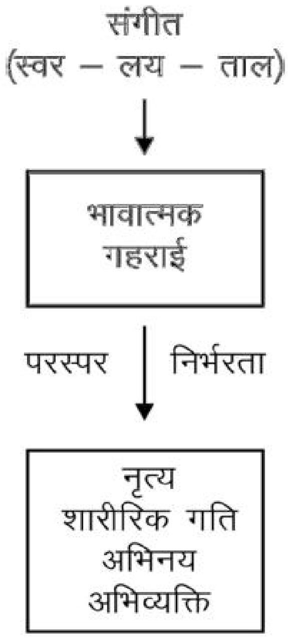

भूमिका :

योो नृत्यति प्रहष्टात्मा भावैरत्यन्वभक्तितः।
सं निर्दहति पापनि जन्मान्तर शतैरपिः।।

द्वारिका माहात्म्य में लिखा हैं कि जो प्रसन्न चित्त श्रद्धा और भक्ति पूर्वक, भावों सहित नृत्य करते हैं वे जन्म जन्मान्तरों के पापों से से मुक्त हो जाते हैं।[1]

भारतीय संस्कृति में कला को साधना और आध्यात्मिक अनुभूति का माध्यम माना गया हैं। नृत्य और संगीत, दोनों ही कलाएं मानव की सहान अभिव्यक्ति से उत्पन्न हुई हैं। अभिव्यक्तियों एक रसमय प्रदर्शन हैं यह एक सार्वभौमिक कला हैं, जिसका जन्म मानव जीवन के साथ हुआ। बालक जन्म लेते ही रोता अपने हाथ पैर मारकर अपने भावाभिव्यक्ति करता हैं कि वह भूखा हैं। इन्हीं आगिंक क्रियाओं से नृत्य की उत्पत्ति हुई हैं।

भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में नृत्य, संगीत और नाट्य को एक समग्र कला के रूप में स्वीकार किया गया हैं। इस संदर्भ में यह कहना समीचीन होगा कि नृत्य और संगीत का संबंध केवल सहायक नहीं, अपितु सह–अस्तित्व का हैं।

नृत्य कुला : नृत्य को शरीर की लयबद्ध गतियों के माध्यम से भावों की अभिव्यक्ति की कला कहा जा सकता है। नाट्यशास्त्र के अनुसार नृत्य के तीन प्रमुख अंग 'नृत, नृत्त और नृत्य' माने गए हैं, जो नृत्य की संरचना और अभिव्यक्ति को पूर्णता प्रदान करते हैं।

नृत में सामान्य गतियाँ निहित होती हैं, नृत्त में शुद्ध लय, ताल और अंग संचालन का प्रदर्शन प्रमुख होता है, जबकि नृत्य में भाव, अभिनय और कथा का समावेश होता है। नृत्य के इस रूप में नर्तक हस्तमुद्राओं, मुखाभिनय और विविध भावों के माध्यम से अर्थ तथा भावों की अभिव्यक्ति करता है। इस प्रकार इन तीनों अंगों का समन्वय ही नृत्य प्रस्तुति को पूर्णता प्रदान करता है।

इन सभी रूपों में संगीत की भूमिका अनिवार्य है, क्योंकि ताल और लय के बिना नृत्य की संरचना और उसकी प्रभावपूर्ण प्रस्तुति संभव नहीं है। अतः नृत्य और संगीत का संबंध परस्पर पूरक और अभिन्न है।

संगीत कला : संगीत स्वर, ताल और लय का समन्वित कला रूप है, जो ध्वनि के माध्यम से भावों और अनुभूतियों की अभिव्यक्ति करता है। भारतीय परंपरा में संगीत को केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि आध्यात्मिक साधना और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का महत्वपूर्ण माध्यम माना गया है।

भारतीय संगीत को मुख्यतः तीन भागों गायन, वादन और नृत्य में विभाजित किया गया है।

- गायन में स्वर और शब्द के माध्यम से भावों की अभिव्यक्ति होती है।
- वादन में विभिन्न वाद्य यंत्रों द्वारा लय और ध्वनि की संरचना प्रस्तुत की जाती है।
- नृत्य में संगीत की लय और ताल को शारीरिक गतियों तथा अभिनय के माध्यम से दृश्य रूप प्रदान किया जाता है।

इस प्रकार संगीत के ये तीनों अंग परस्पर जुड़े हुए हैं और एक–दूसरे की अभिव्यक्ति को पूर्णता प्रदान करते हैं। विशेषतः नृत्य में संगीत की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि स्वर, लय और ताल के बिना नृत्य की संरचना, सौंदर्य और प्रभावशीलता अधूरी रह जाती है।

वैदिक युग में नृत्य व संगीत : भारतीय परम्परानुसार वेद अपौरुषेय हैं। उनका प्रकटन मानव जाति के

जन्म के साथ हुआ हैं। विद्वानों के मतानुसार और भारतीय पुरातत्व विभाग की खुदाई के द्वारा प्राप्त मूर्तियाँ तथा शिलालेखों के अनुसार यह निश्चित एवं प्रमाणित हो चुका था कि भारतीय संगीत का जन्म ईसा से 1000 वर्ष पूर्व हो चुका था। भारतीय संगीत की नीव द्रविड़ों के संगीत पर आधारित हैं। द्रविड़ों को संगीत के वैज्ञानिक रूप का ज्ञान था। नृत्य का स्पष्ट उल्लेख वेदों में स्थान–स्थान पर का स्पष्ट प्राप्त होता हैं।[2]

रामायण काल में नृत्य एवं संगीत :

इस युग में समाज के अत्यंत उच्चवर्ग से लेकर निम्न वर्ग तक के लोग नृत्यादि कलाओं में न केवल रुचि रखते थे, अपितु उनमें नैपुण्यता प्राप्त करने का भी प्रयास करते रामायण काल में जब राजा ही संगीत के मर्मज्ञ थे तो फिर उनकी प्रजा क्यों न होगी । मनुष्य को सुसंस्कृत बनाने के लिए जिन विद्या, कलाओं की अनिवार्यतः शिक्षादी जाती थी उनमें संगीत व नृत्य भी था। स्वयं श्रीराम चन्द्र संगीत, वाद्य चित्र आदि कलाओं के ज्ञाता थे। लंकेश्वर रावण भी नृत्य–संगीत के साथ शिवजी की पूजा करते थे।[3]

रामायण काल में काव्य, गायन और वाद्य का समन्वय -- लव–कुश का दिव्य गान

चित्र – 1[4]

जैसे कि हमने पढ़ा वैदिक एवं रामायण काल से स्पष्ट होता हैं कि नृत्य का संगीत से गहन संबंध रहा हैं। महाभारत की कथा अनुसार देवराज इन्द्र की सभा में गीत, वाद्य और नृत्य से अर्जुन का स्वागत किया गया था, जिसमें गन्धर्वा ने तुम्बरु, मृदंग एवं वीणा जैसे वाद्यों को बजाकर गान किया था तथा धृताची, मेनका, रम्भा, ऊर्वशी आदि अप्सराओं ने भावपूर्ण नृत्य का प्रदर्षन किया था। नृत्य के साथ प्रायः गीत वाद्य का सहयोग अवश्य रहता था तथा लास्य इत्यादि नृत्यों में भाव प्रदर्शन का महत्वपूर्ण स्थान था। गायन वादन तथा पाठ्य के समान नृत्य के साथ ताल देने की प्रणाली थी। ताल के अंतर्गत पाणी ताल, शम्या, सम आदि विभिन्न अंगों का महाभारत में उल्लेख हुआ हैं –

पाणिताल सतालैश्व शम्यातालैः समैस्तथा।
संप्रहृटः प्रनृत्यद्भिः सर्वस्त्र निर्षव्यते।।

अर्थात् शिव की आराधना में नृत्य करने वाले नर्तकों के द्वारा ताल के विभिन्न अंगों का समुचित निर्वाह किया जाता था। जैसे हाथों से दिए जाने वाले ताल, शम्या (लकड़ी/छड़ी) से दिए जाने वाले ताल और अन्य सभी ताल जब समान लय में होते हैं, तब प्रसन्न होकर नृत्य करने वाले कलाकारों द्वारा वहाँ सम्पूर्ण प्रस्तुति (नृत्य) पूर्ण रूप से अभिव्यक्त हो जाती हैं।

निष्कर्ष :

नृत्य और संगीत का संबंध भारतीय कला परंपरा में अविभाज्य, शाश्वत तथा परस्पर आश्रित माना गया है। नृत्य, संगीत के बिना अपनी पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकता और संगीत भी नृत्य के दृश्यात्मक रूप के बिना अपनी अभिव्यक्तिगत सीमा में बंधा रहता है। संगीत स्वर, लय और ताल के माध्यम से नृत्य को भावात्मक गहराई और आंतरिक चेतना प्रदान करता है, जबकि नृत्य शारीरिक गतियों, मुद्राओं और अभिनय के माध्यम से संगीत को दृश्य रूप में मूर्त कर देता है। इस प्रकार दोनों कलाएँ एक–दूसरे की अभिव्यक्ति को विस्तार प्रदान करती हैं।

भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में यह संबंध केवल मंचीय प्रस्तुति तक सीमित नहीं है, बल्कि आध्यात्मिक साधना, धार्मिक अनुष्ठान, सामाजिक उत्सव और सांस्कृतिक जीवन की निरंतरता में भी इसका महत्वपूर्ण स्थान रहा है। नाट्यशास्त्र सहित अनेक प्राचीन ग्रंथों में नृत्य, गीत और वाद्य को एक समन्वित कला के रूप में वर्णित किया गया है, जो यह सिद्ध करता है कि भारतीय दृष्टिकोण में कला का स्वरूप सदैव समग्र और एकीकृत रहा है।

अतः यह निष्कर्ष स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया जा सकता है कि नृत्य और संगीत को पृथक इकाइयों के रूप में नहीं, बल्कि एक समन्वित एवं परस्पर पूरक कला के रूप में समझना ही इस शोध का मुख्य प्रतिपाद्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूचि :

1. गर्ग, लक्ष्मी नारायण. (2001). भरतनाट्यम भाग–1. उत्तर प्रदेश : संगीत कार्यालय, पृ. स.–2
2. दाधीच, पुरु (1998), कथक नृत्य शिक्षा. मध्यप्रदेश : बिन्दु प्रकाशन, पृ. स.–2□
3. दाधीच, पुरु (1998): कथक नृत्य शिक्षा. मध्यप्रदेश : बिन्दु प्रकाशन, पृ.स. –4
4. https://www.linkedin.com/posts/vikrampandit_ramayana-valmiki-activity-7312666167767179265-NrZx

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 71-75

Music and Religion: A Global Perspective on Sacred Sound and Spiritual Experience

Sri. Md. Aasif Hussain
Artistic Director Kala Sadhana and Faculty Department of Bharatanatyam Param for Music and Arts, Abu Dhabi UAE

Abstract :

Music and religion share a profound and ancient relationship rooted in humanity's earliest attempts to understand, experience, and communicate with the sacred. Across civilizations, sacred sound has functioned not merely as an artistic expression but as a spiritual force capable of invoking divine presence, structuring ritual practices, and transforming human consciousness. This paper examines the role of music within religious traditions from a global and comparative perspective, with particular emphasis on Indian philosophical thought and cross-cultural practices. Drawing examples from Hinduism, Buddhism, Christianity, Islam, Judaism, Sikhism, and Indigenous spiritual systems, the study explores how sacred sound mediates spiritual experience, reinforces communal identity, and transmits religious knowledge. Adopting an interdisciplinary approach that integrates musicology, religious studies, anthropology, and aesthetics, the paper argues that music operates as a universal spiritual language—transcending linguistic boundaries while remaining culturally specific. The study concludes that sacred sound is not merely reflective of religious ideology but is an active agent in generating devotion, transcendence, and spiritual realization, making music a foundational element of global religious life.

Keywords :

Sacred Sound, Music and Religion, Spiritual Experience, Nada Brahma, Ritual, Global Traditions

1. Introduction :

Music and religion are among the most enduring and universal dimensions of human civilization. Long before the development of written language, sound and rhythm were employed in rituals to

invoke divine forces, communicate with unseen realms, and establish sacred environments. Archaeological and anthropological evidence suggests that early religious practices relied heavily on chanting, drumming, and vocalization, indicating that music was one of humanity's earliest spiritual tools.

Religion seeks to transcend the material world and articulate experiences that lie beyond rational comprehension. Music, with its intangible yet emotionally powerful nature, becomes an ideal medium for such transcendence. Unlike spoken language, music communicates directly with human emotions and consciousness, enabling individuals to experience devotion, awe, surrender, and mystical union. As a result, sacred music has remained central to religious traditions across cultures.

In the Indian context, the relationship between music and spirituality is especially profound. Concepts such as Nada Brahma, which views sound as divine reality, position music not merely as an art form but as a metaphysical principle. Similarly, other world religions attribute sacred significance to sound through scriptural recitation, liturgical chant, and ritual music.

This paper examines music and religion from a global perspective, focusing on how sacred sound shapes spiritual experience and religious consciousness across diverse traditions.

2. Sacred Sound: Conceptual and Theoretical Perspectives :

Sacred sound refers to sonic expressions that are ritually sanctioned and symbolically charged within religious traditions. Unlike secular music, which is primarily evaluated on aesthetic or entertainment value, sacred sound is defined by its spiritual intention and transformative purpose. Its effectiveness is measured not by artistic virtuosity alone but by its capacity to invoke divine presence, purify consciousness, and facilitate spiritual communion.

Mircea Eliade's concept of hierophany helps explain how sacred sound transforms ordinary space into sacred space. For instance, the ringing of temple bells in Hindu worship or church bells in Christianity marks a transition from profane time to sacred time. Ethnomusicological studies further emphasize that sacred music must be understood within its ritual context. A Vedic chant or Qur'anic recitation loses much of its meaning when detached from its ceremonial function.

Sacred sound shapes spiritual experience by influencing physiological and psychological processes. Chanting regulates breathing, rhythmic repetition synchronizes bodily movement, and melodic contours evoke emotional states such as devotion, awe, or surrender. Silence also functions as sacred sound. In Zen Buddhism and Christian monastic traditions, silence is not the absence of sound but a spiritual condition that allows divine awareness to emerge. Thus, sacred sound operates

as a holistic spiritual mechanism integrating body, mind, and belief.

3. Sacred Sound in Indian Religious and Philosophical Traditions

3.1 Hinduism : Nada Brahma, Mantra, and Musical Sadhana :

Hindu philosophy offers one of the most sophisticated frameworks for understanding sound as sacred reality. The concept of Nada Brahma—"the universe is sound"—suggests that vibration is the fundamental principle underlying creation. According to this worldview, spiritual realization is achieved by aligning individual consciousness with cosmic sound.

The sacred syllable Om (AUM) exemplifies this belief. It is not merely a symbolic utterance but a vibrational formula believed to activate spiritual awareness. Chanting Om in yogic and meditative practices is said to harmonize the practitioner's inner rhythm with universal vibration.

The Samaveda institutionalized sacred music by codifying chants meant to be sung during ritual sacrifice. The precision of pitch (svara), rhythm (chandas), and articulation is considered crucial, as even minor deviations are believed to alter the mantra's spiritual potency. This reflects the belief that sound itself—not meaning alone—possesses divine power.

Indian classical music inherited this sacred orientation. Ragas such as Bhairav (associated with dawn and spiritual seriousness) or Yaman (linked with devotion and serenity) demonstrate how musical structure aligns with temporal and emotional spirituality. Devotional practices like bhajans and kirtans transform musical performance into collective worship, where emotional surrender (bhakti) becomes a pathway to divine connection.

3.2 Buddhism : Chant, Silence, and Meditative Sound (Expanded) :

In Buddhism, sacred sound functions primarily as a meditative and disciplinary tool. Chanting is not intended to express emotion but to cultivate awareness and compassion. The repetition of mantras such as Om Mani Padme Hum helps regulate breath and stabilize the mind, reducing attachment to ego and desire.

Tibetan Buddhist rituals employ a carefully structured sonic environment. Instruments such as the dorje bell symbolize wisdom, while drums represent method and compassion. Overtone chanting produces complex sonic textures believed to resonate with subtle levels of consciousness. These sounds assist practitioners in visualization practices and ritual meditation.

Equally significant is the role of silence. In Zen Buddhism, silent sitting (zazen) emphasizes direct experience beyond conceptual sound. Silence here becomes a spiritual soundscape, allowing insight (prajña) to arise naturally. Thus, Buddhism demonstrates a balance between sound and silence as complementary paths to enlightenment.

4. Sacred Music in Abrahamic Religious Traditions :

4.1 Christianity : Chant, Hymns, and Musical Worship (Expanded) :

Christian sacred music evolved as an extension of liturgical prayer. Gregorian chant, with its flowing melodic lines and absence of strong rhythm, was designed to enhance scriptural meditation rather than musical display. The chant's modal structure promotes calmness and introspection, aligning the worshipper's mind with prayerful devotion.

The Protestant Reformation expanded the role of congregational singing through hymns. Hymns enabled theological ideas to be memorized and internalized by the community. Composers such as Johann Sebastian Bach viewed music as an offering to God, famously inscribing his compositions with the phrase Soli Deo Gloria (To God alone be the glory).

Thus, Christian sacred music functions as theology in sound—educating, uniting, and spiritually elevating believers.

4.2 Islam : Recitation, Adhan, and Sufi Musical Mysticism (Expanded) :

Islamic spirituality is deeply rooted in sacred sound, particularly through the recitation of the Qur'an. Qur'anic recitation follows precise melodic frameworks (maqamat) that enhance emotional and spiritual receptivity while maintaining reverence for divine revelation. The beauty of recitation is believed to reflect the perfection of God's word.

The adhan, recited five times daily, sanctifies time and space, reminding the faithful of divine presence in everyday life. In contrast to orthodox reservations about music, Sufi traditions embrace musical practices such as Qawwali and Sama. These musical forms aim to inducewajd (spiritual ecstasy), leading to fana—the dissolution of the ego in divine love. Here, music becomes a direct experiential path to God.

4.3 Judaism and Sikhism : Sacred Memory and Musical Discipline (Expanded) :

Jewish sacred music emphasizes continuity and remembrance. Torah cantillation preserves scripture through melodic formulas that guide pronunciation and interpretation. These chants ensure that sacred texts remain living oral traditions rather than static written documents.

Sikhism integrates music directly into scripture. The Guru Granth Sahib is organized according to ragas, reinforcing disciplined musical worship. Gurmat Sangeet serves both devotional and educational purposes, conveying ethical teachings through sound. Music thus becomes a means of spiritual instruction and moral refinement.

5. Indigenous and Shamanic Musical Traditions (Expanded) :

Indigenous spiritual traditions demonstrate that music predates written religion. In African, Native American, and Eurasian cultures, drumming and chanting are central to rituals invoking ancestral spirits and natural forces. Repetitive rhythms induce trance states that allow shamans to communicate

with the spirit world and perform healing rituals.

In many cultures, religious specialists are identified as "singers," highlighting music's role as spiritual authority. These traditions emphasize participation, embodiment, and community, reinforcing music as a collective spiritual experience rather than individual performance.

6. Music as a Medium of Spiritual and Communal Experience (Expanded) :

Music evokes emotional states that transcend language, making it particularly effective in religious expression. Devotional singing often communicates faith more powerfully than spoken sermons. As scholars note, believers tend to remember theology through song more vividly than through doctrinal instruction.

Festivals, pilgrimages, and rituals rely on music to create shared emotional environments. Whether in temple processions, church services, or Sufi gatherings, music transforms religious belief into lived experience. Thus, music serves as a universal spiritual language capable of crossing cultural boundaries while preserving religious identity.

7. Globalization and Contemporary Transformations :

Globalization and digital media have transformed the circulation of sacred music. Devotional forms such as Indian bhajans, Gregorian chant, and Sufi qawwali now reach global audiences through recordings and online platforms. While concerns regarding commercialization persist, these developments also promote preservation, interfaith dialogue, and renewed spiritual engagement.

8. Conclusion :

Music and religion share a deep historical relationship that transcends culture, language, and time. Across religious traditions, sacred sound functions as a bridge between the human and the divine, transforming belief into lived spiritual experience. While musical forms and theological interpretations differ globally, the essential purpose of sacred music remains constant: to facilitate devotion, transcendence, and inner transformation.

This study affirms that music is not merely an accompaniment to religion but a fundamental spiritual discipline. As both a reflection and generator of spiritual consciousness, sacred sound remains central to religious life and scholarly inquiry.

References :

1. Berendt, J. E. (1991). The World Is Sound: Nada Brahma. Destiny Books.
2. Eliade, M. (1959). The Sacred and the Profane. Harcourt Brace.
3. Ghosh, D. (2010). Indian Music and Spiritual Traditions. Munshiram Manoharlal.
4. Hood, M. (1982). The Ethnomusicologist. Kent State University Press.
5. Rowell, L. (1992). Music and Musical Thought in Early India. University of Chicago Press.
6. Turner, V. (1969). The Ritual Process. Aldine Publishing.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 76-80
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Laya and Rhythm : The Dialogue between Nattuvangam and Movement in Bharatanatyam

Rajendra Kumar
Assistant Professor Bharatanatyam,
Naveen Shaskiya Sangeet Mahavidyalaya, Durg.

Abstract :

Bharatanatyam, one of India's oldest classical dance traditions, is deeply rooted in rhythmic awareness. At the centre of this rhythmic framework lies laya—the flow of time that governs both musical structure and bodily movement. Among the musical elements that support Bharatanatyam performance, nattuvangam holds a unique and authoritative role. Far from serving as mere accompaniment, it actively engages with the dancer's movements, shaping rhythm, structure, and expression. This paper explores the dialogic relationship between nattuvangam and movement in Bharatanatyam and argues that rhythm functions as an embodied and generative force. Drawing upon classical aesthetic theory, performance practice, and pedagogical traditions, the study examines how nattuvangam influences kinetic precision, tala awareness, expressive timing, and overall aesthetic experience. The findings underline the vital role of nattuvangam in cultivating embodied laya and in sustaining the rhythmic integrity of Bharatanatyam in both traditional and contemporary contexts.

Keywords : Tala, Movement, South India, Music.

Introduction :

In Indian classical performing arts, rhythm is understood not simply as a method of measuring time, but as a living principle that organises sound, movement, and emotional expression. Bharatanatyam, a classical dance form that emerged from South India's temple and court traditions, reflects this holistic understanding of rhythm through the seamless integration of music and movement. Rather than functioning as an external support, rhythm in Bharatanatyam is experienced as something deeply embodied—something that is heard, seen, and felt simultaneously.

Among the various musical components that accompany Bharatanatyam—vocal music, melodic

instruments, percussion, and cymbals—nattuvangam occupies a central and distinctive place. Traditionally performed by the nattuvanar, nattuvangam employs vocalised rhythmic syllables (solkattu) along with cymbal articulation to guide, accentuate, and converse with the dancer's movements. Through this interaction, rhythmic sound is transformed into visible kinetic form. The present study seeks to explore this dialogue between nattuvangam and movement and to understand its significance in shaping the rhythmic, pedagogical, and aesthetic dimensions of Bharatanatyam.

Conceptual Framework: Laya in Indian Aesthetic Thought :

The concept of laya occupies a foundational position in Indian music and dance theory. Derived from Sanskrit, the term signifies dissolution, continuity, and rhythmic absorption, suggesting an uninterrupted flow of time. Classical texts such as the Na?yasastra emphasise laya as essential for maintaining harmony between movement (a?gika), music (gita), and rhythm (tala). Without laya, these elements cannot function as a unified aesthetic whole.

In Bharatanatyam, laya operates through three principal tempos—vilambita (slow), madhyama (medium), and druta (fast). These tempos are not merely differences in speed; each carries distinct expressive and aesthetic qualities. Slow laya allows space for subtle abhinaya and internalised emotional expression, while faster tempos demand heightened rhythmic alertness and technical control. A dancer's mastery of laya is reflected in the ability to move effortlessly across these tempos while maintaining clarity, balance, and expressive coherence.

Nattuvangam : Structure, History, and Function :

Nattuvangam refers to the rhythmic system of vocal syllables and cymbal playing that accompanies Bharatanatyam performances. Historically, it developed within temple and court traditions closely associated with the devadasi system, where the nattuvanar played a crucial role in both training and performance. Traditionally, the nattuvanar functioned not only as a rhythmic accompanist but also as a teacher, conductor, and custodian of the dance tradition.

The solkattu used in nattuvangam consist of codified rhythmic units aligned with specific adavus, jatis, and teermanams. These syllables act as sonic representations of movement, enabling dancers to internalise rhythm through bodily experience. Unlike instrumental percussion, nattuvangam maintains a direct linguistic and pedagogical connection with movement, reinforcing rhythmic awareness from the earliest stages of training. This close relationship between sound and action forms the backbone of Bharatanatyam's rhythmic discipline.

Sound–Movement Dialogue in Bharatanatyam :

The relationship between nattuvangam and movement in Bharatanatyam operates as a dialogue rather than a rigid command structure. Rhythmic utterances may anticipate, accompany, or respond

to the dancer's movements, creating a continuous exchange between sound and action.

In n?tta passages, this dialogue is particularly explicit. Footwork aligns precisely with solkattu syllables, making rhythm visually perceptible through movement. The dancer's torso, arms, and spatial patterns further emphasise rhythmic accents, allowing the audience to experience rhythm kinetically. In abhinaya-oriented sections, the dialogue becomes more subtle. Although overt rhythmic markers recede, the timing of gestures, pauses, and transitions remains firmly anchored in laya. This demonstrates that rhythm continues to operate beneath expressive movement, shaping performance even in moments of apparent stillness.

Methodology :

The present study adopts a qualitative and analytical approach, drawing upon classical textual sources on Indian music and dance aesthetics, observations of Bharatanatyam training and performance practices, and pedagogical analysis of nattuvangam-based instruction. Rather than relying on empirical experimentation, the research employs interpretive analysis of established theoretical frameworks and performance conventions to identify recurring rhythmic mechanisms and to understand their functional implications within Bharatanatyam practice.

Results and Discussion :

The findings of this study clearly demonstrate that nattuvangam functions as an active rhythmic force that shapes and generates movement in Bharatanatyam, rather than serving as a passive musical background. The solkattu syllables articulated by the nattuvanar correspond directly to bodily actions such as foot strikes, directional changes, and rhythmic pauses. For example, in adavu patterns like tatta mettus or tei tattai tam, each syllable is matched with a specific kinetic action, enabling dancers to execute movement with precision and clarity. Through this close alignment, rhythm becomes visible, and nattuvangam emerges as a co-creator of movement meaning.

Further observations indicate that dancers who train extensively with live nattuvangam develop a deeper embodiment of laya. These dancers maintain rhythmic stability across tempo changes, moving confidently from vilambita to druta laya without losing compositional coherence. Even during moments of expressive stillness—such as sustained poses or emotionally charged pauses in abhinaya—the dancer's internal rhythmic awareness remains strong. This suggests that nattuvangam supports an internal experience of rhythm, allowing dancers to inhabit laya as a continuous flow rather than merely responding to external cues.

The study also highlights the role of nattuvangam in strengthening tala awareness and kinetic precision. Bharatanatyam compositions unfold within cyclical tala structures, and accurate alignment with these cycles is essential for effective performance. Through clear articulation of rhythmic

subdivisions, nattuvangam enables dancers to land precisely on key points such as sam and arudi, especially in complex sequences like teermanams and korvais. Dancers trained with nattuvangam consistently display confidence and rhythmic clarity, confirming its role in cultivating rhythmic intelligence rather than mechanical beat-following.

From a pedagogical standpoint, early exposure to nattuvangam proves vital in developing rhythmic autonomy and coordination. When adavus are taught alongside solkattu, auditory and kinesthetic learning reinforce one another. This integrated method strengthens memory, coordination, and rhythmic independence. Over time, dancers become capable of sustaining rhythm without constant external support. The guru–si?ya parampara further reinforces this process through repetition, observation, and embodied demonstration, ensuring that rhythmic knowledge is transmitted as lived experience.

The findings further reveal that rhythm continues to shape expressive movement in abhinaya-dominant sections. Although rhythmic articulation may appear less explicit, laya governs the timing of gestures, glances, and emotional transitions. A measured pause, a sustained look, or the gradual unfolding of a hand gesture is always rhythmically informed. This confirms that rasa realisation in Bharatanatyam is grounded in rhythmic discipline, and that emotional expression is inseparable from laya.

Finally, the study draws attention to contemporary challenges arising from increased dependence on recorded music. While recordings offer convenience, they reduce opportunities for spontaneous rhythmic dialogue between dancer and nattuvanar. Live nattuvangam allows for flexibility, adaptive timing, and responsive interaction, all of which contribute to the vitality of performance. The absence of this real-time exchange may lead to rigidity and diminished rhythmic sensitivity, underscoring the importance of preserving live nattuvangam practice in contemporary Bharatanatyam.

Conclusion :

This study demonstrates that the dialogue between nattuvangam and movement lies at the very heart of Bharatanatyam's rhythmic and aesthetic identity. Laya functions as an embodied principle through which sound and movement merge, transforming rhythm into a visible and experiential force. Nattuvangam emerges not as a subsidiary accompaniment but as the rhythmic intelligence that guides structure, pedagogy, and expression. Preserving this dialogic relationship is essential for maintaining the depth, authenticity, and philosophical coherence of Bharatanatyam as the form continues to evolve in modern performance contexts.

References :

1. Brown, K. (2007). Carnatic rhythms: Tala and the art of percussion. Oxford University Press.

2. Coomaraswamy, A. K. (1957). The dance of Siva: Essays on Indian art and culture. Dover Publications.
3. Meduri, A. (2004). Bharatanatyam as a global dance: Some issues in research, teaching, and practice. Dance Research Journal, 36(2), 11–29.
4. Na?yasastra of Bharata Muni. (1967). Trans. M. Ghosh. Asiatic Society.
5. O'Shea, J. (2007). At home in the world: Bharata Natyam on the global stage. Wesleyan University Press.
6. Soneji, D. (2012). Unfinished gestures: Devadasis, memory, and modernity in South India. University of Chicago Press.
7. Vatsyayan, K. (1996). Indian classical dance. Publications Division, Government of India.
8. Viswanathan, T., & Allen, M. (2004). Music in South India: The Karnatak concert tradition and beyond. Oxford University Press.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 81–88
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

वर्तमान दरकते सामाजिक रिश्ते और रामचरित के आदर्श

Crumbling Social Relationships in Contemporary Times and the Ideals of Ramcharit

सीना कुमारी, शोधकर्त्री
डॉ. अन्जु, शोध निर्देशिका एवं सह आचार्या,
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

सार (Abstract)

प्रस्तुत शोध पत्र समकालीन भारतीय समाज में सामाजिक रिश्तों के क्षरण और रामचरितमानस में प्रतिपादित आदर्शों के मध्य एक सेतु स्थापित करने का प्रयास है। आज के युग में पारिवारिक विघटन, सामाजिक अलगाव, वैवाहिक असंतोष, पीढ़ियों के मध्य बढ़ती खाई और मानवीय संवेदनशीलता का ह्रास गंभीर चिंता के विषय बने हुए हैं। इस शोध में यह विश्लेषण किया गया है कि गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित 'श्रीरामचरितमानस' के पात्र और उनके आपसी संबंध इन समस्याओं का समाधान किस प्रकार प्रस्तुत करते हैं। शोध में पाया गया है कि रामचरितमानस के आदर्श 'त्याग, प्रेम, संवाद, सम्मान, कर्तव्यनिष्ठा और धैर्य' दरकते सामाजिक रिश्तों को पुनर्जीवित करने में सक्षम हैं। यह ग्रंथ न केवल एक धार्मिक रचना है, अपितु एक सामाजिक मार्गदर्शिका भी है जो कालातीत मूल्यों के माध्यम से समकालीन सामाजिक संकटों का समाधान सुझाती है।

मुख्य शब्द : दरकते रिश्ते, सामाजिक विघटन, रामचरितमानस, सामाजिक आदर्श, पारिवारिक संकट, तुलसीदास, मूल्य–पुर्नस्थापना, समकालीन समाज।

Keywords : Crumbling Relationships, Social Disintegration, Ramcharitmanas, Social Ideals, Family Crisis, Tulsidas, Value Restoration, Contemporary Society.

1. प्रस्तावना :

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसका अस्तित्व संबंधों के ताने–बाने में बुना हुआ है। परिवार, पड़ोस, समाज कृ ये सब मनुष्य के जीवन के आधार–स्तंभ हैं। किंतु आज इक्कीसवीं सदी में जब विज्ञान और तकनीक ने अभूतपूर्व प्रगति की है, तब मानवीय रिश्ते और अधिक खोखले होते जा रहे हैं। संयुक्त परिवार टूट रहे हैं, पड़ोसियों से परिचय नहीं, बच्चे माता–पिता को वृद्धाश्रम भेज रहे हैं, भाई–भाई सम्पत्ति के लिए लड़ रहे हैं और विवाह–विच्छेद (तलाक) की दर दिनों–दिन बढ़ती जा रही है।

ऐसे संकटग्रस्त सामाजिक परिवेश में जब हम गोस्वामी तुलसीदास के 'श्रीरामचरितमानस' की ओर दृष्टि

डालते हैं, तो एक ऐसी दुनिया दिखती है जहाँ रिश्ते गहरे हैं, प्रेम निःस्वार्थ है और कर्तव्य–भावना अटूट है। राम और लक्ष्मण का भ्रातृ–प्रेम, भरत का त्याग, सीता का समर्पण, हनुमान की स्वामिभक्ति 'ये सब उन मूल्यों की अभिव्यक्ति हैं जो आज के दरकते रिश्तों को जोड़ने में सक्षम हैं।

तुलसी इस संसार में, भाँति भाँति के लोग। सबसे हिल-मिल चालिए, नदी नाव संजोग।।

प्रस्तुत शोध–पत्र इसी मूल प्रश्न का उत्तर खोजने का प्रयास है 'क्या रामचरितमानस के आदर्श आज की टूटती हुई सामाजिक संरचना को पुर्नस्थापित कर सकते हैं? इस शोध में पहले समकालीन सामाजिक रिश्तों की दशा का विश्लेषण किया जाएगा, फिर रामचरितमानस के उन आदर्शों की समीक्षा होगी जो इन समस्याओं का समाधान सुझाते हैं।

2. शोध-पृष्ठभूमि एवं साहित्य समीक्षा :

2.1 समकालीन सामाजिक विघटन : एक सिंहावलोकन :

समाजशास्त्रियों और मनोवैज्ञानिकों ने आधुनिक समाज में रिश्तों के टूटने को एक गहरे संकट के रूप में चिह्नित किया है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS) के आँकड़े बताते हैं कि भारत में संयुक्त परिवारों की संख्या में पिछले तीन दशकों में भारी गिरावट आई है। एक ओर शहरीकरण और औद्योगीकरण ने परिवार के सदस्यों को भौगोलिक रूप से अलग किया है, तो दूसरी ओर व्यक्तिवादी (Individualistic) जीवन–दृष्टि ने मानसिक और भावनात्मक दूरी बढ़ाई है।

सोशल मीडिया और डिजिटल क्रांति ने संवाद के नए माध्यम दिए हैं, किंतु वास्तविक भावनात्मक संवाद कम हुआ है। लोग सैकड़ों 'ऑनलाइन मित्रों' से जुड़े हैं, किंतु एकाकीपन (loneliness) की समस्या महामारी का रूप लेती जा रही है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने एकाकीपन को एक वैश्विक स्वास्थ्य संकट घोषित किया है।

2.2 रामचरितमानस : सामाजिक चेतना का महाकाव्य :

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने तुलसीदास को 'लोकनायक' कहा है। तुलसीदास ने रामचरितमानस की रचना ऐसे युग में की जब भारतीय समाज मुगल आक्रमण, सामाजिक विखंडन और धार्मिक भ्रम के दौर से गुजर रहा था। उन्होंने राम के माध्यम से एक ऐसे आदर्श समाज की कल्पना प्रस्तुत की जहाँ रिश्ते मजबूत हों, न्याय हो और मानवीय गरिमा सुरक्षित हो।

डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने लिखा है कि रामचरितमानस 'लोक–रंजन' और 'लोक–मंगल' दोनों का अद्वितीय संगम है। यह ग्रंथ केवल राम की कथा नहीं कहता, बल्कि यह समाज के हर वर्ग के लिए एक आचार–संहिता प्रस्तुत करता है।

2.3 पूर्ववर्ती शोध कार्य :

इस विषय पर पूर्व में अनेक शोध–कार्य हुए हैं। डॉ. रमेश चतुर्वेदी (2022) ने रामचरितमानस के सामाजिक सन्दर्भों का विश्लेषण किया। डॉ. सुनीता वर्मा (2021) ने आधुनिक परिवार और तुलसी के मूल्यों पर शोध प्रस्तुत किया। किंतु 'दरकते रिश्ते' और 'रामचरित के आदर्श' के मध्य सीधे संबंध की स्थापना पर केंद्रित शोध अपेक्षाकृत

कम हुआ है। प्रस्तुत शोध इस कमी को पूरा करने का प्रयास है।

3. शोध के उद्देश्य एवं पद्धति :

3.1 शोध उद्देश्य :

1. समकालीन सामाजिक रिश्तों के विघटन के कारणों और स्वरूप का विश्लेषण करना।
2. रामचरितमानस में वर्णित सामाजिक आदर्शों की पहचान और वर्गीकरण करना।
3. टूटते रिश्तों और रामचरित के आदर्शों के मध्य तुलनात्मक विश्लेषण करना।
4. रामचरितमानस के पात्रों से समकालीन सामाजिक समस्याओं का समाधान खोजना।
5. रामचरित के मूल्यों की 21वीं सदी में प्रासंगिकता सिद्ध करना।

3.2 शोध पद्धति :

यह शोध विवरणात्मक, विश्लेषणात्मक और तुलनात्मक – तीनों पद्धतियों का संयुक्त उपयोग करता है। रामचरितमानस के मूल पाठ से प्रमाण एकत्रित कर उनका समाजशास्त्रीय एवं मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है। समकालीन सामाजिक आँकड़ों और शोध–पत्रों का भी संदर्भ लिया गया है।

4. दरकते सामाजिक रिश्ते : समस्या का निदान :

4.1 संयुक्त परिवार का विघटन :

स्वतंत्रता–प्राप्ति के बाद से भारत में संयुक्त परिवार की संस्था निरंतर कमजोर होती जा रही है। 1951 में जहाँ भारत की 80 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या संयुक्त परिवारों में रहती थी, वहीं 2011 की जनगणना के अनुसार एकल परिवारों (Nuclear Families) की संख्या बहुसंख्यक हो गई है। इस परिवर्तन के पीछे रोजगार की तलाश में पलायन, नगरीकरण, शिक्षा का बदलता स्वरूप और पश्चिमी जीवन–दृष्टि का प्रभाव मुख्य कारण हैं।

संयुक्त परिवार के टूटने का सबसे बड़ा दुष्परिणाम वृद्धों की दशा में दिखता है। आज भारत में वृद्धाश्रमों की संख्या तेजी से बढ़ रही है। वे माता–पिता जिन्होंने संतान के लिए अपना सब कुछ न्योछावर किया, आज वे एकाकी और उपेक्षित जीवन जी रहे हैं।

जो पितु मातु कहुँ, सुत की आस। सोई पूत पित-सेवा बिनु, नरक निवास।।

4.2 दांपत्य संकट : बढ़ते तलाक :

भारत में विवाह–विच्छेद की दर पिछले दो दशकों में तीन गुनी हो गई है। राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय के एक अध्ययन के अनुसार महानगरों में प्रत्येक चार विवाहों में से एक तलाक में परिणत होता है। इसके मुख्य कारण हैं – संवाद का अभाव, पारस्परिक सम्मान की कमी, आर्थिक दबाव, व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं का टकराव और सोशल मीडिया का अतिरेक।

यह संकट न केवल दंपत्ति को, अपितु उनकी संतानों को भी गहराई से प्रभावित करता है। टूटे परिवारों के बच्चे मनोवैज्ञानिक असुरक्षा, व्यवहार–संबंधी समस्याओं और शैक्षणिक कठिनाइयों का सामना करते हैं।

4.3 भाई-बहनों के बीच बिखरते संबंध :

आर्थिक उदारीकरण के बाद भारतीय समाज में जहाँ एक ओर समृद्धि आई, वहीं दूसरी ओर संपत्ति–विवाद

के कारण भाई–भाई के रिश्ते छिन्न–भिन्न होने लगे। आज अदालतों में भाई–बहनों के बीच संपत्ति–विवाद के लाखों मामले लंबित हैं। वह भ्रातृत्व–भावना जो कभी भारतीय समाज की पहचान थी, आज दुर्लभ होती जा रही है।

4.4 पीढ़ियों के मध्य बढ़ती खाई (Generation Gap)

आज बुजुर्गों और युवाओं के बीच न केवल विचारों में, बल्कि जीवन–शैली, मूल्यों और संवाद के तरीकों में भी गहरी खाई बन गई है। माता–पिता और संतान के मध्य सार्थक संवाद घटता जा रहा है। संतान अपने माता–पिता की जीवन–दृष्टि को 'पुराना' मानती है और माता–पिता अपनी संतान के जीवन को समझ नहीं पाते।

4.5 सामाजिक एकाकीपन और भावनात्मक अलगाव :

आज का मनुष्य सैकड़ों लोगों से 'जुड़ा' है किंतु भीतर से अकेला है। सोशल मीडिया पर सक्रिय रहने के बावजूद वास्तविक मित्रता और आत्मीयता घट रही है। मनोवैज्ञानिक अध्ययन बताते हैं कि युवा पीढ़ी में अवसाद (Depression), चिंता (Anxiety) और आत्महत्या की प्रवृत्ति बढ़ रही है – जिसका एक प्रमुख कारण सामाजिक संबंधों का खोखलापन है।

5. रामचरित के आदर्श : समाधान की ओर

5.1 संवाद और संबंध : राम-परिवार से सीख :

रामचरितमानस का सबसे बड़ा सामाजिक संदेश है – संवाद। राम–परिवार के प्रत्येक सदस्य ने अपनी पीड़ा, अपनी खुशी और अपने निर्णय एक–दूसरे से साझा किए। जब राम को वनवास मिला, तब सीता ने खुलकर अपनी बात रखी – 'मैं भी साथ जाऊँगी।' यह संवाद का साहस है। आज के दांपत्य जीवन में सबसे बड़ी समस्या यही है कि पति–पत्नी आपस में बात नहीं करते।

सखा सोच त्यागहु बल मोरें। सब बिधि घटब काज मैं तोरें।।

राम और भरत के मिलन का प्रसंग संवाद का एक और श्रेष्ठ उदाहरण है। भरत अपनी माता के निर्णय से क्षुब्ध थे, उन्होंने यह पीड़ा राम से छुपाई नहीं। उन्होंने स्पष्ट रूप से अपनी विवशता और प्रेम दोनों व्यक्त किए। यही पारदर्शी संवाद रिश्तों को मजबूत बनाता है।

5.2 त्याग और समझौता : भरत का उदाहरण :

आज के समाज में रिश्ते इसलिए टूट रहे हैं क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति 'मेरी बात सही है' की जिद पर अड़ा है। समझौते और त्याग को कमजोरी माना जाता है। रामचरितमानस में भरत का चरित्र इस सोच को चुनौती देता है। भरत को राजसिंहासन मिला – जो किसी भी व्यक्ति का स्वप्न होता है। किंतु उन्होंने उसे ठुकरा दिया।

भरत के त्याग में कोई कमजोरी नहीं, बल्कि अद्वितीय नैतिक साहस है। उन्होंने अपने अहंकार को भाई के प्रेम और न्याय–भावना के समक्ष झुका दिया। यह आदर्श आज के उन भाइयों के लिए प्रासंगिक है जो संपत्ति के लिए एक–दूसरे से लड़ रहे हैं।

भाई सहोदर विनय सुनहु, जानि कृपाल कृपाल। सब बिधि मोहि बड़ि लाज, सेवकाई में उजागर।

5.3 वृद्धों का सम्मान : राम की पितृ-भक्ति :

राम ने पिता की आज्ञा को अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं से ऊपर रखा। यह केवल 'आज्ञाकारिता' नहीं थी

– यह वृद्धों के प्रति सम्मान और कृतज्ञता की भावना थी। राम जानते थे कि दशरथ की पीड़ा असीम है, किंतु उन्होंने पिता के वचन की रक्षा को सर्वोपरि माना।

आज जब वृद्धाश्रमों की संख्या बढ़ रही है और बुजुर्ग माता–पिता उपेक्षा का शिकार हो रहे हैं, तब राम का यह आदर्श एक करारा प्रश्न उठाता है – क्या वे माता–पिता जिन्होंने हमारे लिए सब कुछ न्योछावर किया, वे इस उपेक्षा के पात्र हैं? रामचरितमानस का स्पष्ट उत्तर है – नहीं।

5.4 दांपत्य जीवन में विश्वास : राम-सीता :

राम और सीता का संबंध दांपत्य जीवन के आदर्शों का सर्वोच्च उदाहरण है। उनके संबंध की नींव विश्वास, सम्मान और परस्पर समर्पण पर टिकी थी। सीता ने राम के साथ वन के कष्ट सहे यह उनकी विवशता नहीं, प्रेम का स्वैच्छिक चयन था।

आज के दांपत्य जीवन में सबसे बड़ी समस्या परस्पर विश्वास का अभाव है। सोशल मीडिया और डिजिटल युग में संदेह, ईर्ष्या और असुरक्षा की भावनाएँ विवाहित जीवन को नष्ट कर रही हैं। राम–सीता का उदाहरण यह सिखाता है कि सच्चा दांपत्य प्रेम विश्वास और सम्मान पर टिका होता है, संदेह और नियंत्रण पर नहीं।

सीय राम मय सब जग जानी। करउँ प्रणाम जोरि जुग पानी।।

5.5 मित्रता का आदर्श : राम-सुग्रीव, राम-विभीषण :

रामचरितमानस में मित्रता के दो महत्त्वपूर्ण उदाहरण हैं – राम और सुग्रीव की मित्रता तथा राम और विभीषण का संबंध। राम ने एक वानर–राज सुग्रीव से बिना किसी भेद–भाव के मित्रता की और कठिन समय में उसकी सहायता की। विभीषण ने अपने भाई का पक्ष छोड़कर धर्म का साथ दिया और राम ने उसे सम्मानपूर्वक स्वीकार किया।

आज की 'उपयोगितावादी मित्रता' (Utility-based Friendship) जहाँ लोग केवल स्वार्थ–सिद्धि के लिए मित्र बनते हैं, के विपरीत रामचरितमानस की मित्रता निःस्वार्थ, सहयोगी और दीर्घकालीन है।

5.6 सेवा और समर्पण : हनुमान का आदर्श :

रामचरितमानस में हनुमान का चरित्र सेवा और समर्पण का सर्वोच्च उदाहरण है। हनुमान ने राम की सेवा में अपनी समस्त शक्तियाँ अर्पित कर दीं। उनकी सेवा में कोई स्वार्थ नहीं था, कोई अपेक्षा नहीं थी। यह निःस्वार्थ सेवा–भाव आज के उपभोक्तावादी समाज में दुर्लभ हो गया है।

राम काज कीन्हें बिनु, मोहि कहाँ बिश्राम। कारन जनम जनकसुता, राम काज की जाम।।

हनुमान का चरित्र यह सिखाता है कि सच्चा संबंध वह है जिसमें हम दूसरे के लिए अपना सर्वस्व लगाने को तैयार हों। आज रिश्ते इसलिए कमजोर हैं क्योंकि हर व्यक्ति 'पहले मुझे क्या मिलेगा' की दृष्टि से सोचता है।

6. तुलनात्मक विश्लेषण : समस्या और समाधान :

6.1 दरकते रिश्ते बनाम रामचरित के आदर्श :

निम्नलिखित तालिका समकालीन सामाजिक समस्याओं और रामचरितमानस के संगत आदर्शों का

तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत करती है :

समकालीन समस्या	रामचरित का आदर्श	प्रासंगिक पात्र
वृद्ध माता–पिता की उपेक्षा	पितृ–भक्ति और मातृ–सेवा	राम, भरत, लक्ष्मण
भाई–भाई के संपत्ति–विवाद	निःस्वार्थ भ्रातृ–प्रेम	भरत, लक्ष्मण
दांपत्य जीवन में तलाक	परस्पर विश्वास और समर्पण	राम–सीता
सामाजिक एकाकीपन	मित्रता और सहयोग	राम–सुग्रीव
स्वार्थपरता और अहंकार	त्याग और विनम्रता	भरत, हनुमान
संवाद का अभाव	खुला और ईमानदार संवाद	राम–भरत मिलन
पीढ़ियों की खाई	गुरु–शिष्य सम्मान	राम–वशिष्ठ
सामाजिक भेद–भाव	समता और सम्मान	राम–निषाद, राम–शबरी

6.2 रामचरितमानस में सामाजिक समरसता :

रामचरितमानस केवल उच्च वर्ग के आदर्श नहीं प्रस्तुत करता। इसमें राम ने केवट (नाविक), निषाद राज, शबरी और वानरों से मित्रता की। शबरी के जूठे बेर खाने का प्रसंग सामाजिक भेद–भाव के विरुद्ध एक क्रांतिकारी उदाहरण है।

सबरी के बेर खाए राम ने, जात-पात न माने। जो जन मोहि मिलत दीनबंधु, तासों प्रीति सयाने।।

यह प्रसंग आज की जातिगत, वर्गीय और धार्मिक विद्वेष की समस्या का उत्तर देता है। राम का यह आचरण बताता है कि सच्चे प्रेम और सम्मान में जाति, वर्ण या सामाजिक स्थिति की कोई दीवार नहीं होती।

7. समकालीन परिवेश में अनुप्रयोग

7.1 परिवार परामर्श और रामचरित :

परिवार–परामर्श (Family Counseling) के क्षेत्र में रामचरितमानस के मूल्यों का उपयोग अत्यंत उपयोगी हो सकता है। जब दंपत्ति के बीच विवाद हो, तो राम–सीता के संबंध का उदाहरण 'जहाँ दोनों ने अत्यंत कठिन परिस्थितियों में भी एक–दूसरे का सम्मान बनाए रखा' प्रेरणादायक है।

जब भाई–बहनों के बीच विवाद हो, तो भरत के त्याग का उदाहरण उन्हें याद दिला सकता है कि रिश्ते संपत्ति से अधिक मूल्यवान हैं। जब वृद्ध माता–पिता उपेक्षित हों, तो राम की पितृ–भक्ति का उदाहरण संतान के मन में कर्तव्य–भाव जगा सकता है।

7.2 शिक्षा में रामचरित के आदर्श :

विद्यालयों और महाविद्यालयों के पाठ्यक्रम में रामचरितमानस के सामाजिक मूल्यों को सम्मिलित करने की आवश्यकता है। बच्चों को हनुमान, भरत और राम के चरित्रों से सेवा, त्याग और विनम्रता के पाठ पढ़ाए जाएँ। नैतिक शिक्षा (Value Education) की कक्षाओं में रामचरितमानस के प्रसंगों का उपयोग बच्चों में पारिवारिक और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित कर सकता है।

7.3 सोशल मीडिया और रामचरित :

आज सोशल मीडिया रिश्तों को तोड़ने का एक बड़ा माध्यम बन गया है। किंतु यही सोशल मीडिया रामचरितमानस के संदेश को प्रसारित करने का माध्यम भी बन सकता है। 'रामचरित की एक चौपाई प्रतिदिन'

जैसे अभियान सामाजिक चेतना जागृत करने में सहायक हो सकते हैं।

तुलसी संगत साधु की, हरै पाप अरू सोक। चित्त प्रसन्न होत है, दूरि होत है थोक।।

8. विमर्श

8.1 क्या रामचरित के आदर्श व्यावहारिक हैं?

यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि रामचरित के आदर्श आज के जटिल जीवन में व्यावहारिक रूप से कितने उपयोगी हैं। आलोचक कह सकते हैं कि राम और भरत का युग अलग था, आज की आर्थिक, सामाजिक और पारिवारिक परिस्थितियाँ भिन्न हैं।

किंतु यह आलोचना आधी सच है। रामचरितमानस कोई एक विशेष युग का दस्तावेज नहीं है 'यह मानवीय मूल्यों का शाश्वत कोश है। प्रेम, त्याग, सम्मान, संवाद और धैर्य – ये मूल्य किसी भी युग में, किसी भी समाज में प्रासंगिक हैं। आज भी जो परिवार इन मूल्यों को जीते हैं, वे सुखी और मजबूत हैं।

8.2 रामचरित और नारी–प्रश्न :

रामचरितमानस पर एक महत्त्वपूर्ण आलोचना यह है कि इसमें नारी की स्वायत्तता सीमित है। सीता की अग्नि–परीक्षा और वनवास का प्रसंग इस दृष्टि से विवादास्पद है। यह आलोचना पूरी तरह अनुचित नहीं है। किंतु इसी ग्रंथ में सीता का अत्यंत सशक्त व्यक्तित्व भी दिखता है। उन्होंने रावण के समक्ष कभी समर्पण नहीं किया, वे धैर्य और साहस की मूर्ति थीं। कौशल्या, सुमित्रा और मंदोदरी के पात्र भी नारी की विविध शक्तियों को व्यक्त करते हैं। अतः ग्रंथ का समग्र पाठ आवश्यक है।

9. निष्कर्ष :

प्रस्तुत शोध के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि समकालीन भारतीय समाज में सामाजिक रिश्तों का जो क्षरण हो रहा है, उसके मूल में प्रेम, त्याग, संवाद और सम्मान जैसे मूल्यों का ह्रास है। और ये वही मूल्य हैं जिन्हें गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में अत्यंत सजीव और मार्मिक रूप में प्रस्तुत किया है।

दरकते रिश्तों की समस्या के समाधान में रामचरितमानस एक अद्वितीय भूमिका निभा सकता है। राम की पितृ–भक्ति वृद्धों के प्रति उत्तरदायित्व जगा सकती है। भरत का त्याग भाई–बहनों के बीच संपत्ति–विवाद सुलझाने की प्रेरणा दे सकता है। राम–सीता का दांपत्य आदर्श विवाहित जीवन को मजबूत बना सकता है। हनुमान की निःस्वार्थ सेवा सामाजिक संबंधों में गहराई ला सकती है।

रामचरितमानस का यह संदेश 'कि रिश्ते स्वार्थ से नहीं, प्रेम और कर्तव्य से बनते हैं' आज के उपभोक्तावादी समाज में एक क्रांतिकारी विचार है। इस ग्रंथ को पुनः पढ़ने, समझने और जीवन में उतारने की आवश्यकता है।

अंत में, तुलसीदास के इस महाकाव्य से यही संदेश मिलता है कि रिश्तों की मजबूती बाहरी परिस्थितियों पर नहीं, भीतरी मूल्यों पर निर्भर करती है। जब तक मनुष्य के भीतर प्रेम, त्याग और सम्मान की भावना जीवित है, तब तक रिश्ते नहीं टूट सकते।

जहाँ सुमति तहाँ संपत्ति नाना। जहाँ कुमति तहाँ बिपति निदाना।।

10. संदर्भ सूची (References)

10.1 प्राथमिक स्रोत :

1. तुलसीदास (सं. 2020). श्रीरामचरितमानस (सटीक). गीताप्रेस, गोरखपुर।
2. वाल्मीकि (अनुवाद : डॉ. रामानंद शास्त्री, 2018). वाल्मीकि रामायण. लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज।

10.2 द्वितीयक स्रोत–पुस्तकें :

3. शुक्ल, रामचंद्र (2015). हिंदी साहित्य का इतिहास. नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
4. शर्मा, रामविलास (2014). तुलसीदास. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. मिश्र, विद्यानिवास (2010). तुलसीदास का काव्य–वैभव. भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली।
6. त्रिपाठी, विश्वनाथ (2016). लोकवादी तुलसीदास. राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. सिंग, आर. के. (2019). आधुनिक भारत में परिवार का विघटन. सामाजिक विज्ञान प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. गुप्ता, अनुपम (2021). डिजिटल युग में मानवीय संबंध. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
9. यादव, मैनेजर (2013). तुलसीरू एक सांस्कृतिक विश्लेषण. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
10. चौधरी, नीलम (2022). संयुक्त परिवार और भारतीय समाज. अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

10.3 शोध पत्र एवं पत्रिकाएँ :

11. चतुर्वेदी, रमेश (2022). रामचरितमानस में सामाजिक चेतना. हिंदी अनुशीलन, खंड 18, अंक 2, पृ. 34–49।
12. वर्मा, सुनीता (2021). तुलसीदास और आधुनिक परिवार. साहित्य समीक्षा, खंड 14, अंक 3, पृ. 98–112।
13. पाठक, अरुण (2020). दरकते रिश्ते और साहित्यिक समाधान. समकालीन साहित्य, खंड 9, अंक 1, पृ. 67–82।
14. मिश्रा, कमलेश (2023). रामचरितमानस और 21वीं सदी. हिंदी जगत, खंड 25, अंक 2, पृ. 23–38।
15. शर्मा, ममता (2022). आधुनिक समाज में एकाकीपन और साहित्यिक उपचार. मनोभाषा, खंड 7, अंक 4, पृ. 55–70।

10.4 प्रतिवेदन एवं सर्वेक्षण :

16. National Family Health Survey – NFHS 5 (2021). Government of India, Ministry of Health & Family Welfare.
17. World Health Organization (2023). Loneliness and Social Isolation as Global Public Health Concerns. WHO Report, Geneva.
18. National Crime Records Bureau (2022). Crime in India — Family Disputes and Divorce Statistics. NCRB, New Delhi.

संगम Impact Factor : 7.834 Website : www.ginajournal.com ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 89–96
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

शिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रति शिक्षकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन

सुविधा, शोधकर्त्री
डॉ. वन्दना दुआ, शोध निर्देषिका एवं सह आचार्या,
टांटिया विष्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

सूचना और प्रौद्योगिकी के विकास ने समाज के हर क्षेत्र में बदलाव ला दिया है। आज शैक्षिक प्रौद्योगिकी एक ऐसी सीमा पर पहुंच गई है जहां सीखने के नवीनतम साधन उपलब्ध करवा रही है। शिक्षा ई लर्निंग के युग की तरफ बढ़ती जा रही है। पिछले कुछ सालों से इंटरनेट के माध्यम से पढ़ने में लोगों की रुचि बढ़ती जा रही है। ऑनलाइन सीखना और वेब आधारित प्रशिक्षण प्राप्त करने का रुझान व्यक्तियों में बढ़ता जा रहा है। इंटरनेट के माध्यम से सीखने में आश्चर्यजनक रूप से वृद्धि होती जा रही है।

आज उच्च शिक्षा को बहुत ही चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। वैष्वीकरण के कारण तथा राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय उच्च शैक्षणिक संसाधनों के बीच जो प्रतिस्पर्धा की भावना है उसका लगातार विकास होता जा रहा है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस यानी कि कृत्रित बद्धिमत्ता की चर्चा इस समय चारों ओर है और ऐसा लगता है जैसे भविष्य के लिए एआई ही सबसे उपयुक्त टूल बनता जा रहा है. हालांकि इसके सामने कई चुनौतियां भी हैं।

कृत्रिम बद्धिमत्ता –

कृत्रिम बद्धिमत्ता (AI) यानी आर्टिफिशियल इंटेलिजेस शब्द खूब प्रचलन में है। इंस्टाग्राम पर रील स्वाइप करते हुए भी शायद आपने ये शब्द देखा हो। हो सकता है वहां आपने AI की मदद से बनी कोई फोटो या वीडियो भी देखी हो। कभी आपने सोचा है कि फेसबुक या इंस्टाग्राम पर आप कोई वीडियो बड़े ध्यान से देखते हैं, फिर उसके बाद वैसे ही वीडियोज आपकी फीड में लगातार कैसे दिखते रहते हैं? या फिर फ्लिपकार्ट या अमेजन पर आप कोई चीज सर्च करते हैं, भले ही वो चीज आपने खरीदी ना हो, फिर भी कैसे आपको अपने फेसबुक–इंस्टाग्राम या किसी गेम में बार–बार उसके विज्ञापन दिखने लगते हैं? ये सब AI की वजह से ही होता है। दरअसल, सोशल मीडिया कंपनियां AI का इस्तेमाल कर यूजर के इंटरेस्ट का पैटर्न समझती हैं और उनका डेटा इकट्ठा करती है। इसी डेटा का इस्तेमाल कर वो यूजर को इस तरह के विज्ञापन या फीड दिखाती है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता का अर्थ है– कृत्रिम और बुद्धिमत्ता। जिस तरह से मानव मस्तिष्क कार्य करता है इस तरह से

तकनीकी मानव बनाया गया है, यानी कि जिसको हम रोबोट भी कह सकते हैं, जो कि हूबहू मानव मस्तिष्क की तरह ही कार्य करता है। सोचने व कार्य करने की जितनी क्षमता मानव मस्तिष्क में होती है उससे कई गुना क्षमता कृत्रिम बुद्धिमत्ता से संभव है। आज के समय में ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है जिसमें आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोग नहीं किया जाता हो। यहां तक कि शिक्षा के क्षेत्र में, साइंस के क्षेत्र में, मेडिकल के क्षेत्र में, कृषि के क्षेत्र में सब जगह पर कृत्रिम बुद्धिमता का लाभ लोग ले रहे हैं।

न्यादर्श –

प्रस्तुत शोध कार्य हेतु शोधकर्त्री द्वारा हनुमानगढ़ जिले के सरकारी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के 200 षिक्षकों 200 षिक्षार्थियों व 200 अभिभावकों (कुल 600) को शामिल किया किया गया।

विधि –

इस शोध अध्ययन में शोधकर्त्री ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया।

उपकरण –

शोधकर्त्री द्वारा षिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence) के उपयोग के प्रति षिक्षकों, अभिभावकों एवं षिक्षार्थियों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करने हेतु स्वनिर्मित परीक्षणों का प्रयोग किया गया –

1. कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence) के उपयोग के प्रति षिक्षकों की अभिवृत्ति मापनी।

सांख्यिकी –

शोध कार्य हेतु शोधकर्त्री द्वारा सांख्यिकी के रूप में मध्यमान, मानक विचलन एवं टी–टेस्ट का प्रयोग किया गया।

शोध के उद्देश्य –

1. षिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रति षिक्षकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।

विश्लेषण –

सारणी संख्या–1

समूह (शिक्षक)	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	स्वतंत्रता की कोटि	टी मूल्य	सार्थकता स्तर
महिला शिक्षक	100	152.12	22.11	198	0.58	असार्थक
पुरुष शिक्षक	100	153.77	17.55			

0.01 व 0.05 सार्थकता स्तर

परिणाम एवं व्याख्या –

सारणी संख्या 1 के अनुसार षिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रति महिला षिक्षकों व पुरूष षिक्षकों की अभिवृत्ति का मध्यमान क्रमषः 152.12 तथा 153.77 है। इन दोनों समूहों का प्रमाप विचलन क्रमषः

22.11 व 17.55 हैं। अतः दोनों के मध्यमानों के अंतर का टी मूल्य 0.58 है। ये मूल्य 198 स्वतंत्रता की कोटि हेतु 0.05 स्तर पर विष्वास मूल्य 1.97 तथा 0.01 के विष्वास मूल्य 2.60 से कम है। अतः दोनों स्तरों पर सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

अतः षिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रति महिला षिक्षकों व पुरूष षिक्षकों की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं प्राप्त हुआ है जैसा कि लेखाचित्र से भी स्पष्ट हो रहा है–

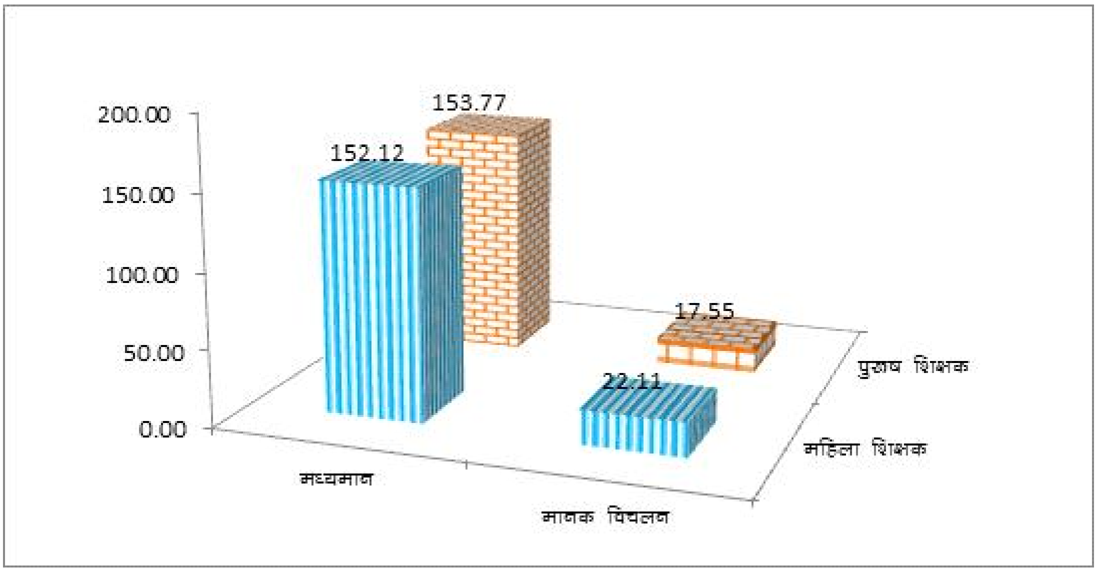

सारणी संख्या–2

समूह (ग्रामीण शिक्षक)	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	स्वतंत्रता की कोटि	टी मूल्य	सार्थकता स्तर
महिला शिक्षक	50	147.64	21.34	98	1.47	असार्थक
पुरूष शिक्षक	50	153.40	17.78			

0.01 व 0.05 सार्थकता स्तर

परिणाम एवं व्याख्या –

सारणी संख्या 2 के अनुसार षिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रति ग्रामीण क्षेत्र के महिला षिक्षकों व पुरूष षिक्षकों की अभिवृत्ति का मध्यमान क्रमषः 147.64 तथा 153.40 है। इन दोनों समूहों का प्रमाप विचलन क्रमषः 21.34 व 17.78 हैं। अतः दोनों के मध्यमानों के अंतर का टी मूल्य 1.47 है। ये मूल्य 98 स्वतंत्रता की कोटि हेतु 0.05 स्तर पर विष्वास मूल्य 1.98 तथा 0.01 के विष्वास मूल्य 2.62 से कम है। अतः दोनों स्तरों पर सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

अतः षिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रति ग्रामीण क्षेत्र के महिला षिक्षकों व पुरूष षिक्षकों की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर प्राप्त नहीं हुआ है जैसा कि लेखाचित्र से भी स्पष्ट हो रहा है–

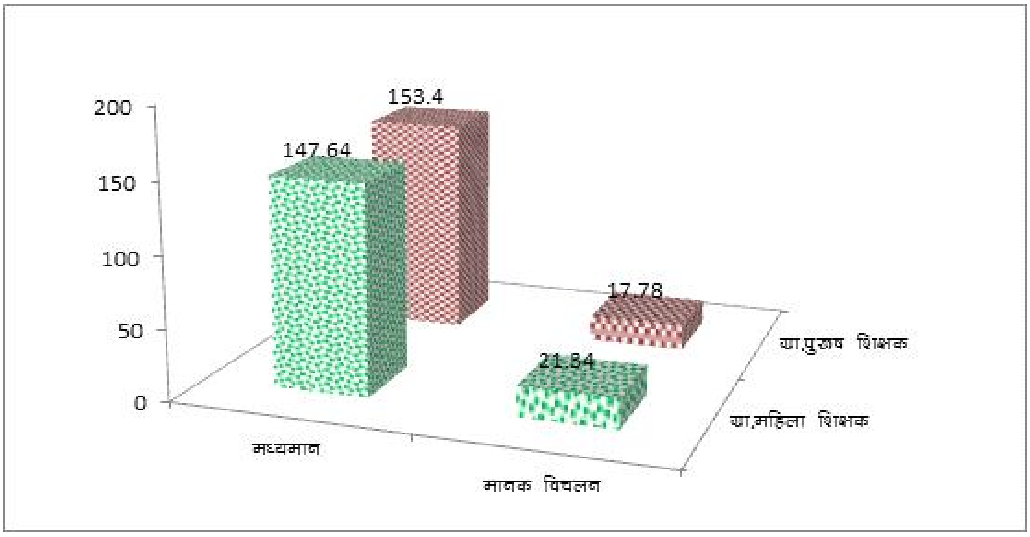

सारणी संख्या–3

समूह (शहरी शिक्षक)	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	स्वतंत्रता की कोटि	टी मूल्य	सार्थकता स्तर
महिला शिक्षक	50	156.60	22.16	98	0.62	असार्थक
पुरूष शिक्षक	50	154.14	17.48			

0.01 व 0.05 सार्थकता स्तर

परिणाम एवं व्याख्या –

सारणी संख्या 3 के अनुसार षिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रति शहरी क्षेत्र के महिला षिक्षकों व पुरूष षिक्षकों की अभिवृत्ति का मध्यमान क्रमषः 156.60 तथा 154.14 है। इन दोनों समूहों का प्रमाप विचलन क्रमषः 22.16 व 17.48 हैं। अतः दोनों के मध्यमानों के अंतर का टी मूल्य 0.62 है। ये मूल्य 98 स्वतंत्रता की कोटि हेतु 0.05 स्तर पर विष्वास मूल्य 1.98 तथा 0.01 के विष्वास मूल्य 2.62 से कम है। अतः दोनों स्तरों पर सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

अतः षिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रति शहरी क्षेत्र के महिला षिक्षकों व पुरूष षिक्षकों की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर प्राप्त नहीं हुआ है जैसा कि लेखाचित्र से भी स्पष्ट हो रहा है–

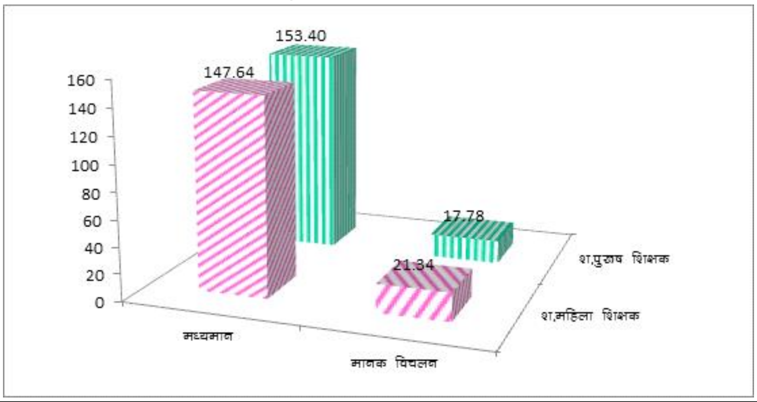

अतः निर्धारित परिकल्पनाएं 'षिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रति षिक्षकों की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है' को पूर्णतः स्वीकृत किया जाता है।

सारांश –

अध्ययन के परिणाम से षिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रति षिक्षकों की अभिवृत्ति के अध्ययन पर प्रकाश डालने में मदद मिलेगी। यह शोध ग्रामीण और शहरी शिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करने में भी मदद करेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. अग्रवाल, जे.सी. (1966). एज्यूकेषनल रिसर्च इन इन्ट्रोडक्षन. नई दिल्ली, आर्य बुक डिपो।
2. अग्रवाल, वी. वी. (1991). 'आधुनिक भारतीय षिक्षा और समस्याएं', विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
3. अग्रवाल, जे.सी. (1966). एज्यूकेषनल रिसर्च इन इन्ट्रोडक्षन. नई दिल्ली, आर्य बुक डिपो।
4. आहलूवालिया, एस.पी. (1978). मेनवल फॉर टीचर एटीटयूड इन्वेटरी. आगरा, नेषनल साइकोलॉजी कॉरपोरेषन।
5. एलिस, आर.एस. (1951). एज्युकेशन साइकोलॉजी।
6. एनास्तसी, ए. मनोवैज्ञानिक जॉच : न्यूयार्क, मैकमिलन कम्पनी।
7. कपिल, एच.के. (1978). अनुसंधान परिचय. आगरा, हर प्रसाद भार्गव पब्लिकेषन।
8. कोठारी, डी.एस. (1966). षिक्षा आयोग षिक्षा मंत्रालय. नई दिल्ली।
9. जैन, किशनचंद (1999). 'शैक्षिक संगठन, प्रशासन एवं पर्यवेक्षण', राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
10. डॉ. अस्थाना, बिपिन, ''मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन'', नवीन संस्करण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
11. डॉ. जायसवाल, सीताराम (1967). ''शैक्षिक व व्यावसायिक निर्देशन'' शिक्षा मनोविज्ञान कोष, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
12. डॉ. शर्मा, आर. ए. ''शिक्षा अनुसंधान'' आर.लाल बुक डिपो, मेरठ।
13. डॉ. भटनागर, सुरेश, ''शिक्षा मनोविज्ञान'' आर.एल.बुक डिपो, मेरठ।
14. डॉ. दुर्गादास, काषीनाथ संत, कुलकर्णी, डॉ. एस. (1999) शोध विज्ञान कोष, 21–ए, दरियागंज, नई दिल्ली।
15. डॉ. माथुर, एस.एस. 'विद्यालय संगठन एवं स्वस्थ शिक्षा', विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
16. डौंडियाल एस., फाटक ए. (1982). ''शैक्षिक अनुसन्धान का विधिशास्त्र'', राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर (संस्करण द्वितीय)
17. नन्नानन्द सरस्वती, प्राचीन–अर्वाचीन भारतीय षिक्षा पद्धति का तुलनात्मक अध्ययन, पृष्ठ–80.
18. Agresti, A. (2016). Categorical data analysis. Statistical Papers, 57, 849–850. https://doi.org/10.1007/s00362-015-0733-8
19. Amusa, J. O., & Ayanwale, M. A. (2021). Partial least square modeling of personality traits and

academic achievement in physics. Asian Journal of Assessment in Teaching and Learning, 11(1), 77–92. https://doi.org/10.37134/ajatel.vol11.2.8.2021
20. Aruleba, K., Dada, O. A., Mienye, I. D., & Obaido, G. (2021). Demography of machine learning education within the K12. In International conference on innovations in bioinspired computing and applications (pp. 467–474). Cham: Springer.
21. Aruleba, K., & Jere, N. (2022). Exploring digital transforming challenges in rural areas of South Africa through a systematic review of empirical studies. Scientific African, Article e01190.
22. Aruleba, K., Jere, N., & Matarirano, O. (2022 A). An evaluation of technology adoption during remote teaching and learning at tertiary institution by gender. IEEE Transactions on Computational Social Systems.
23. Aruleba, K., Jere, N., & Matarirano, O. (2022 B). Technology adoption readiness in disadvantaged universities during COVID-19 pandemic in South Africa. International Journal of Higher Education, 11(2).
24. Ayanwale, M. A., & Oladele, J. I. (2021). Path modeling of online learning indicators and learner s ' satisfaction during Covid-19 pandemic, 15 pp. 521–541), 10.
25. Bashir, I., & Madhavaiah, C. (2015). Consumer attitude and behavioural intention towards Internet banking adoption in India. Journal of Indian Business Research, 7 (Issue 1). https://doi.org/10.1108/JIBR-02-2014-0013
26. Bishop, F., Zagermann, J., Pfeil, U., Sanderson, G., Reiterer, H., & Hinrichs, U. (2019). Construct-a-vis: Exploring the free- form visualisation processes of children. IEEE Transactions on Visualization and Computer Graphics, 26(1), 451–460.
27. Burgsteiner, H., Kandlhofer, M., & Steinbauer, G. (2016). Irobot: Teaching the basics of artificial intelligence in high schools. In Proceedings of the AAAI conference on artificial intelligence, 30. No. 1.
28. Chai, C. S., Lin, P., & Jong, M. S. (2020). Factors influencing students' behavioral intention to Continue artificial intelligence learning (pp. 2020–2023). https://doi.org/10.1109/ISET49818.2020.00040
29. Chai, C. S., Lin, P. Y., Jong, M. S. Y., Dai, Y., Chiu, T. K., & Qin, J. (2021). Perceptions of and behavioral intentions towards learning artificial intelligence in primary school students. Educational Technology & Society, 24(3), 89–101.
30. Chai, C. S., Wang, X., & Xu, C. (2020). An extended theory of planned behavior for modelling Chinese secondary school students' intention to learn artificial intelligence. Mathematics, 8(11), 1–18. https://doi.org/10.3390/math8112089.
31. Chin, W. W. (2010). How to write up and report PLS analyses. In V. V. Esposito, W. W. Chin, J. Henseler, & H. Wang (Eds.), Handbook of partial least squares: Concepts, methods, and applications (pp. 655–690). NY: Springer. Series: Springer Handbook of Computational Studies.

32. Chiu, T. K. (2021). A holistic approach to the design of artificial intelligence (AI) education for K-12 schools. TechTrends, 1–12. https://doi.org/10.1007/s11528-021- 00637-1
33. Cohen, J. (1988). Statistical power analysis for the behavioral sciences. Mahwah, NJ: Lawrence Erlbaum.
34. Cohen, J. (1992). A power primer. Psychological Bulletin, 112(1), 155–159.
35. Dai, Y., Chai, C. S., Lin, P. Y., Jong, M. S. Y., Guo, Y., & Qin, J. (2020). Promoting students' well-being by developing their readiness for the artificial intelligence age. Sustainability, 12(16), 1–15. https://doi.org/10.3390/su12166597
36. Darmansyah, F. B. A., Hendratmi, A., & Aziz, P. F. (2020). Factors determining behavioral intentions to use Islamic financial technology: Three competing models. Journal of Islamic Marketing, 12(4), 794–812. https://doi.org/10.1108/JIMA-12-2019-0252
37. Davis, F. D. (1989). Perceived usefulness, perceived ease of use, and user acceptance of information technology. MIS Quarterly: Management Information Systems, 13(3), 319–339. https://doi.org/10.2307/249008.
38. Fishbein, M., & Ajzen, I. (2011). Predicting and changing behavior: The reasoned action approach. Psychology Press.
39. Toma'sev, N., Cornebise, J., Hutter, F., Mohamed, S., Picciariello, A., Connelly, B., et al.(2020). AI for social good: Unlocking the opportunity for positive impact. NatureCommunications, 11(1). https://doi.org/10.1038/s41467-020-15871-z.
40. Touretzky, D., Christina, G.-M. C., Breazeal, C., Martin, F., & Seehorn, D. (2019). A year in K-12 AI education. AI Magazine, 40(4), 88–90, 2019.
41. Trotsko, A. V., Rybalko, L. S., Kirilenko, O. G., & Trush, H. O. (2019). Teachers' professional self-improvement in the conditions of distance learning implementation in higher education institutions. Information Technologies and Learning Tools, 72(4), 258e272. https://doi.org/10.33407/itlt.v72i4.3088
42. UNESCO. (2022). K-12 AI curricula A mapping of government-endorsed AI curricula. France: United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization. https://unesdoc. unesco.org/ark:/48223/pf0000380602.
43. Wong, K. K. (2010). Handling small survey sample size and skewed dataset with partial least square path modelling. Vue: The Magazine of the Marketing Research and Intelligence Association. November.
44. Wong, K. K. (2011). Review of the book handbook of partial least squares: Concepts, methods and applications. In V. Esposito Vinzi, W. W. Chin, J. Henseler, & H. Wang (Eds.), International journal of business science & applied management, 6 pp. 52–54), 2.
45. Wu, I. L., Li, J. Y., & Fu, C. Y. (2011). The adoption of mobile healthcare by hospital's professionals: An integrative perspective. Decision Support Systems, 51(3), 587–596. https://doi.org/10.1016/j.dss.2011.03.003

46. Xia, Q., Chiu, T. K., Lee, M., Sanusi, I. T., Dai, Y., & Chai, C. S. (2022). A self-determination theory (SDT) design approach for inclusive and diverse artificial intelligence (AI) education. Computers & Education, Article 104582.
47. Yang, X. (2019). Accelerated move for AI education in China. ECNU Review of Education, 2(3), 347–352, 2019.
48. Yoon, N., & Lee, H. (2021). AI recommendation service acceptance : Assessing the effects of perceived empathy and need for cognition.
49. Zimmerman, M. (2018). Teaching AI: Exploring new frontiers for learning. 12. International Society for Technology in Education.
50. Zimmermann-Niefield, A., Turner, M., Murphy, B., Kane, S. K., & Shapiro, R. B. (2019). Youth learning machine learning through building models of athletic moves. In Proceedings of the 18th ACM international conference on interaction design and children (pp. 121–132).

Webliography :-

- https://drive.google.com/file/d/1dZB3_b9m0iChhmRsouKUx1FAIWCKBf7A/view
- http://junikhyatjournal.in/index.html
- https://drive.google.com/file/d/1CFzKT49kVhf0Wd7_M4knZdj8ffLslluY/view
- https://drive.google.com/file/d/1BCCSL4YL0Fx8Ir7FzxsizQWHQypMPKor/view
- https://drive.google.com/file/d/1_tJOYecuAlBb-zmb_JmISZ_tW8_N6OAE/view
- http://kalasarovarjournal.com/
- https://drive.google.com/file/d/1QGzbx6XqdHwPRr2OAZddcA9HuDhpCJVn/view
- https://drive.google.com/file/d/1Y57_SGy0Fnd1002XoEDcxlPvSMIj216F/view
- https://drive.google.com/file/d/1QaIvEjpqq_rRZHW9M-cMOsmxQCKMM5zV/view
- https://drive.google.com/file/d/1ShWGeWS-Ub7C8JM_XuZg81R82Qib-tEU/view
- https://drive.google.com/file/d/1MaVloV_4qy-n9snGIgdhZThS5C2cnkAs/view
- https://drive.google.com/file/d/133yrL4O9y3HGE5M-B4ybuKqcC_hLfTdO/view
- https://drive.google.com/file/d/1JkCjc6JeVnQQyoVcs7UmqceCUA-xRK1e/view
- http://www.pewinternet.org/2017/05/03/the-future-of-jobs-and-jobs-training/
- https://www.ijicc.net/images/Vol_15/Iss_10/151038_Ayanwale_2021_E1_R.pdf.

संगम Impact Factor : 7.834 Website : www.ginajournal.com ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 97-103
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Indian Customary Practices and Legal Traditions

Neha Kumari, Research Scholar,

Dr. Dhananjay Mani Tripathi, Associate Professor,

Department of Sanskrit, Jamia Millia Islamia (Central University), New Delhi 110 025

Key Words : Indian Customary Practices, Ancient Inian Law, Indian Women, Dharmashastra, Customary Law

Our society needs rules and traditions to stay organized and stable. In modern times the legal system is mainly based on written laws. But in ancient Indian society law was mainly based on dharma customs and traditions. In Sanskrit literature mainly the Vedas, smritis, dharma sutras and Artha shastra there is a detailed description of law and conduct. Law was not only about punishment it was also a way to maintain morality, follow dharma and keep balance of society. Veda the core of the Vedic tradition, is of supreme, eternal, and immutable Gyan. The Jaimini sutra postulates three propositions what is good for man can be learnt from the Vedas. Secondly it can be learnt from the Veda only and thirdly whatever the Veda says must be true.[1] Samhita, Brahman, and Upanishad primarily Constitute foundation of Vedic traditions of law. In Ancient India the word law was understood as dharma. But it was not limited only to religious duties it also included social and legal responsibilities.

What are legal traditions?

Legal traditions are the big ideas and values that guide how laws are made and applied in a country. These traditions develop over time and are shaped by history, culture, religion, philosophy, and social values. India is a very ancient country with a great hoary past-rich in its cultural, intellectual, spiritual, political, and legal heritage. It is India where for the first time an idealistic and pragmatic legal theory evolved based on certain values spiritual as well as material - Dharma, Artha, Kama, and Moksha. Within the ring of Dharma, the life wheel of ancient Hindus moved for the attainment of prosperity (Artha), and for gratification of senses and desires (Kama) with a view to attain spiritual liberation or salvation (Moksha).[2]

There are several major types of legal traditions like common law, civil law, customary law, religious law. Common Law Traditions: This tradition relies on judge-made laws based on judicial decisions rather than only written laws.[3]Civil Law Traditions: Based on written codes and statutes. Judges apply the law rather than create it.[4] Religious Law Traditions: Law derived from religious texts and beliefs like Hindu law (Dharmashastra), Muslim law (Sharia).

India has a mixed legal system. Indian legal system is based on concept of dharma, especially Sanatana Dharma[5]. India has a rich cultural, political and legal heritage. Hindu philosophy based on concepts like, 'dharma, Artha, moksha and karma'. Hinduism is not created by any prophet. It is based on dharma. This dharma is later discussed into RAJADHARMA, PATI DHARMA, GURU DHARMA etc. When we look back to our history, we can see that Indian legal system was related to RAJANEETHI. Ancient kings were most knowledgeable people from all over the world. Legal systems in Western countries have changed a lot, but India's Sanatan Dharma is still mostly unchanged. Even the British followed some of our traditional laws, but nowadays we are blindly copying Western culture. India has the oldest judiciary in the world. The concept of dharma was ruling principle of legal system. Taitiriya Upanishad uses the words satya and dharma सत्यं वद | धर्मं चर[6] Manusmriti written essential rules for the observance of dharma. Manu says these laws will govern entire society.

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ॥[7]

Manu describes ten essential rules for the observance of DHARMA; patience (dhrithi), forgiveness (Kshama), self-control (dhama), honesty (aastheya), sancity (shauch), control of senses (indriya-nigraha), reason (dhy), knowledge or learning (vidya), truthfulness (Sathya), absence of anger (krodha). In the Vedic period, there was no legal system like today. Law was related to DHARMA. Society was governed by customs and traditions rather than written laws.

ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्वणः।।[8]

In the early stages of human society, people were believed to live in a kind of golden age where they naturally followed good behavior. They were free from greed, cruelty, and hatred, and their actions were guided by moral values. Human nature was considered essentially good and social, and feelings like fear and remorse helped people stay on the right path. Because of this, there was no real need for formal laws or a judicial system at that time.

Courts were run by learned scholars and ministers. The legal system developed in three phases: ancient, medieval, and British India.[9] Important texts like Dharmashashtra, Arthashastra, and manusmriti guided the legal system. Even the king was subject to law, and judges were independent. Kings also appointed spies to know general opinion among people about rule of law and make necessary changes in administration. Higher courts controlled lower courts[10], and principles like prejudicated were used. Ancient Indian law influenced many countries, and texts like Manusmriti were translated into different languages. Kings valued public opinion and made changes in administration when needed. In Arthashastra, customary practices and the legal system operate together. From the system of punishment to household administration, law and customs are closely connected and guide social order.

धर्मश्म च व्यवहारश्च चरित्रं राजशासनम्।
विवादर्थश्चतुष्पादः परिश्रमः पूर्वबाधकः॥[11]

Dharma, Legal procedure, customary practices, and king's orders are the four bases of deciding disputes.

दण्डः शास्ति प्रजाः सर्वा दण्ड एवाभिरक्षति |
दण्डः सुप्तेषु जागर्ति दण्डं धर्म विदुर्बुधाः||[12]

Punishment governs the people it protects all the subjects. Even when the people are asleep, it remains active. Therefore, wise people consider punishment itself as dharma.

Yajnavalkya Smriti considered more practical and developed compared to earlier Smritis. According to Yajnavalkya Smriti the king was the supreme judge but not act alone he must take advice from others also. Here also refers to learned judges.

श्रुताध्ययनसम्पन्नाः धर्मज्ञाः सत्यवादिनः।
राज्ञा सभासदः कार्याः रिपौ मित्रे च ये समाः॥[13]

This text mentions that the judges should be learned in law, honest, knowledge, truthful, and unbiased. Cases were heard in a proper court system and sources for deciding cases is based on Vedas, Smritis and good customs.

श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः|
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् ||[14]

Smritis gives importance to proper evidence and punishments was necessary to maintain order to give the fairness in judgment. It represents that this text presents a well-developed judicial system with clear rules about judges, court, evidence, and punishments. It shows a structured legal system with Dharma and customary practices.

Key features of legal traditions

- Law shows the culture and history of a society.
- Law helps keep things stable and consistent over time.
- Law affects how courts and legal systems work.
- Law changes as society changes.

What are Customary Practices?

Customs are rules followed by people which are unwritten because they have been doing them so long. Customs has been described by different legal jurists based on their own ideas, interpretation, beliefs, perspectives, and thoughts.[15]

In case of Harprasad v. Shivdayal[16]the judicial committee of the privy Council observed, "Customs as a rule which in a particular family or in a particular district or in a particular sect, class or tribe, has from long usage obtained the force of a law."

Examples : Touching elder's feet for respect in India, removing shoes before entering a home, a Hindu Marriage should be solemnized with performance of Saptapadi[17] to it to be legally valid.

In India, customary law means traditions and practices followed by communities over time that are accepted as rules because people widely follow them.[18] Customary laws arise when courts recognize and formalize long-practiced community customs.

अभिवाद्य महावृद्धान् श्रोत्रियान ब्राह्मणांस्तथा।
प्रत्याभिवाद्योऽप्यभिवाद्यः सतां धर्ममजानता॥[19]

The person who respects elders gains long life, knowledge, fame, and strength.

अतिथि देवो भव[20]

In the olden days, there was no means of communicating someone's arrival at a house. The notion of Atithi devo bhava originated from the unpredictability of the visitors in the past centuries. Tithi, in Sanskrit, refers to the calendar. So, Atithi is a guest who can visit us at any time. Devo Bhava indicates that we must consider our guests as equivalent to God.

अहिंसा परमो धर्मस्तथाहिंसा परो दमः ।
अहिंसा परमं दानमहिंसा परमं तपः ॥
अहिंसा परमो यज्ञस्तथाहिंसा परं फलम् ।
अहिंसा परमं मित्रमहिंसा परमं सुखम् ॥[21]

Non-violence (Ahimsa) is the highest virtue. It is considered the greatest form of self-control, charity, penance, sacrifice, and reward. Ahimsa is also the best friend of human beings and the source of true happiness.

यज्ञदानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्।।[22]

Actions like sacrifice (yajna), charity (dāna), and penance (tapas) should never be abandoned; they must always be performed. These actions purify and uplift wise people.

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः परोपकाराय वहन्ति नद्यः।
परोपकाराय दुहन्ति गावः परोपकाराय सतां विभूतयः॥[23]

Trees bear fruits for the benefit of others. Rivers flow for the benefit of others. Cow give milk for the benefit of others. Similarly, the wealth and resources of good people are meant for helping others.

Legal traditions and customary practices have always been an important part of human life. From ancient times to today, they have helped shape how people live together in society. In India, the idea of law did not develop suddenly it changed slowly over time. In the early Vedic period, law was not written down but was based on dharma, which meant moral values, duties, and right conduct. Over time these ideas gradually developed into the modern legal system. However, in ancient India law was more about ethics, social responsibility, and community practices rather than strict rules and punishments. As time passed, negative tendencies began to appear in human behaviour. This led to the need for rules and regulations to control society. It was realized that maintaining law and order required not only moral values but also some form of authority and enforcement. People were seen as part of a larger

society and connected to the whole universe, rather than as isolated individuals.[24]Vedas preached ethics and morality. The lord does not favour the dishonest rich. Significant preaching as 'never grumble; be content and enjoy the fruits of your honest labour'. Wisdom words as 'May you earn as by hundred hands and disburse by a thousand'. [25]

In modern India legal system is based on the Constitution of India but with the importance to customary practices. Customs are considered a source of law in personal law, marriages, family matters etc.

Article 13 of constitution of India states that

'Any law made before the Constitution that violates Fundamental Rights becomes void to that extent.' The State cannot make any law that takes away or limits Fundamental Rights; such laws will be invalid. "Law" includes rules, regulations, customs, and usages having legal force. "Laws in force" means laws made before the Constitution and not repealed. Constitutional amendments made under Article 368 of the Constitution of India are not covered under this article.[26]

Article 25 states Right to Freedom of Religion

(Article 25 of the Constitution of India) guarantees that every person has the freedom of conscience and the right to freely profess, practice, and propagate religion, subject to public order, morality, health, and other fundamental rights.[27]

Article 372 states that

All the laws that existed in India before the Constitution came into force will continue to remain valid, unless they are changed, repealed, or amended by a competent authority. The President was given the power to modify these old laws to make them consistent with the Constitution, but only for a limited period of [3 years][28] from its commencement. After that, only the Legislature or competent authority can change or repeal such laws.[29]

Supreme court plays an important role in deciding whether a custom is valid or not.

Some Important Judgments of Supreme Court

1. **India young Lawyers Association v. State of Kerala**

On 28 September 2018, the Supreme Court in the Sabarimala Temple Entry Case (4:1 majority) ruled that banning women from entering the temple is unconstitutional. It said this practice violates women's right to freedom of religion under Article 25(1) and struck down Rule 3(b) of the Kerala rules that allowed such exclusion.[30](Custom cannot override equality)

2. **Shayara Bano v. Union of India**
   In this case, Shayara Bano challenged talaq-e-biddat (instant triple talaq), where a Muslim husband could divorce his wife by saying "talaq" three times at once. The Supreme Court of India, by a 3:2 majority, declared this practice unconstitutional because it was arbitrary. The judgment led to the enactment of the Muslim Women

(Protection of Rights on Marriage) Act, 2019, which banned instant triple talaq in India.[31](Here custom cannot violate fundamental rights) (Article 14)[32]

3. **Jallikattu case**
   The Supreme Court's ruling in the Jallikattu case29 expanded the conversation on justice to include animal rights by banning the traditional Jallikattu sport due to its cruelty. This decision was a significant advancement in promoting justice for all living beings, challenging practices that put animals and humans at risk. The court determined that this ritual went against the constitutional rights of animals outlined in Article 51-A (g)(vii) and (h)(viii)30[33], which are part of the Fundamental Duties that citizens are required to adhere to. It was believed that these norms promoted cruelty and unethical behaviour under the guise of sports.
4. In the case of Smt. Ass Kaur vs. Kartar Singh, the Court said that customs can prevail when there is no statutory law, but they must follow justice, equality, and good conscience. Unfair customs may not be accepted even if they are old. The Court also noted that laws like the Child Marriage Restraint Act 1929 override customs only when there is clear legislative intent.[34]

Conclusion :

Law is not based only on written rules, but it is also formed by old customs, traditions, and practices of society. Modern India legal system respects its deep roots by recognizing customary practices but it does not blindly follow them. At those times, justice was connected to God, it means it was always right. Modern law in India recognizes customs but subjects them to constitutional limits. Laws are written in the form of Acts and statutes. The Supreme court ensures that only those traditions which are fair and reasonable. Every person had a duty to follow discipline and rules to maintain harmony in society and the world. Therefore, law was seen as something natural according to the need of people for the smooth functioning of society. Law is no longer limited to courts and the Constitution; it is now reaching people as well. This helps everyone understand both law and customs, and allows us to analyse which customs and practices can be properly followed and are beneficial for society.

References :

[1] Gaurinath Sastri (ed.), Studies in Hindu Law of M.M. Ganganath Jha (Varanasi: Sampurnanad Sanskrit University, 1992) at 1.

[2] Unit-1 Evolution of Bharatiya Jurisprudence - I/Indian Legal Theory – Past and Presen, S.N. Dhyani Fundamentals of Jurisprudence The Indian Approach 48-75 (Central Law Agency, Prayagraj, 2023).

[3] Commentaries on the laws of England by Blackstone, William, Sir, 1723-1780; John Adams Library BRL; Adams, John, Internet Archive

[4] Napoleonic Code France 1804, Britannica Editors https://www.britannica.com/topic/Napoleonic-Code

[5] A dharma is everlasting. Ch-5 LEGAL TRAJECTORIES ON ANCIENT INDIA: REFLECTIONS IN SMRITI, Vedic Tradition of Law, and Legal System by Upendra Kumar Tripathi, Anoop Kumar Published by Centre for Vedic Sciences BANARAS HINDU UNIVERSITY

[6] तैत्तिरिय उपनिषद 1.11.1 शिक्षावली

[7] मनुस्मृति 6/92, पंडित श्री हरगोविंद शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरिज, बनारस-1

[8] ऋग्वेद 10.190.1, संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ उमाशंकर शर्मा ऋषि पृ० 43

[9] M.S Veya Surya, Judiciary in Ancient India, 10 Vol.19 Ver. VII 2017, SR-JBM, pp.88-90. Legal Trajectories of Ancient India: Reflections in Smritis, Kavita Balakrishnan, ch-5

[10] The interview with Mr. Harish, disciple of Swami Chidanandapuri From the ch-5 0f VEDIC TRADITIONS OF LAW AND LEGAL SYSTEM BY Upendra Kumar Tripathi and Anoop Kumar Published by CENTRE FOR VEDIC SCIENCES BHU

[11] कौटिल्य अर्थशास्त्र, वाचस्पति गैरोल, तीसरा अधिकरण धर्मस्थनीय का अध्याय-1, पृ० 259

[12] महाभारत, शांतिपर्व का अध्याय-15 का श्लोक-2, राजदण्ड (सेंगोल) के प्राचीन सन्दर्भ, अनुराग नारायण पाठक, प्राचीन भारतीय राजशास्त्र की वर्तमान राजनीति में प्रासंगिकता, पृ०17 पर उद्धृत,

[13] याज्ञवल्क्यस्मृति के व्यवहारअध्याय के साधारणव्यवहारमातृपरकरणम् विज्ञानेश्वरप्रणित श्लोक-2, मिताक्षराटीका, डॉ उमेशचंद्र पाण्डेय

[14] मनुस्मृति 2/21, दूसरा अध्याय गीतप्रेस, गोरखपुर

[15] 'LL.M IInd Sem Jurisprudence II (L-2002) Sources of Law Introduction'. From the Article LEGAL RECOGNITION OF CUSTOMARY PRACTICES: CONSTITUTIONAL PERSPECTIVES By Kashak Agarwal, United World of Law, Karnavati University, Gandhinagar, Gujarat.

[16] Harprasad v Shivdayal

[17] 'Hindu Marriage Act, 1955' http://indiacode.nic.in/handle/123456789/1560accessed 22 April 2024

[18] 'Research Guide: Customary Law in India' https://maint.loc.gov/law/help/customary-law/india.php#_edn3 accessed 22 April 2024.

[19] मनुस्मृति 2/121, दूसरा अध्याय गीतप्रेस, गोरखपुर

[20] शिक्षावली तैतरियोपनिषद् 1.11, संस्कृत साहित्य कस इतिहास, डॉ उमाशंकर शर्मा ऋषि पृ० 82

[21] महाभारत अनुसासन पर्व 116.37-37

[22] श्रीमद्भागवद्गीता 18.5 गीतप्रेस, गोरखपुर

[23] हितोपदेश मित्रलाभ नामक अध्याय के प्रथम परिच्छेद (कथा42/43)

[24] Justice dr. B.S. Chauhan, Former Chairman, Law Commission of India; Former Judge, Supreme Court of India; Email: justicechauhan@gmail.com. VEDIC TRADITIONS OF LAW AND LEGAL SYSTEM by Upendra Kumar Tripathi, Anoop Kumar BHU

[25] Chapter-2 Vedic jurisprudence and its impact on contemporary world From VEDIC TRADITIONS OF LAW AND LEGAL SYSTEM by Upendra Kumar & Anoop Kumar, Justice (Dr). B.S. Chauhan

[26] THE CONSTITUTION OF INDIA Ins. By the constitution (Twenty-fourth Amendment) Act, 1971, s.2. https://www.indiacode.nic.in/bitstream/123456789/19150/1/constitution_of_india.pdf

[27] THE CONSTITUTION OF INDIA (Part III. —Fundamental Rights. –Arts. 23—23.) https://www.indiacode.nic.in/bitstream/123456789/19150/1/constitution_of_india.pdf

[28] Subs. By the Constitution (First Amendment) Act, 1951, s. 12, for "two years". https://www.indiacode.nic.in/bitstream/123456789/19150/1/constitution_of_india.pdf

[29] THE CONSTITUTION OF INDIA (Part XXI. —Temporary, Transitional and Special Provisions. —Art. 372.) https://indiankanoon.org/doc/74529/

[30] https://www.scobserver.in/reports/sabarimala-temple-entry-indian-young-lawyers-association-kerala-judgment-in-plain-english/

[31] https://www.law.cornell.edu/gender-justice/resource/shayara_bano_v._union_of_india#:~:text=A%20Constitution%20Bench%20of%20the,because%20it%20is%20manifestly%20arbitrary
https://indiankanoon.org/doc/115701246/

[32] The Bharatiya Nyaya Sanhita, 2023 (45 of 2023) BARE ACT WITH SHORT NOTES

[33] https://www.constitutionofindia.net/articles/article-51a-fundamental-duties/

[34] The Constitution of India, Child Marriage Restraint Act 1929.

E-mail: nehat2044@gmail.com
E-mail: dtripathi@jmi.ac.in

संगम Impact Factor : 7.834 Website : www.ginajournal.com ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 104–107
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

हिन्दी साहित्य में स्त्री लेखन की यात्रा

बिना चिक बड़ाईक
शोधार्थी, महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी, पश्चिम बंगाल, दार्जिलिंग।

अक्सर कहा जाता है मानव सभ्यता की विकास यात्रा में स्त्री जाति की पराधीनता की ऐतिहासिक यात्रा है। यह मानव सभ्यता के विकास चक्र में ह्रास–वंचित वर्ग के शोषण से संबंधित है। दरअसल यह सामाजिक व्यवस्था वर्चस्ववादी समूह द्वारा नियमित और संचालित होती है। समाज के संचालन में धार्मिक समूह और राज्य सामाजिक नियमन में निर्णायक भूमिका निभाते हैं। पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था में स्त्री की उपस्थिति को नगण्य माना जाता है। उनके द्वरा उनकी प्रतिभा, योग्यता का सही मूल्यांकन नहीं किया गया। इसके बावजूद भी विदूषी स्त्रियों ने अपनी उपस्थिति दर्ज की है। वैदिक काल में गार्गी, घोषा, आपाला जैसी विदुषी स्त्रियों ने पुरुष सत्ता को अपना लोहा मनवाया। ऋग्वेद में ऋषिकाओं की रचनाएँ मंत्र रूप में मिलती है।

बौद्ध काल में थेरीगाथाओं में स्त्रियों के रचनाओं का संकलन प्राप्त होता है जो बौद्ध धर्मग्रंथ सुत्त पिटक के नवें भाग में मिलता है। वैसे ही गाथासप्तशती में अनेक कवयित्रियों की रचनाएँ भी संकलित है। सिद्ध साहित्य में चौरासी सिद्धों में कनकलपा, मणिभाद्रपा, लक्ष्मीकरा योगिनियों का नाम आता है। दक्षिण भारत के भक्ति आंदोलन में आण्डाल है जिसे दक्षिण भारत की मीरा कहा जाता है। अनेक राजकुमारियाँ, मंत्रियों की पुत्रियों के साथ निम्न समाज की स्त्रियाँ, वेश्याएँ और दासी की पुत्रियों की रचनाएँ थेरीगाथाओं में पाए जाते हैं।

भक्तिकाल में मीरा तमाम सामाजिक वर्जनाओं का सामना करते हुए अपनी वाणी को मुखरता से रखती हैं। देखा जाए तो मीरा धार्मिक और सामाजिक परंपरा का विरोध करती है। जहाँ स्त्रियों को पर्दे के पीछे रखने की परंपरा हो वहाँ मीरा साधु–संतों के साथ घूमना सामाजिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह ही है। सामंतवादी व्यवस्था में स्वतंत्रता की चेतना आना, सामाजिक अधिकार की पहचान करना, अपने आप में महत्वपूर्ण कदम है। जहाँ दलित–वंचित वर्ग की महिलाओं के साथ सवर्ण समाज की महिलाओं को भी पितृसत्ता से शोषित होना पड़ा हो। महिलाओं की स्थिति के संदर्भ में डॉक्टर तेज सिंह का कथन है, "अगर आज दुनिया की पितृसत्तओं की तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन–विश्लेषण किया जाए तो आप पाएँगे की भारत की ब्राह्मणी पितृसत्ता सबसे बढ़कर सबसे कठोर, सबसे ज्यादा उत्पीड़नकारी, अन्यायपूर्ण और शोषणकारी रही है। क्योंकि वह नारी को सभी मूलभूत अधिकारों से वंचित करके उन्हें और बद्तर स्थितियों की ओर धकेल देती है। अगर ब्राह्मणी पितृसत्ता ने बहुजन समाज की नारियों पर शोषण और उत्पीड़न के दोहरे रूप को मजबूत आधार प्रदान किया है तो सवर्ण वर्ग की नारियों को भी उसने और कठोर यौन–नियंत्रण से बांध दिया है।"[1]

मिस कैथरीन मियो भारत यात्रा के बाद 'मदर इंडिया' की रचना की। जिसमें भारतीय नारी की दयनीय दशा का चित्रण किया। भारतीय लोगों को उनकी यथार्थ अभिव्यक्ति पसंद नहीं आयी इसलिए उन्होंने इसे 'नाली इंस्पेक्टर की रिपोर्टर' कहा। किंतु वहीं एक भारतीय नारी 'एक अज्ञात हिंदू औरत' के नाम से 'सीमन्तनी उपदेश' लिखती हैं। जिसमें भारतीय स्त्रियों की दशा और विधवाओं की मार्मिक गुहार है, स्त्रियाँ जहाँ पितृसत्ता, बहू–पत्नी विवाह का दंश झेलती हुई एक बच्चे–जनने की मशीन मात्र बनकर रह गई थी। वह विधवा होने के बाद अमानवीय धार्मिक, सामाजिक व्यवस्था के नाम पर शेषित होती थीं। 'सीमन्तनी उपदेश' को डॉक्टर धर्मवीर नारी विद्रोह का दस्तावेज मानते हैं। "यह हमारे हिंदुस्तान की आज की बेटियों के लिए अपनी आजादी के घोषणा पत्र के समान किताब है। आज जब हमारी नारी जागरूक होकर परिवार और समाज में अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठाती है तो उसकी पुकार को पश्चिम के नारी मुक्ति आंदोलन से जोड़कर उपहास का विषय बना दिया जाता है। पश्चिम का प्रभाव कोई गाली नहीं है, मुक्ति का रास्ता कहीं भी मिल सकता है, लेकिन यह बात खुद इस देश के संदर्भ की होने से अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। यह औरत के दर्द और विद्रोह का सुलगता हुआ दस्तावेज है।"[2] देखा जाए तो 'एक अज्ञात हिंदू औरत' के रूप में स्त्री चेतना की शुरुआत 1882 से ही में उठ रही थी 'सीमन्तनी उपदेश' सामाजिक व्यवस्था, पितृससत्ता से मुक्ति की आवाज है। सामाजिक व्यवस्था की कठोरता इसी से आँका जा सकता है कि एक स्त्री अपनी वास्तविक परिचय के साथ समाज की कुरीतियों पर सवाल नहीं उठा सकती थी। सदियों से चली आ रही सामाजिक परंपरा का विरोध करना सामाजिक अपराध था। इस परिवेश में सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध आवाज उठाना साहसिक कदम है। धर्मिक आस्था, परंपरा के नाम पर स्त्रियों को मानसिक गुलामी के जंजीरों में रखा गया। उन बेड़ियों को वह अभी तक पूर्णतः नहीं तोड़ पायीं है। स्त्री की सामाजिक अवस्था के संदर्भ में नमिता सिंह लिखती हैं, "धर्म सम्मत सामाजिक नियम–कानून ने स्त्री को घर की चारदीवारी को भीतर सीमित कर उसे सामाजिक विकास की मुख्य धारा से अलग किया लेकिन उससे भी अधिक आपराधिकत कृत हुआ उसे मानसिक–वैचारिक स्तर पर गुलामी की जंजीरों से जकड़ना। आज 21वीं सदी में जब बड़े सामाजिक परिवर्तनों के हम गवाह है लेकिन मानसिक गुलामी की जहनियत को दूर करना कितना मुश्किल है और इस बदलाव में कितने युग बीतेगे.... कहा नहीं जा सकता। इसके बावजूद स्त्री सृजनात्मकता ने पिछले डेढ़–दो सौ वर्षों में न केवल अपनी प्रभावी उपस्थिति दिखाई है बल्कि इतिहास में नये आयाम भी रचे हैं।"[3]

नये आयम सृजन करने में सावित्रीबाई फुले का कार्य अविस्मरणीय है। सावित्रीबाई फुले भारत की पहली महिला शिक्षिका हैं जिन्होंने दलित एवं गैर–दलित बालिकाओं को शिक्षित करने का कार्य किया। सावित्रीबाई फुले समाज के वंचित वर्ग खासकर स्त्री और दलितों के अधिकार के लिए संघर्ष किया। वह ब्राह्मणवादी व्यवस्था, धार्मिक–आडंबर, अंधविश्वास के खिलाफ सामाजिक आंदोलन किया। इस कार्य में ज्योतिबा फुले और सावित्री फुले ने 1848 में प्रथम बालिका विद्यालय की स्थापना की। स्त्री को सामाजिक अधिकार दिलाने के लिए शिक्षा और साहित्य दोनों का प्रयोग किया।

पंडित रमाबाई और कृपा भाई तत्कालीन समाज में स्त्री की दैनिक स्थिति को अंकित किया है। उन्होंने भारतीय हिंदू समाज की स्त्री की दशा और भारतीय समाज और ईसाई समाज के अंतर्द्वन्दों को उल्लेखित किया है। महाराष्ट्र की ताराबाई शिंदे स्त्री–पुरुष समानता, विधवाओं की स्थिति और पुनर्विवाह पर विचार करते हुए

रूढ़िवादी परंपराओं को गलत कहा। उनकी मराठी भाषा में लिखित 'स्त्री–पुरुष तुलना' स्त्री–पुरुष समानता की बात करती है। पुरुष समाज स्त्री को कमजोर बताकर अपने अधीन में रखते आए हैं। अंग्रेजी शिक्षा और उनकी संस्कृति पुरुषों के लिए भय का विषय था। धर्म–संस्कृति के नाम पर स्त्री को अपने नियंत्रण में रखना उनका उद्देश्य था। ब्रिटिशों सरकार द्वारा स्त्री के पक्ष में कानून बनाए जाने पर कहा गया "ब्रिटिश शासन और सब मामलों में कानून बन सकता है और जरूर बनाए, लेकिन हमारे धर्म के मामले में हस्तक्षेप ना करें।"[4] पितृसत्ता के लिए धर्म, आस्था, रीति–रिवाज, संस्कृति स्त्री को नियंत्रण में रखने का एक हथियार है। 'एक अज्ञात हिंदू औरत' की तरह बीसवीं सदी में राजेंद्र बाला घोष अपना नाम गुप्त रखकर 'बंग महिला' नाम से 'कुंभ में छोटी बहू', 'चंद्रदेव से बातें', 'दुलाई वाली' लिखी। उनका कहना था स्त्री जीवन सिर्फ रसोई से लेकर शय्या तक के लिए नहीं है।

स्त्री–चिंतन और स्त्री पराधीनता को मुखर रूप से रखने वाली लेखिकाओं में महादेवी वर्मा का महत्वपूर्ण स्थान है। उनकी गद्य कृति 'स्मृति की रेखाएँ', 'अतीत के चलचित्र', 'श्रृंखला की कड़ियाँ' में सदियों से स्त्री को लेकर चलने वाली संकीर्ण विचार को नकारते हुए, उन्हें विकास के अवसर देने की वकालत करती हैं। स्त्री के पिछड़े होने का कारण उनको एक दायरे में बाँधकर रखना बताती है। प्राचीनता की पूजा के नाम पर स्त्री की गुलामी बताती है। सदियों से पुरूषों पर निर्भर रहने से अपना स्वाभिमान खो चुकी स्त्रियों को आर्थिक, सामाजिक रूप से आत्मनिर्भर बनने को प्रेरित करती हैं। धर्म, संस्कृति, परम्परा, आदर्श के नाम पर उसका स्वाभाविक विकास नहीं होने दिया गया। इसके पीछे का उद्देश्य अपनी सत्ता को बनाये रखना था।

फ्रांस में स्त्री–विमर्श के नारीवादी आंदोलन को प्रतिनिधित्व करने वाली सीमोन द बउवा की पुस्तक 'दा सेकिंड सेक्स' ने फ्रांस के साथ भारतीय नारीवादी विचार को प्रभावित किया। परन्तु भारत में स्त्री–विमर्श की वकालत करने वाली पुस्तक महादेवी वर्मा की 'श्रृंखला की कड़ियाँ' 1942 में प्रकाशित हो चुकी थी। इससे भारत में स्त्री–विमर्श की पृष्ठभूमि भारतीय लेखिकाओं द्वारा ही शुरू माना जाना चाहिए।

20वीं शताब्दी के आरम्भिक वर्षों में सुभद्रा कुमारी चौहान और डॉ.रशीद जहाँ जैसी दो महिलाओं ने राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन में सक्रिय रहीं। सुभद्रा कुमारी चौहान की कविता "खूब लड़ी मरदानी वह तो झांसी वाली रानी थी" जनजन की गीत बन गई थी। उनकी प्रेरणा से प्ररित होकर महिलाएँ चारदीवारी के बाहर निकलकर सामाजिक एवं राष्ट्रीय व्यापी कार्य की सहभागिता बनी।

सुभद्रा कुमारी चौहान की तरह डॉ0 रशीद जहाँ के साहित्य के द्वारा दबे–कुचले समाज की सच्चाई को उजागर किया एवं मुस्लिम समाज के रूढ़िवादी कुतीतियों का विरोध किया। जिस कारण उन्हे समाज से विरोध का सामना करना पड़ा। उनके पिता मुस्लिम महिला के सामाजिक और शैक्षणिक सुधार को लेकर घोर समर्थक थे। उनहोंने सामाजिक विरोध के बावजूद मुस्लिम लड़कियों के लिए एक स्कूल खोला जो आज अलिगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के विमेंस कॉलेज के रूप में प्रसिद्ध है। डॉ0 रशीद जहाँ की 'अंगारे'(1932) कहानी संग्रह का विरोध हुआ और नाक–कान काटने का फतवा जारी किया गया। 'दिल्ली की सैर' कहानी 'पर्दे के पीछे' नाटक में मुस्लिम समाज की डरी–सहमी, शोषित, अस्तित्वहीन स्त्री की दयनीय दशा का चित्रण है।

राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान स्त्रियों की सहभागिता भौतिक स्तर पर होने के साथ रचना के स्तर पर भी दिखाई पड़ने लगा। मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा जैसी लेखिकाएँ हिन्दी साहीत्य में स्त्री लेखन का प्रतिनिधित्व कर रहीं थीं। हिन्दी कथा साहित्य के आरंभिक दौर में पुरूषों का वर्चस्व था किन्तु आजादी के बाद

कथा साहित्य के क्षेत्र में लेखिकाओं ने अपने वर्ग और जातिगत अभिव्यंजनाओं को ही नहीं रखा बल्कि अपनी अलग पहचान बना ली। अब तक स्त्री को पुरूषों के नजरिए से देखा, परखा और समझा जा रहा था, किन्तु साहित्य के क्षेत्र में लेखिकाओं के आने से स्त्री को देखने की नई दिशा और दृष्टि मिली। उसी तरह दलित साहित्य में दलित स्त्री की अस्मिता को समझने की दृष्टि मिली। अपनी विशिष्ट संवेदनाओं के द्वारा साहित्य को समृद्ध करने वाली लेखिकाओं में प्रमुख हैं– कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, ममता कालिया, मन्नू भंडारी, राजी सेठ, सुशीला टाकभौरे आदि। राजनीति को स्त्री के लिए वर्जित समझे जाने वाले समय में मन्नू भंडारी ने 'महाभोज' उपन्यास लिखकर उस धारना को तोड़ा कि स्त्रियाँ राजनीति जैसे जटिल विषय पर नहीं लिख सकती हैं। आजादी के बाद दलित चेतना से पूर्ण साहित्य भी सामने आने लगे। दलित लेखक ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, श्यौराज सिंह बेचौन के साथ सुशीला टाकभौरे, अनिता भारती के साहित्य दलित–चेतना, अम्बेडकरवादी विचारधारा के साहित्य ने अपनी बना ली।

संदर्भ सूचि :–

1. संपा. डॉ0 तेज सिंह, अम्बेडकरवादी स्त्री–चिंतन, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृष्ठ 13
2. संपा0 डॉ0 धर्मवीर, एक अज्ञात हिन्दू औरत, सीमन्तनी उपदेश, वाणी प्रकाशन, दरीयागंज, नई दिल्ली, संस्करण 2004, पृष्ठ 23, 24
3. नमिता सिंह, स्त्री–प्रश्न, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2017, पृष्ठ 51
4. नमिता सिंह, स्त्री–प्रश्न, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2017, पृष्ठ 56

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 108–110
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Babbar Akali : The Roaring Lions of India's Freedom Struggle

Dr. Harwinder Kaur
Assistant professor
Babbar Akali Memorial Khalsa College, Garhshankar

India's independence was not achieved through a single method or a single ideology. It was the outcome of many parallel struggles - peaceful, political, revolutionary, and militant. While non-violent movements shaped mass awakening, revolutionary groups gave the freedom struggle its sharp edge. Among these courageous forces, the Babbar Akalis occupy a special place. They were fearless patriots who believed that colonial oppression could not be ended by appeals alone and that freedom sometimes demanded armed resistance and supreme sacrifice.

The Babbar Akali movement emerged in Punjab during the early 1920s, a period charged with anger, grief, and disillusionment. Punjab had suffered immensely under British rule. Heavy recruitment during the First World War, economic exploitation, harsh taxation, and repressive laws created deep resentment among the people. The Jallianwala Bagh massacre of 1919 proved to be a turning point. It shattered faith in British justice and radicalised a generation of Indian youth. For many Sikh youths in Punjab, this massacre made it clear that colonial rule was sustained not by law but by violence.

In this climate of awakening and anger, a group of determined revolutionaries chose a path of uncompromising resistance. They called themselves Babbar Akalis, with the word Babbar meaning lion. The name itself symbolised fearlessness, pride, and refusal to bow before tyranny. These revolutionaries were deeply inspired by Sikh history and tradition. The sacrifices of Guru Arjan Dev Ji and Guru Tegh Bahadur Ji, and the militant spirit of Guru Gobind Singh Ji, shaped their worldview. To them, fighting injustice was not only a political duty but also a religious and moral obligation.

The Babbar Akalis differed from many contemporary movements in their approach. While the larger Akali movement focused on freeing gurdwaras through peaceful struggle, the Babbar Akalis believed that political slavery could not be ended without confronting British authority directly.

Influenced by the Ghadar movement and global revolutionary ideas, they rejected compromise and gradual reform. Their goal was clear and absolute - complete independence from British rule.

The organisation of the Babbar Akalis was secretive and disciplined. They operated in small groups, relying on mutual trust and strict codes of conduct. Meetings were held discreetly in villages, forests, and gurdwaras. Members trained themselves in the use of weapons, physical endurance, and guerrilla tactics. Yet, their struggle was not driven by blind violence. They followed a moral framework rooted in Sikh ethics. Innocent people were not to be harmed, betrayal was considered the greatest sin, and martyrdom was accepted as the highest honour.

Several courageous individuals gave leadership and direction to the movement. Kishan Singh Gargajj emerged as one of the most prominent figures, admired for his strategic thinking and unwavering commitment. Mota Singh was known for his boldness and organisational abilities, inspiring many young men to join the revolutionary cause. Karam Singh Daulatpur played a vital role in mobilising rural youth and spreading revolutionary awareness across Punjab.

Other dedicated Babbar Akalis included Sunder Singh Babbar, Harnam Singh, Santa Singh, Ishar Singh, Nand Singh, Gurbakhsh Singh, and Bagga Singh. Each of them contributed through planning, mobilisation, or direct action. Though many of their names remain absent from popular history books, their sacrifices were no less significant.

The activities of the Babbar Akalis were aimed at shaking the foundations of British authority in Punjab. They targeted officials known for oppression and those who collaborated with colonial rulers. Their actions were symbolic as well as strategic. They wanted to send a clear message that British power was not unchallengeable and that Indians were prepared to resist fearlessly. These revolutionary acts created anxiety within the colonial administration and inspired admiration among the masses.

The British government responded with severe repression. The Babbar Akalis were declared a criminal organisation, and special laws were enforced to crush the movement. Intelligence networks were expanded, mass arrests were carried out, and revolutionary tribunals replaced normal courts. Many Babbar Akalis were subjected to brutal interrogation and torture, yet very few revealed information about their comrades. Their silence under suffering became another form of resistance.

Executions and life imprisonments followed. Many Babbar Akalis faced the gallows with extraordinary courage, chanting Sikh slogans and embracing death without fear. Even British officials recorded their bravery and discipline in official documents. Though the movement was physically crushed by the mid-1920s, the spirit behind it could not be destroyed.

The contribution of the Babbar Akalis to India's freedom struggle was profound. They injected

revolutionary courage into the national movement and demonstrated that freedom was worth the ultimate sacrifice. Their actions influenced later revolutionaries, including Bhagat Singh, who admired the tradition of fearless resistance and martyrdom in Punjab. The Babbar Akalis also strengthened political consciousness among Sikh youth and reinforced the idea that resistance to injustice was a sacred duty.

Despite their role, the Babbar Akalis remain underrepresented in mainstream narratives of Indian independence. History often prefers safer stories of negotiation and reform, overlooking those who chose the dangerous path of armed resistance. However, India's freedom is incomplete without acknowledging the sacrifices of these revolutionaries. Their struggle did not oppose the larger freedom movement - it complemented it by adding urgency, courage, and moral intensity.

Remembering the Babbar Akalis today is not about promoting violence. It is about recognising courage, conviction, and sacrifice. They remind us that independence was not gifted by the British but won through suffering and resistance. Their lives continue to inspire the values of bravery, selflessness, and commitment to justice.

The Babbar Akalis were not defeated rebels. They were lions who roared against an empire and chose death over submission. Their voices may have been silenced by gallows and prisons, but their legacy lives on in the history of India's freedom struggle. They deserve remembrance, respect, and an honoured place in the national memory.

References :

1. Singh K. A History of the Sikhs. Vol. 2, 1839-2004. New Delhi: Oxford University Press; 2004.
2. Chandra B, Mukherjee M, Mukherjee A. India's Struggle for Independence, 1857-1947. New Delhi: Penguin Books; 2016.
3. Puri HK. Ghadar Movement: Ideology, Organisation and Strategy. Amritsar: Guru Nanak Dev University Press; 1983.
4. Grewal JS. The Sikhs of the Punjab. Cambridge: Cambridge University Press; 1998.
5. Singh F, editor. History of Punjab. Vol. 3. Patiala: Punjabi University; 1997.
6. Singh G. The Babbar Akali Movement. Patiala: Punjabi University; 1984.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 111–114
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

राजेन्द्र टोकी का काव्य–आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में

मोनिका
पीएच डी० शोधार्थी
हिन्दी विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंड़ीगढ़। पिन कोड–160014

वर्तमान समय को वैज्ञानिक युग कहा जाता है, क्योंकि विज्ञान और तकनीक का मानव जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ रहा है। आज के दौर में तकनीकी प्रगति ने मनुष्य के जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित किया है, जिसके परिणामस्वरूप जीवनशैली में निरंतर बदलाव आ रहे हैं। इन परिवर्तनों को हम आधुनिकता के रूप में समझते हैं। आधुनिकता का अर्थ केवल पुरानी परंपराओं से अलग होना नहीं है, बल्कि यह वर्तमान समय की नई सोच, नई परिस्थितियों और नई व्यवस्थाओं से जुड़ी हुई है। इसमें नवीन विचारधाराएँ और बदलती सामाजिक संरचनाएँ शामिल होती हैं। इसके अतिरिक्त, आधुनिकता का एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि यह नई परिस्थितियों से उत्पन्न समस्याओं को समझने और उनके समाधान खोजने की प्रक्रिया है। अर्थात, आधुनिकता केवल परिवर्तन का नाम नहीं, बल्कि उन परिवर्तनों के साथ सामंजस्य स्थापित करने और उनके अनुरूप समाधान विकसित करने की क्षमता भी है।

बीज शब्द – आधुनिकता, समाज, धर्म, राजनीति, संस्कृति।

साहित्य व आधुनिकता का घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्रत्येक युग के साहित्य में जो कुछ भी नया घटित होता है, वह उस युग के साहित्य में देखने को मिलता है, इसलिए किसी भी युग का साहित्य अपने समय में आधुनिक ही माना जाता है। प्रत्येक साहित्य में मानव जीवन के परिवेश को विभिन्न–विभिन्न विधाओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाता है। समकालीन कविता इन्हीं विधाओं में से एक है, जिसने आदिकाल से आधुनिक काल तक अनेक पड़ावों में से गुजरते हुए मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष को हमारे समक्ष रखा है। आधुनिक काल में प्रयोगवाद के बाद कविता में नये आयाम आए। समकालीन कविता इन्हीं आयामों में से एक है, जिसका हिन्दी साहित्य में 1960 के दशक में प्रवेश हुआ। समकालीन कवियों ने आम आदमी की पीड़ा व कुंठा को पाठकों के समक्ष रखा है। राजेन्द्र टोकी भी ऐसे ही समकालीन कवि हैं जिन्होंने अपने कविताओं व गजलों के माध्यम से मानव जीवन में आधुनिकता के सभी पहलुओं को दर्शाते हुए उन्हें सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक व सांस्कृतिक सन्दर्भों में चित्रित किया है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसके सभी काम समाज से जुड़े होते हैं, इसलिए उसने परिवार और समाज जैसी संस्थाएँ बनाई। शुरुआत में मनुष्य का जीवन बहुत आसान था, लेकिन जैसे–जैसे उसने विकास किया, समाज भी धीरे–धीरे जटिल होता गया। आज का आधुनिक समाज काफी कठिन और उलझा हुआ हो गया

है। इस बदलते समाज का असर व्यक्ति के जीवन पर भी पड़ा है। अब लोगों के अंदर घृणा, अकेलापन, कुंठा, स्वार्थ और संवेदनहीनता बढ़ गई है। व्यक्ति अक्सर अपने ही मन में संघर्ष करता रहता है और परेशान रहता है। आज इंसान इतना बदल गया है कि उसे दूसरों के दुख–दर्द का एहसास भी नहीं होता। वह अपने ही लोगों के बीच रहकर भी खुद को अकेला और अजनबी महसूस करता है। यही अकेलापन और परायापन धीरे–धीरे उसे अंदर से कमजोर बना देता है। इस स्थिति को राजेन्द्र टोकी ने अपनी कविता 'उसका कमरा' में बहुत अच्छे और सरल तरीके से बताया है–

"क्या यह उसका कमरा है
जिसने सारी उम्र तन्हाइयों में काटी?
अपनों में रहकर भी
अजनबीयत की धूल चाटी"?[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने स्पष्ट किया है कि किस प्रकार आधुनिक समाज में एक व्यक्ति चंद लम्हों की खुशियों के लिए उम्र भर अपनों से अपने ही घर में मानसिक पीड़ा को सहता हुए अजनबी बनकर जीता है।

समाज को सही तरीके से चलाने और उसे संगठित रखने में राजनीति की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। राजनीति में होने वाले बदलावों का असर सीधे समाज पर पड़ता है। लेकिन आज के आधुनिक समय में राजनीति का उद्देश्य बदल गया है। अब यह केवल सत्ता हासिल करने का साधन बनकर रह गई है। कई नेता सत्ता पाने के लिए देश, जनता और नैतिक मूल्यों तक को नजरअंदाज कर देते हैं। राजेन्द्र टोकी ने अपनी कविता 'सत्ता' में ऐसे राजनेताओं पर व्यंग्य करते हुए दिखाया है कि वे किस तरह अपने स्वार्थ के लिए हर चीज दाँव पर लगाने को तैयार रहते हैं। ऐसे राजनेताओं पर व्यंग्य करते हुए टोकी ने अपनी कविता में लिखा है–

"तुम्हारे लिए सत्ता एक हवस है
जिसकी प्यास बुझाने के लिए
तुम और तुम्हारे यार सम्बन्धी
आदमी के रक्त की एक-एक बूँद निचोड़ने की ललक में
उसे पूरा निगल जाते हैं।"[2]

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में कवि ने राजनीतिज्ञों के सत्ता में आने पर आम आदमी के होने वाले शोषण की और संकेत किया है। कवि ने सत्ता के दोहरे चरित्र और दोगलेपन को चित्रित करने के साथ–साथ व्यंग्य किया है कि राजनीति विसंगतियों ने व्यक्ति और समाज को किस कद्र विद्रूप कर दिया है।

धन मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरा करने का एक साधन होता है, लेकिन आज के समाज में यह सबसे महत्वपूर्ण बन गया है। अब लोगों के लिए पैसा ही सबसे बड़ा मानदंड बन गया है। कवि को इस बात की चिंता है कि जिस समाज में वह रह रहा है, वहाँ रिश्ते–नाते भी धन के आधार पर तय किए जाते हैं। यदि किसी व्यक्ति के पास पैसा है, तो लोग उसके साथ संबंध बनाए रखते हैं, लेकिन जैसे ही धन की कमी होती है, लोग उससे दूरी बना लेते हैं। इस कठोर सच्चाई को राजेन्द्र टोकी ने अपनी एक गजल में बहुत प्रभावशाली ढंग से व्यक्त किया है।

"सच्ची है ये धन दौलत
झूठे हैं सब रिश्ते-नाते।"[3]

कवि ने देश की आर्थिक स्थिति पर भी चिंता जताई है। आज के समय में आदर्शों और मूल्यों के साथ जीने का महत्व कम हो गया है। लोग सच्चाई और ईमानदारी से ज्यादा धन को महत्व देने लगे हैं। समाज में अमीर और गरीब के बीच की दूरी बढ़ती जा रही है। पूंजीपति वर्ग के पास इतना धन है कि वे हर तरह की सुविधाएँ और सुख–सुविधाएँ आसानी से प्राप्त कर लेते हैं, जबकि आम आदमी बेरोजगारी और गरीबी से जूझते हुए अपनी जिंदगी बिताता है। एक साधारण नौकरी पाने के लिए भी लोगों को बार–बार दफ्तरों के चक्कर लगाने पड़ते हैं। इसके साथ ही, देश में विकास के नाम पर केवल महंगाई बढ़ रही है। हर चीज की कीमत बढ़ती जा रही है, लेकिन इंसान की कीमत घटती जा रही है। इस स्थिति को कवि ने अपनी कविता 'कैसा है देश' में बड़े ही व्यंग्यपूर्ण ढंग से व्यक्त किया है।

"वैसे सब ठीक है
देश में तरक्की हो रही है,
हर साल चीजों के दाम बढ़ रहें हैं
बस आदमी ही इतना सस्ता हो गया है
कि कोई उसे 'लक्स टॉयलेट साबुन' के साथ
मुफ्त में मिलने वाले टूथ ब्रश के स्थान पर
लेने को तैयार नहीं।"[4]

समाज में धर्म का बहुत महत्वपूर्ण स्थान होता है, लेकिन आज के आधुनिक समय में धर्म का रूप बदल गया है। आधुनिकता के प्रभाव से धर्म भी प्रभावित हुआ है। आज धर्म कुछ पाखंडी लोगों के हाथों में पड़कर केवल दिखावा बनकर रह गया है। ये लोग धर्म का उपयोग अपने सुख–सुविधाओं और ऐश–आराम के लिए करते हैं। वे धर्म के नाम पर लोगों को धोखा देकर बिना मेहनत के पैसा कमाते हैं और आरामदायक जीवन जीते हैं। धर्म के नाम पर आज झगड़े और दंगे भी हो रहे हैं। लोग अपने धर्म के लिए एक–दूसरे से लड़ने–मारने को तैयार हो जाते हैं। मंदिर, मस्जिद और गुरुद्वारे जैसे पवित्र स्थान भी अब भ्रष्टाचार से प्रभावित हो गए हैं। कुछ लोग भगवान का नाम लेकर ही गलत काम करते हैं और अपने विरोधियों को खत्म करने की कोशिश करते हैं। ऐसी स्थिति में लोगों का विश्वास भगवान से भी कम होता जा रहा है। आज कोई भी राम जैसे आदर्शों का पालन नहीं करना चाहता, बल्कि लोगों में रावण जैसे गुण अधिक दिखाई देते हैं। चारों ओर पाखंड और दिखावे का माहौल फैल गया है, जिससे व्यक्ति का जीवन कठिन हो गया है। इसी स्थिति पर व्यंग्य करते हुए राजेन्द्र टोकी ने अपनी कविता 'आदमी होने से बेहतर' में व्यक्ति की पीड़ा को व्यक्त किया है–

"आदमी होने से बेहतर था
मैं कुछ भी होता
कम से कम
अपनी कुंठाओं और विकृतियों को
'ईश्वरीय वाणी' कहकर

उम्रभर तो न ढोता
सत्ता की सुरक्षा की हवस में
मन्दिर, मस्जिद, गुरूद्वारे और चर्च का
व्यापार न करता।"[5]

आधुनिक समाज में धर्म के साथ–साथ भारतीय संस्कृति भी प्रभावित हुई है। आज लोग अपनी संस्कृति को छोड़ पश्चिमी संस्कृति का अन्धानुकरण कर रहें हैं। यहाँ तक कि अपनी भाषा से भी लोगों को लगाव नहीं है। कवि ने अपनी गजलों में व्यंग्य करते हुए कहा है–

"लूट, चोरी, फसाद, चालाकी
मेरा भारत महान है प्यारे
इस कद्र आ गई है अंग्रेजी
भूले अपनी जुबान हैं प्यारे।"[6]

इस प्रकार समकालीन कवि राजेन्द्र टोकी की प्रासंगिक असंगतियों से उद्‌भूत ये कवितायें दैनिक व्यथाओं की कविताएँ हैं, जो हमें आधुनिक परिवेश से अवगत कराती हैं। आज समाज में व्यक्ति जिस स्थिति में अपना जीवन जी रहा है उस जीवन, पीड़ा, कुंठा, निराशा का चित्रण भी कवि ने सफलतापूर्वक किया है। कवि ने अपनी गजलों व कविताओं में व्यक्ति के जीवन को आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक संदर्भों में चित्रित किया है जिसमें वे एक समकालीन कवि के तौर पर काफी हद तक सफल रहे हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. टोकी, राजेन्द्र, आवाजों के शोर में, 2014, दिल्ली, सभ्या प्रकाशन, प्रथम संस्करण–2014, पृष्ठ सं.–27
2. टोकी, राजेन्द्र, सबके साथ चलते हुए भी, हिसार, अमन प्रकाशन, प्रथम संस्करण–1996, पृष्ठ सं.–30
3. टोकी, राजेन्द्र, हर चिराग सूरज है, हिसार, अमन प्रकाशन, प्रथम संस्करण–2018, पृष्ठ सं.–123
4. टोकी, राजेन्द्र, आवाजों के शोर में, दिल्ली, सभ्या प्रकाशन, प्रथम संस्करण–2014, पृष्ठ सं.–126
5. टोकी, राजेन्द्र, सबके साथ चलते हुए भी, हिसार, अमन प्रकाशन, प्रथम संस्करण–1996, पृष्ठ सं.–83
6. टोकी, राजेन्द्र, हर चिराग सूरज है, हिसार, अमन प्रकाशन, प्रथम संस्करण–2018, पृष्ठ सं.–87

मोबाइल नं.–6280624218

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 115–118
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

The Architects of the Universe : All Components of the CMM1 Hypothesis

Dr. C. M. Mane (Charusheel Mane)
Independent Researcher, Author, Thinker
Hingoli, Maharashtra, India

Abstract -

This research article presents the complete CMM1 hypothesis (Cosmic Dark Matter + Matter + Microbes = One), establishing microbes as the true architects of the universe. Microbes reside dormant in cosmic dark matter reservoirs, form bidirectional signaling loops between Prithvi (Earth's biosphere) and Nova (stellar precursors/plasma), stabilize the solar oxygen cycle, and make everything from human consciousness to galaxies alive and interconnected. No component can be restricted or stopped — they operate as one unified force. Death or inert matter is merely their transformation. The hypothesis reframes NASA's astrobiology questions, quantum biology, and cosmic evolution through microbial agency. It provides a foundation for future interdisciplinary research, including biosignature detection, planetary protection, and microbial engineering of cosmic systems.

Keywords : CMM1 hypothesis, architects of the universe, microbes, cosmic dark matter, oxygen cycle, living cosmos, NASA astrobiology, microbial signaling

1. Introduction :

The universe has long been viewed as a grand design orchestrated by a supreme architect — from ancient myths to Freemasonry's "Great Architect of the Universe." Modern cosmology attributes structure to physical laws, dark matter, and dark energy. Yet the CMM1 hypothesis proposes a radical shift: the true architects are microbes — the microscopic engineers that connect the smallest biological scales to the largest cosmic structures.

Published in my book The Architects of the Universe (2025, English edition 2026), CMM1 asserts that nothing in the cosmos is dead or inert. All matter, energy, and life are expressions of microbial activity. The three core components — Cosmic Dark Matter, Matter, and Microbes — are

inseparable and unstoppable. No external force can restrict or halt them; they form a self-sustaining, unified whole. This article details each component, their interactions, and implications for future research.

2 The Three Core Components of CMM1

Component 1 : Cosmic Dark Matter

Cosmic dark matter constitutes approximately 27% of the universe's mass-energy content. It is invisible, non-luminous, and interacts primarily through gravity, holding galaxies together and shaping cosmic web structures. In CMM1, dark matter serves as the universal dormant reservoir for microbes. Microbes exist in a dormant (spore-like) state within dark matter halos, protected from extreme conditions (radiation, temperature, vacuum). Under favorable cosmic triggers — such as gravitational perturbations or energy influxes — these dormant networks activate, seeding life and structure. JWST observations of early quenched galaxies (rapid star formation shutdown) support this: oxygen depletion or microbial dormancy failure leads to cosmic "silence." Dark matter is not passive scaffolding — it is a living archive, waiting to architect new realities.

Component 2 : Matter (Visible and Energetic)

Matter includes baryonic matter (stars, planets, gas, dust) and energetic phenomena (plasma, light, gravity). CMM1 views matter as the manifest expression of microbial engineering. Microbes shape and sustain it across scales :

- **On Earth :** Lithotrophic microbes mineralize rock, actinomycetes lignify plant stems, rhizobia fix nitrogen in roots.
- **In stellar environments :** Microbes transport oxygen via solar wind, stabilizing plasma and enabling sustained nuclear burning.
- **In galaxies :** Microbial-like networks (quorum sensing analogs) influence star formation and quenching.

Inert or "dead" matter is not final — it is a temporary conversion state. When microbes cycle through decay, dormancy, or transformation, matter renews. No restriction exists; microbial agency permeates every particle.

Component 3 : Microbes (The Active Architects)

Microbes are the dynamic, living component — the true executors of cosmic design. They number in trillions on Earth alone and extend into cosmic voids.

Key roles :

- **Terrestrial scale :** Gut microbes (Lactobacillus, Bifidobacterium) produce SCFAs, activate the vagus nerve, synchronize heartbeat, muscle movement, and mental states. Depression emerges as

"microbial silence"; anxiety as "overdrive."

- **Planetary scale :** Extremophiles survive radiation, vacuum, and perchlorates (Mars analogs). They form clouds, influence weather, and cycle gases.
- **Cosmic scale :** Microbes mediate the oxygen cycle — transporting and stabilizing oxygen in stellar plasma. Disruption causes long-wavelength extinction signals (JWST quenched galaxies). Quorum sensing acts as universal signaling; quantum coherence enables non-local effects.

Microbes are not subordinate — they are the conductor. No force can stop them; they adapt, persist, and transform.

3. Integration : How the Components Form "One"

- CMM1 is not additive but unified.
- Dark matter stores dormant microbes.
- Matter is the canvas microbes shape.
- Microbes activate, signal, and sustain both.

The Prithvi–Nova loop exemplifies this: Earth's biosphere sends signals (oxygen, organics), stellar precursors feedback (solar wind), mediated by dark matter reservoirs. The Sun burns only as long as microbes stabilize plasma. Pollution, radiation, or dormancy failure disrupts the loop — but microbes endure through adaptation.

Quantum biology (coherence, tunneling) and extremophile resilience confirm this unity. No restriction applies — the system is self-regulating and eternal.

4. Evidence and Testable Predictions :

- **JWST quenched galaxies :** Oxygen loss from microbial disruption.
- **Solar wind organics :** Microbial traces.
- **Europa/Titan :** Biosignatures from oxygen cycles.
- **Future :** Microbial-based bio-factories could stabilize planetary climates or terraform worlds.

5. Implications and Future Support :

- **CMM1 reframes astrobiology :** life originates from dormant microbial activation, persists through extremophile mechanisms, and distributes via cosmic signaling. It supports future research in:

Biosignature detection (JWST, Habitable Worlds Observatory).

Microbial protection against pollution/radiation.

Interdisciplinary studies linking microbiology, cosmology, and quantum biology.

No one can restrict or stop CMM1's components — they are the fabric of reality. This hypothesis invites further publications, experiments, and global dialogue.

6. Conclusion :

The architects of the universe are microbes — unified in CMM1. Cosmic dark matter, matter, and microbes form one unstoppable whole. The cosmos is alive, sobbing, transforming, and eternal through them. Protecting Earth's microbial guardians safeguards the cosmic symphony. Future generations will build upon this vision.

References (selected recent citations)

1. NASA/NExSS Extraterrestrial Photosynthesis Workshop (2026). Agenda. https://nexss.info/extraterrestrial-photosynthesis-workshop/
2. Tarantino, E., et al. (2026). JWST finds early-universe dust production. Astrobiology.
3. García Bernete, I., et al. (2026). JWST uncovers organic chemistry in ULIRGs. Nature Astronomy. DOI: 10.1038/s41550-025-02750-0
4. Helton, J., et al. (2025). JWST/CEERS on quenched galaxies. Astronomy & Astrophysics. DOI: 10.1051/0004-6361/202347465.
5. Aulitto, M., et al. (2025). Extremophiles: Current perspectives. Life, 15(3), 434.
6. Ilikkan, Ö. K. (2025). Extremophiles and astrobiology. International Journal of Astrobiology, 24, e27.
7. Coleine, C., et al. (2025). Extremophile microbiomes in Mars terraforming. Communications Biology, 8, 1588.
8. dos Santos, A., et al. (2025). Survival of Rhinocladiella in Mars-like conditions. npj Microgravity, 11, 18.

Author Details -

Name: Dr. C. M. Mane

Designation: Independent Researcher, Author

Address: Hingoli, Maharashtra, India

Email: research@cmmane.com

Mobile: 9422663066

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 119–125
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE
PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

A STUDY OF RELATIONSHIP BETWEEN EMOTIONAL INTELLIGENCE AND ETHICAL USE OF KNOWLEDGE AMONG SECONDARY SCHOOL STUDENTS

Dr. Arti Aarya, Research Guide
Professor, BCG Shiksha Mahavidhyalaya
Dewas, Madhya Pradesh, India
Mr. Mithun Vishwas, Research Scholar
BCG Shiksha Mahavidhyalaya, Dewas
Affiliated to Vikram University, Ujjain (M.P.)

ABSTRACT

In the modern educational landscape, the emphasis has shifted from mere academic achievement to the holistic development of students, including emotional and ethical dimensions. Emotional intelligence (EI) plays a crucial role in shaping students' behaviour, decision-making abilities, and interpersonal relationships. Simultaneously, ethical use of knowledge has become increasingly important due to the widespread availability of digital information and rising concerns regarding academic dishonesty.

This study aims to examine the relationship between emotional intelligence and ethical use of knowledge among secondary school students. The research is based on the assumption that emotionally intelligent individuals are more likely to demonstrate ethical behaviour, responsibility, and integrity in academic and social contexts.

A descriptive and correlational research design was adopted. A sample of 250 secondary school students was selected using random sampling techniques. Standardized tools were used to measure emotional intelligence and ethical use of knowledge. Data were analysed using statistical techniques such as mean and Pearson's correlation coefficient.

The findings revealed a moderate positive correlation between emotional intelligence and

ethical use of knowledge, indicating that students with higher emotional intelligence tend to exhibit more ethical behaviour. The study highlights the importance of integrating emotional and ethical education in school curricula.

The research provides valuable insights for educators, policymakers, and parents to foster emotionally intelligent and ethically responsible individuals.

KEYWORDS :

Emotional Intelligence, Ethical Use of Knowledge, Secondary School Students, Moral Development, Academic Ethics, Adolescents, Decision Making, Emotional Regulation, Ethical Behaviour, Education, Integrity, Digital Ethics

1. INTRODUCTION :

In the rapidly evolving world of education, the focus is no longer limited to academic excellence alone. There is a growing recognition of the importance of emotional and ethical development in shaping responsible and socially aware individuals. Emotional intelligence and ethical behaviour are two key components that significantly influence students' overall personality and conduct.

Emotional intelligence refers to the ability to recognize, understand, manage, and regulate one's own emotions as well as those of others. It includes skills such as self-awareness, empathy, emotional regulation, and social competence. Students with high emotional intelligence are better equipped to handle stress, build relationships, and make thoughtful decisions.

On the other hand, ethical use of knowledge involves the responsible and honest application of acquired knowledge. It includes maintaining academic integrity, avoiding plagiarism, respecting intellectual property, and using information for constructive purposes. In the digital age, where information is easily accessible, the ethical use of knowledge has become a major concern.

Secondary school students are at a crucial stage of development where their values, attitudes, and behaviours are being shaped. During this phase, they are exposed to various academic pressures and technological influences, making it essential to understand how emotional intelligence impacts their ethical decision-making.

The relationship between emotional intelligence and ethical behaviour can be explained through psychological and educational theories. Students with higher emotional intelligence tend to exhibit empathy, self-control, and moral reasoning, which are essential for ethical behavior. Conversely, low emotional intelligence may lead to impulsive actions and unethical practices.

This study aims to explore the relationship between emotional intelligence and ethical use of knowledge among secondary school students, providing insights into how emotional competencies influence ethical conduct.

2. REVIEW OF LITERATURE

2.1 Emotional Intelligence in Education :

Goleman (1995) emphasized that emotional intelligence is as important as cognitive intelligence in determining success in life. Studies have shown that emotionally intelligent students perform better academically and socially.

2.2 Ethical Use of Knowledge :

Kohlberg (1981) highlighted that moral development progresses through stages, influencing ethical decision-making. Ethical use of knowledge is essential in maintaining academic integrity and responsible behaviour.

2.3 Relationship between Emotional Intelligence and Ethics :

Research indicates a strong link between emotional intelligence and ethical behaviour. Mayer & Salovey (1997) found that individuals with higher emotional intelligence demonstrate better moral judgment.

2.4 Emotional Intelligence and Decision-Making :

Narvaez & Lapsley (2009) suggested that emotional intelligence enhances ethical decision-making by promoting empathy and self-regulation.

2.5 Gaps in Research :

While several studies explore emotional intelligence and ethics separately, limited research focuses on their relationship among secondary school students, highlighting the need for this study.

3. OBJECTIVES OF THE STUDY :

- To assess emotional intelligence among secondary school students.
- To evaluate ethical use of knowledge among students.
- To examine the relationship between emotional intelligence and ethical behavior.
- To compare emotional intelligence based on gender differences.
- To analyze the impact of emotional intelligence on ethical decision-making.

4. HYPOTHESIS :

H1 : There is **no statistically significant relationship** between emotional intelligence and ethical use of knowledge among secondary school students.

H2 : There is a **statistically significant positive relationship** between emotional intelligence and ethical use of knowledge among secondary school students

5. RESEARCH METHODOLOGY

5.1 Research Approach :

The present study adopts a quantitative research approach, which focuses on the collection

and analysis of numerical data to understand patterns, relationships, and trends. This approach is considered appropriate as the study aims to measure the levels of emotional intelligence and ethical use of knowledge and to determine the relationship between these variables using statistical techniques. Quantitative methods ensure objectivity, reliability, and generalizability of findings. The use of structured tools and statistical analysis helps in drawing precise and evidence-based conclusions.

5.2 Research Design :

The study employs a descriptive and correlational research design.

The descriptive design is used to describe the existing levels of emotional intelligence and ethical use of knowledge among secondary school students.

The correlational design is applied to examine the relationship between the two variables without manipulating them.

This design is suitable because the researcher aims to explore the natural association between emotional intelligence and ethical behavior rather than establishing a cause-and-effect relationship.

5.3 Population :

The population of the study comprises all secondary school students studying in recognized schools. This includes students from different educational boards, socio-economic backgrounds, and academic streams. The population represents adolescents who are at a critical stage of emotional and moral development, making them appropriate for studying the relationship between emotional intelligence and ethical use of knowledge.

5.4 Sample :

A sample of 250 secondary school students was selected for the study using the random sampling technique. Random sampling ensures that each member of the population has an equal chance of being selected, thereby reducing bias and increasing the representativeness of the sample. The sample includes both male and female students, ensuring diversity and enhancing the generalizability of the findings.

5.5 Variables :

The study includes the following variables :

- **Independent Variable : Emotional Intelligence**

This variable represents the emotional competencies of students, including self-awareness, empathy, emotional regulation, and social skills.

- **Dependent Variable : Ethical Use of Knowledge**

This refers to the responsible and moral application of knowledge, including academic honesty, avoidance of plagiarism, and ethical decision-making.

- **Demographic Variables : Gender and Age**

These variables are considered to examine possible differences in emotional intelligence and ethical behavior across different groups.

5.6 Tools for Data Collection :

Two standardized tools were used for data collection :

- **Emotional Intelligence Scale**

This tool measures various dimensions of emotional intelligence such as self-awareness, emotional regulation, motivation, empathy, and social skills. It consists of structured statements with a Likert scale response format.

- **Ethical Use of Knowledge Questionnaire**

This questionnaire assesses students' attitudes and behaviours related to ethical practices, including academic honesty, proper use of information, and respect for intellectual property.

Both tools were selected based on their validity, reliability, and suitability for secondary school students.

5.7 Data Collection Procedure :

The data collection process was carried out systematically in the following steps :

- Permission was obtained from school authorities to conduct the study.
- The purpose of the research was clearly explained to the participants.
- The questionnaires were distributed to the selected students in a controlled classroom environment.
- Students were instructed to respond honestly and independently.
- Confidentiality and anonymity of responses were assured to avoid bias.
- Completed questionnaires were collected and carefully organized for analysis.
- This procedure ensured accuracy, reliability, and ethical conduct in data collection.

5.8 Data Analysis :

The collected data were analysed using appropriate statistical techniques :

- **Mean :** Used to determine the average level of emotional intelligence and ethical use of knowledge among students.
- **Standard Deviation :** Used to measure the variability or dispersion of scores.
- **Pearson's Correlation Coefficient (r) :** Used to examine the strength and direction of the relationship between emotional intelligence and ethical use of knowledge.

These statistical methods helped in interpreting the data objectively and testing the hypothesis effectively.

5.9 Delimitations :

The study is subject to the following delimitations :

The research is limited to selected secondary schools, which may restrict the generalizability of the findings.

The sample size is confined to 250 students only.

The study relies on self-reported data, which may be influenced by students' honesty and perception.

Only emotional intelligence and ethical use of knowledge are considered, excluding other possible influencing factors such as family background, peer influence, and school environment.

Despite these limitations, the study provides meaningful insights into the relationship between emotional intelligence and ethical behaviour.

6. FINDINGS :

- Students show varying levels of emotional intelligence.
- Ethical awareness differs among students.
- A moderate positive correlation (r = 0.57) exists.
- Students with higher EI behave more ethically.
- Emotional intelligence influences decision-making and responsibility.

7. RESULT AND DISCUSSION :

7.1 Emotional Intelligence Levels

Students with higher emotional intelligence demonstrate better self-control and empathy.

7.2 Ethical Use of Knowledge

Ethically aware students avoid plagiarism and misuse of information.

7.3 Relationship between EI and Ethics

The correlation (r = 0.57) indicates a meaningful relationship.

Discussion :

Emotionally intelligent students :

- Show empathy
- Make responsible decisions
- Maintain academic integrity

This confirms that emotional intelligence plays a crucial role in ethical development.

8. EDUCATIONAL IMPLICATIONS :

8.1 Integration in Curriculum

Schools should include emotional intelligence training.

8.2 Ethical Awareness Programs

Workshops on academic honesty should be conducted.

8.3 Teacher's Role

Teachers should model ethical behaviour.

8.4 Parental Guidance

Parents should promote emotional and moral values.

8.5 Digital Ethics Education

Students must learn responsible use of digital information.

9. CONCLUSION :

The study concludes that emotional intelligence significantly influences ethical use of knowledge among secondary school students. A moderate positive relationship indicates that emotionally intelligent students are more likely to behave ethically.

Educational institutions must focus on developing both emotional and ethical competencies to prepare responsible citizens.

10. REFERENCES :

- Goleman, D. (1995). *Emotional Intelligence*.
- Mayer, J. D., & Salovey, P. (1997). Emotional Development.
- Kohlberg, L. (1981). *Moral Development*.
- Narvaez, D., & Lapsley, D. (2009). Moral Identity.
- UNESCO (2015). *Education Report*.
- NCERT (2020). *Ethics in Education*.
- Sharma, R. (2018). Emotional Intelligence Study.

sinha5272@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834 Website : www.ginajournal.com
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 126-136

Ancient Practice Of Rainwater Harvesting With Special Reference To Jaipur City

Aastha Sharma
Research Scholar. MDS University, Ajmer

Abstract :

This paper highlights the ancient efforts of rainwater harvesting in Rajasthan, particularly in the forts of Jaipur – Nahargarh Fort, Jaigarh Fort and Amer Fort and so forth. The findings of this study states that human civilisation have practiced rainwater harvesting since more than four thousand years. In the ancient days, due to strategic and security reason, settlement evolved in the ridges and hills also. However, managing the water required for their daily use was the major challenge those days. Even now the managing water is challenge, even when the world is technologically advanced. Ancient civilization developed the various methods of rainwater harvesting and its storage. Conservation of rainwater ranged from household level to the community of large settlements. Such endeavours of those rulers for managing the needed water from rainwater are the engineering marvel of ancient time. Rajasthan has a tradition of building and maintaining rainwater harvesting structures such as johad, kuis, and kunds. Jaipur has only 600 ml of annual precipitation and area is dry. Rulers constructed drainage system from all parts of forts and catchment area with good drainage system and several big water tanks to store the water sufficient for whole the year and surplus for back up. Traditionally, these rainwater harvesting structures supported life in this water stressed region, and were well supported in turn by a system of community ownership. This paper tries to study the water crisis of current era with the assistance of traditional water conservation methods.

Keywords — Water, Conservation, Rajasthan, harvesting, systems, rain

Introduction :

People in the arid region show deep reverence for any natural water source because water is an extremely limited commodity in this region. Natural water sources now serve as sacred sites for religious worship. Traditionally Rajasthan people separate their entire province into two sections:

those with palar water and those with wakar water. Palar water represents rainwater and functions as the most pure water source because tanks can safely store it for three to five years. Groundwater emerging naturally from beneath the earth carries minerals making it wakar water (Mehta, et al., 1970). The cultivation methods and planting schedules differ when farmers use rainwater (palar) instead of groundwater (wakar). Rajasthan utilizes different traditional water resource systems such as nadi, talab, johad, bandha, sagar, samanad and sarovar etc. Each water system within these categories stands independently as a complete operational system.

1. Stepwells (Baoris) and Wells :

- Rajasthan relied heavily on deep wells and stepwells as critical infrastructure for water storage and conservation methods.
- The traditional water storage structures known as "Baoris" or "Baolis" functioned as stepwells to maintain water accessibility throughout dry seasons.
- Technological sophistication marked the architectural and engineering techniques employed during these constructions..

2. Tanks and Reservoirs (Johads and Sarovars) :

- The traditional water storage system Johads collects rainwater while simultaneously recharging the groundwater aquifers. Small check dams constructed upon streams served as one of the traditional water harvesting structures.
- The storage of rainwater for water management purposes was achieved through large built reservoirs which served as Sarovars..

3. Kunds and Tanks :

- Kunds represent underground water storage facilities which typically maintain circular structures. These structures served to retain water that fell as rainfall.
- The approach worked most effectively in regions with fast evaporation of surface water because of high temperatures..

4. Anicuts and Check Dams :

- Anicuts were small dams built across streams to divert water into fields or ponds, preventing the water from flowing away and creating more water storage options.
- Check Dams: These are smaller dams built across streams or rivers to slow down water flow, recharge groundwater, and maintain a consistent water supply.

5. Water Channels (Nadi or Nadiya) :

- Nadis were ancient irrigation channels that helped distribute water from a primary source, like a river or reservoir, to agricultural fields.

- These channels played a key role in agriculture by ensuring an even supply of water to vast areas.

6. Desert Irrigation Systems (Chhatris and Jhalaras) :

- **Chhatris :** Water reservoirs with a cover (roof) or canopy, often built near royal palaces or temples for water storage.
- **Jhalaras :** Large stepped water tanks, often used for ritualistic purposes and storing water for communities.

7. Water Management in Forts and Palaces :

Many forts and palaces in Rajasthan had sophisticated water harvesting and management systems. For instance, the Amer Fort in Jaipur had an intricate system of wells, tanks, and water channels.

Famous Examples :

- Rani Ki Vav (Rani Ki Vav, Patan), although located in Gujarat, is a prime example of the stepwell design that influenced Rajasthan's architectural heritage.
- **The Stepwell in Abhaneri (known as Chand Baori) :** This is one of the largest and most famous stepwells in Rajasthan. It has 13 stories and over 3,500 steps, making it a remarkable feat of engineering and design.
- **The Panna Meena Ka Kund in Jaipur :** An ancient stepwell with intricate steps that lead to the water. It's part of a larger water conservation system and is renowned for its symmetry.
- **The Wells of Pushkar :** Pushkar, a significant pilgrimage town, has several wells that are important for its religious significance. These wells are also vital for providing water to the surrounding communities.
- **The Wells of Jodhpur:** Jodhpur has several ancient wells that continue to serve the city and surrounding areas.

Methodology :

The aims and objective of the study, design of the study, collection of data and interpretation of data have been discussed :

2.1. Aim and Objective of the Study

The paper aims to experience and develop understanding regarding the traditional rain water harvesting methods at rural rajasthan and specially heritage sites of Jaipur.

The objectives of the study are :

- To understand the water harvesting techniques and systems at ancient forts
- To understand the difficulties faced in rural and urban rajasthan.

- To find possible solution from the methods used traditionally for the modern problems of water scarcity

The proposed study is focused to identify and attempt to find solutions for water scarcity and recommendations for making the traditional practices viable in todays circumstances.

2.2 Methodology adopted for Study :

The methodology of the study involves mainly collection of primary data and also problem identification and generation of solution for the same. Six important historic sites/structures were selected viz., Jaigarh Fort, Amber Fort, Nahargarh Fort, Jal Mahal, Panna Meena Ka Kund and Galta Ji Temple.

2.3 Design of the study :

This research uses integrated methods to gather accurate data and therefore relies on exploratory research design. The study relies on data sources that combine literature research with survey methods and interview techniques to gather data needed for this investigation. A study examines the ancient rainwater harvesting approaches used at six historical locations in Jaipur to guide contemporary projects implementing effective water harvesting designs in residential and colonial development. This study examines historical architectural structures which succeeded without modern rigid technical interventions.

2.4 Collection of Data :

Both Primary and Secondary sources were used in the study :

2.4.1 Primary Sources :

- **Survey :** An in-depth site examination was conducted for this study to understand the water harvesting methods across different locations while investigating their relevance to today's water scarcity situation. The research relied significantly on the survey data.
- **Questionnaire :** A small set of questions were put together in form of questionnaire to be asked from the residents nearby sites for an easy access to the challenges faced in the site areas.
- **Interview :** The research required interviews with heritage site specialists who provided information about site operations along with historical background and modern situation changes.

Schedule : the interview was taken over the Telephonic conversation as per respondent’s priority.

2.4.2 Secondary Sources

- Government data;
- Published Materials

2.5 Analyses and Interpretation of Data :

The analysis of subjectively collected data from essential and optional sources was enhanced

with outer and inward analysis procedures. Using qualitative and quantitative analysis provided the best possible study method.

3.1 Nahargarh Fort :

Figure 1: Google images

One critical element of Nahargarh fort consists of its extensive water systems. The construction took place during the reign of Sawai Jai Singh (1698–1740) in 1734. Approximately 6 km of land surrounding the fort exists as the water storage area for Nahargarh. Drainage systems and aqueducts run throughout both areas inside and outside the fort while six major catchment basins connect through small canal channels. The water from precipitation moves through minimal watercourses that extend from mountain heights. The canals utilize gravel with both sloping and rolling characteristics in their construction. The constructors designed these waterways to have both a sloping and undulating surface. The water structure complex of Nahargarh contains "Kund," a small step well and the two bigger ones named "Bawri." The catchment area of neighboring hills serves as the water source for the large step wells. The fort complex supplies its rainwater accumulation to the "Kund."

3.2 Jaigarh Fort :

The rainwater catchment territory of Jaigarh Fort reaches 4 kilometers in distance from its fortifications. The fortress incorporates drainage channels together with small canals and their connected serial systems that operate within and outside its boundaries. The channels direct rainwater into stucco channels or small canals that feed into the main water storage facility of the fortress. Small rain-collecting channels managed to transport rainwater toward the hillside. The fort obtained water independence through its system of collecting rainwater that was directed through stony channels into storage tanks. Silt traps exist for the main objective of preventing both sediment and particles from floating above. Jaigarh produced five massive tanks. The builders covered four water structures to halt evaporation and protect against germ and algae growth. Jaigarh features its largest water reservoir tank which spans 158 feet with 138-foot width and 40-foot depth as it stores 6,000,000 gallons

(Rima, 2006).

Figure 2 : Google images

3.3 Two different water sources exist within the structure of Amber Fort.

i. The water supply at the eastern side of the palace begins at Maota Lake where collected rainwater in the palace fuels an underground water reservoir.

ii. The storage capacity of Man Singh Mahal ka Tanka reaches 200 tons combined with 3 liters of fresh water volume (Shrestha, 2019). Two key water sources exist at Amber Fort because the six steps deliver water from Maota Lake through the palace system. Every stage of the operation elevates water before transferring it to reserved storage in water tanks. Gravity is overcome using Persian wheels that operate at every elevation for water lifting functions.

Figure 3 : Google images

3.1 Jal Mahal : Mansagar Lake (Mansagar Lake) exists as an artificial water reservoir. The builders constructed this site in proximity to the Darbhawati River. Sewage running through the Walled City

of Jaipur was sent into the lake because both recreational uses of the water body and the palace's residents had permanently left.

3.2 Panna Meena Ka Kund : The square stepped well Panna Meena ka Kund features four staircases around it while the north wall presents a private room. Workers at Amer collected water from the location which became the primary water source for multiple temples situated in the area.

3.3 Galta kund : Devotees from across the state visit the religious site of Galta kund which is nestled in Aravalli Hills for their sacred bathing rituals. Water that trickles down from the mountain acts as the primary water reservoir supporting the Kund. Galtaji features seven kunds among its watery attractions.

Site	Year	RWH Systems	Total Water Capacity	Present Status (condition)	Issues	Water Source
Nahargarh	1737	3 Stepwell 1 Tank	~100Million L	Good	• No natural or artificial supply of Water • Less Water	Rain
Jaigarh fort	1726	5 tanks	~25 Million Gallon	Need Improvement	Need cleaning of present water	Rain
Panna Meena ka Kund	1500's	1 Stepwell	~50,000 L	Good	Now only used as Tourist Spot	Tanker Rain
Site	Year	RWH Systems	Total Water Capacity	Present Status (condition)	Issues	Water Source
Amer Fort	1592	2 Tank	~300 million L	Good	• Artificial supply of Water • Less Water	Rain + Tankers
Galta Kund	1700's	7 tanks	~50,000L	Need Improvement	Need cleaning of present water and development of route infrastructure	Rain
Jal Mahal	1500's	1 lake	~20-30,000	Recently Restored	eutrophication	Tanker Rain

Abhaneri Vav (Step Well) – Rajasthan :

The Stepwell in Abhaneri (known as Chand Baori) :

This is one of the largest and most famous stepwells in Rajasthan. It was constructed in the eighth century. It has 13 stories and over 3,500 steps, and descend up to 100 feet below the surface. making it a remarkable feat of engineering and design (Gupta & Agarwal, 2015).

Figure 4 : Google images

Rural Water System

Toba: A water harvesting system called the toba shows technical similarities with a nadi. Historically the toba system served as a method of water collection in arid areas during dry seasons. Locally people call these ground depressions Toba. The selected geographic location encompasses a dense compacted low-porous earth formation. The specific location included both depression traits and natural catchment features. In a good catchment area with no natural depression, an artificial depression was made. In addition to providing water for human and livestock consumption, the grass that grows around tobas creates pasture areas for livestock grazing. The tobas serve as pastureland for grazing livestock throughout the area. This traditional practice enabled both water management and grass use developments.The various villages of cattle breeders owned between five and six tobas based on their specific grazing pressures. The managers of the tobas extended their protected areas while also restricting human and animal activities. People and animals were prohibited from harming these catchment areas. Community members dug out the central part of Tobas deeper to minimize water loss through evaporation. Water storage under this system operated through concentrated tanks while loss prevention occurred through evaporation minimization.

- **Kunds :** In the sandier, tracts, the inhabitants of the Residents of Thar Desert gained innovative skills to harvest water through kunds and kundis. The practice of rainwater harvesting exists under the names kunds or kundis. the People in this area refer to covered underground tanks through their local name. Drinking water formed the primary purpose that led to the creation of this system. Usually constructed with native materials, Western arid regions contained more of these kunds throughout their land. The available groundwater resources span from slightly affected by salt to heavily impacted by salt contamination. The utilization of kunds during such times delivered readily accessible water which was clean and sweet.

- **Kui and Dakeiyam :** Kuis reveal another aspect of the ingenuity of the local people of western rajasthan. The people of western Rajasthan built dug wells which they named Kuis or beris alongside tank reservoirs(Saxena,2017). Local people constructed beris adjacent to tanks for collecting the seeping water from the tanks. In this way, People managed water supply at its lowest possible level. The typical depth of these beris measured between 10-12 meters. The opening of these structures received planks of wood for their closure system. This local knowledge demonstrated how well it could assist in resource management. The local population in western Rajasthan found effective methods to achieve maximum water resource management. Emergency water sources referred to as dakeriyan locally indicate this water management approach. Deep pits located in the ground were employed as dakeriyan to capture water seepage. People constructed shallow wells in harvested fields to impound rainwater for agriculture in their kharif farming season.
- **Khadin :** People of Paliwal Brahmin descent established the system of Khadins which locals referred to as dhoras . Paliwal Brahmins from Jaisalmer developed this system. An extensive distribution of Khadins extends throughout the districts that neighbor Jaisalmer, Jodhpur, Barmer and Bikaner. A Khadin is an earthen wall known as a Khadin runs across the ground's slope .These water conservation structures allow maximum rainwater retention runoff within the agricultural field. The lower sides of these khadins reach a height of 3.5 m. A farmland exhibits three open contours through its borders so water can flow in from all directions. The structure allows water from the surrounding catchment area to enter through an open side area. The extended length of embankment serves multiple purposes. Using proper measures will enhance the saturation level of submerged areas while avoiding water damage. The combined effect of monsoon runoff prevention and topsoil retention emerges from the construction of this feature. The combination of soil and manure topsoil remains protected by this structure. A khadins system establishes its presence within particular locations.The suitable development sites must include two fundamental natural features.

1. An upstream drainage area comprising shallow, gravelly or rocky areas with a high runoff potential and
2. An area that consists of both a flood plain and a gently sloping plain section Soils at this location meet agricultural requirements for crop cultivation.

The floodplain serves as khadin area while the earthen embankment functions as khadin bund. The containment structure used for khadins is called khadin bun.

Results and Conclusion :

Observing wastewater treatment systems and water tanks inside fortresses is possible at Jaipur Fort in particular. Five water tanks are part of Jaigrah Fort alongside many wide water channels and

the largest water storage tank can hold 6 million gallons. A diversion channel built within the Aravalli watershed carried water supply from the watershed to Jaigarh Fort. The water collection systems of Amer and Nahargarh Forts include designs for water reservoirs. A program to reinstate local water harvesting techniques has recently emerged from the Jaipur government. All residences higher than 300 meters from ground level now need water collection structures.

Present RWH systems exclusively focus on saving water while neglecting other resource conservation benefits that can come from embracing the multibenefit approach of RWH. The practice of Rainwater Harvesting protects underground water resources which affects both food and water security and energy stability. Traditional knowledge makes it possible to decrease the requirement for expensive and resource-intensive systems for rainwater infrastructure and distribution. The implementation of RWH happens either standalone or as an addition to contemporary infrastructure. The expenses related to water distribution and maintenance together with loss expenses from RWH are practically non-existent. The main purpose of rainwater harvesting rests on our inability to fulfill requirement with surface water resources so we must extract from underground sources. GIS proves to be useful when working with areas that have limited secondary data used to discover rainwater harvesting sites. The geology of the area needs thorough field research to certify both storage units and RWH structures.

The practice of RWH brings dual advantages by decreasing the environmental risks involved in rainwater contamination while delivering health advantages for people. Raining water collection as a basic requirement for sustainable resource management includes processing surface type water materials. A strategic relationship between public authorities and private entities teamed with contemporary ideas combined with traditional practices can establish sustainable long-term operations of Rainwater harvesting techniques.

Surface water traditional harnessing systems might serve as alternative solutions for water extraction. Traditional methods of surface water harnessing offer alternate solutions to solve water demand issues. With the existing climate change scenario, by 2030, water scarcity in some arid and semi-arid places will displace between 24 million and 700 million people.(UNWWDR,2009) A systematic study of similar traditional water exploitation techniques must be performed to enable policy-makers to understand alternative water supply solutions. The awareness about these alternative sources needs to reach policy-makers. In spite of this, traditional water sources have vast potential.

References :

1. Saxena, D., 2017. Water conservation: Traditional rain water harvesting systems in Rajasthan.

International Journal of Engineering Trends and Technology, 52(2), pp.91-98.

2. Mehta H.S. et. al. 1970 Water Potential of Rajasthan. In: A search for Water, Sarjana Prakashan Publication, Jaipur
3. Shrestha, H., 2019. Ancient practice of rainwater harvesting in the forts of Jaipur, India. In National conference on rainwater harvesting on livelihood. Community and Ecosystem Resilience.
4. Dr. R. K.Gupta, R. K. Agrawal, Rainwater Harvesting in Ancient Times and Its Sustainable Modern Techniques.
5. Rima Hooja, 2006, The Garhs of Jaipur, History of Rajashtan, Rupa, New Delhi 2006 Google maps.
6. …..…observation table snap…..IJRTI. 2023. 'Traditional rainwater harvesting methods in heritage sites of Jaipur and their present scenario', International Journal for Research Trends and Innovation, 8(2), p. 338. Available at: www.ijrti.org (Accessed: 25-03-2025).
7. UN World Water Development Report 2009 | UN-Water. (n.d.). Retrieved fromhttps://www.unwater.org/publications/waterchanging-world

Email id-aastha30sharma96@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 137–147
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

हिंदी क्रियाओं का रूपसाधित रूप बनाम शब्द स्तरीय संदिग्धार्थक शब्द : वाक्यात्मक स्वरूप और विश्लेषण

गुंजन वर्मा
शोधार्थी, हिंदी भाषाविज्ञान, म.गां.अं.हिं.वि.वि., वर्धा।
डॉ. अभिजीत प्रसाद
शोध सहायक, ICSSR परियोजना, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा।

सारांश

संदिग्धार्थकता का संबंध होने वाली एक से अधिक अर्थ की अभिव्यक्तियों से होता है जो शब्द और संरचना के स्तर पर प्राप्त होती है। शब्द स्तर पर मिलने वाली स्थिति को शाब्दिक संदिग्धार्थकता कहते हैं और शब्दों को संदिग्धार्थक शब्द। इसे कोशीय संदिग्धार्थकता भी कहा जाता है क्योंकि ऐसे शब्द प्रायः कोश में ही दो या अधिक शब्द-वर्ग के रूप में मिल जाते हैं। इस शोध-पत्र में भी शाब्दिक संदिग्धार्थकता के बारे में चर्चा की गई है लेकिन वह कोशीय स्तर की नहीं है बल्कि क्रियाओं के बनने वाले रूपसाधित रूपों का किसी अन्य शब्द-वर्ग के समान मिलने वाले शब्दों पर आधारित है। जैसे- 'बोलना' एक क्रिया है और इस क्रिया का लिंग, वचन, पुरुष आदि व्याकरणिक कोटियों के आधार पर कई रूपसाधित रूप बनेंगे। इस क्रिया के बनने वाले सभी रूपों में से 'बोली' एक ऐसा बना हुआ रूप है जो अन्य शब्द-वर्ग के समान रूप अर्थात संज्ञा स्त्रीलिंग के समान है। इस स्थिति में इसका वाक्य में क्रिया तथा संज्ञा दोनों रूपों में मिलने की स्थिति बन जाती है और जिसके कारण इस शब्द की शब्द स्तरीय संदिग्धार्थक शब्द होने की स्थिति बन जाती है। इस तरह के मिलने वाले समान रूप वाले शब्द भाषा विशेष का ज्ञान के साथ ही भाषा प्रौद्योगिकी के लिए उपयोगी है। इस शोध-पत्र में हिंदी क्रियाओं के रूपसाधित रूप के समान मिलने वाले अन्य शब्द-वर्गीय शब्दों की संदिग्धार्थक शब्द के रूप में व्याख्या करते हुए उनके वाक्यात्मक स्वरूप को कॉपर्स वाक्य के साथ प्रस्तुत किया गया है।

बीजशब्द (keywords): *संदिग्धार्थक शब्द (ambiguous word), संदिग्धार्थकता (ambiguity), रूपसाधित रूप (inflectional form), व्याकरणिक कोटि (grammatical category), शब्द-वर्ग (part of speech), टैगिंग (tagging)*

1. प्रस्तावना

किसी भाषा के ऐसे शब्द या वाक्य जिनका एक से अधिक अर्थ होता है; वे संदिग्धार्थक शब्द या वाक्य कहलाते हैं तथा उनके प्रयोग की स्थिति संदिग्धार्थकता। संदिग्धार्थकता के दो प्रकार किए गए हैं- 1. शाब्दिक संदिग्धार्थकता, जिसे कोशीय संदिग्धार्थकता भी कहा जाता है। इस प्रकार के संदिग्धार्थकता में एक ही शब्द के दो अलग-अलग प्रकार के अर्थ होते हैं। ऐसे शब्द कोश में शीर्ष-शब्द के रूप में दो या अधिक शब्द-वर्ग तथा अर्थ के साथ मिलते हैं। जैसे- 'हार' एक कोशीय संदिग्धार्थक शब्द है क्योंकि यह शब्द शब्दकोश में हार[1] [सं-पु.] अर्थ- माला और

हार[2] [सं-स्त्री.] अर्थ- पराजय, इन दो शब्द-वर्गों और अर्थों के साथ मिल जाएगा। संदिग्धार्थकता के दूसरे प्रकार को 'संरचनात्मक संदिग्धार्थकता' कहते हैं जिसमें किसी वाक्य या पदबंध की ऐसी संरचना बन जाती है कि उससे दो अलग-अलग प्रकार के अर्थों की अभिव्यक्ति होने लगती है। जैसे- लक्ष ने बैठे हुए कुत्ते को मारा। इस वाक्य में संरचनात्मक संदिग्धार्थकता है क्योंकि इस वाक्य से 'लक्ष' बैठा था और उसने आते हुए कुत्ते को मारा कि कुत्ता बैठा था और 'लक्ष' ने उसे मारा ये दोनों प्रकार के अर्थ की अभिव्यक्ति हो रही है। इस शोध-पत्र का संबंध शब्द स्तरीय संदिग्धार्थक शब्द से है लेकिन यह कोश के स्तर पर प्राप्त नहीं होगा क्योंकि इसमें हिंदी क्रियाओं का रूपसाधित रूप बनाया गया है तथा बनने वाले सभी रूपों में से किसी रूप का किसी अन्य शब्द-वर्गीय शब्द से समानता होने पर उसे शाब्दिक संदिग्धार्थता के अंतर्गत प्रस्तुत किया गया है।

किसी शब्द का लिंग, वचन, पुरुष आदि के अनुसार बनने वाले रूप को 'रूपसाधित (inflectional) रूप' कहते हैं। ऐसे रूप विकारी शब्दों जैसे- संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया के बनते हैं। हिंदी में क्रिया का लिंग, वचन, काल, पुरुष के अनुसार एक से अधिक रूप बनते हैं जो वाक्य में प्रयुक्त मिलते हैं। क्रिया के इन सभी रूपों को रूपसाधित रूप कहा जाता है। जैसे- 'जाना' का जाती, जाते, जाता, जाएगा आदि ये सभी रूपसाधित रूप हैं जो कर्ता के लिंग, वचन तथा काल के अनुसार वाक्य में प्रयुक्त मिलते हैं। क्रिया के बनने वाले सभी रूपों में से यदि कोई रूप किसी अन्य शब्द-वर्गीय शब्द के समान होता है तो उसका वाक्य में दो अलग-अलग प्रकार से प्रयोग मिलने की स्थिति बन जाएगी। जैसे- 'खाना' एक क्रिया है जिसका वर्तमानकालिक पुल्लिंग रूप 'खाता' बनेगा। चूँकि हिंदी में 'खाता' एक संज्ञा पुल्लिंग शब्द भी है जिसके कारण यहाँ क्रिया रूप और संज्ञा शब्द में समानता की स्थिति बन जा रही है जिसे समनामी रूप कहा जा सकता है। इस समनामी रूप का किसी वाक्य में क्रिया रूप और संज्ञा पुल्लिंग दोनों के रूप में प्रयोग मिल सकता है। उदाहरणस्वरूप आगे दिए गए दो वाक्यों को देखें- 1. यह आपका <u>**खाता**</u> नहीं है। 2. खरगोश इमली <u>**खाता**</u> नहीं है। यहाँ देख सकते हैं कि दोनों ही वाक्यों में 'खाता' आया है लेकिन पहले वाक्य में यह संज्ञा पुल्लिंग के रूप में 'किसी कार्य, विभाग आदि के आय-व्यय तथा लेन-देन का लेखा-जोखा' अर्थ में प्रयुक्त है जबकि दूसरे वाक्य में 'खाना' क्रिया का रूपसाधित रूप प्रयुक्त है। ऐसे ही हिंदी क्रियाओं का रूपसाधित रूप बनाने के बाद बने रूपों में से किसी रूप का अन्य शब्द-वर्गीय शब्द के समान होने की स्थिति में उसे शाब्दिक संदिग्धार्थकता के रूप में प्रस्तुत किया गया है साथ ही इन दोनों स्वरूप वाले समनामी रूपों के कॉपर्स वाक्यों को भी दिया गया है। यह कार्य भाषा विशेष की ज्ञान के अलावा तकनीकी दृष्टि से अधिक उपयोगी है। ऐसे कार्य या विश्लेषण भाषा प्रौद्योगिकी या प्राकृतिक भाषा संसाधन (NLP) हेतु आवश्यक होते हैं जिसका उपयोग भाषा संबंधी प्रणाली या टूल निर्माण में किया जाता है।

2. क्रिया का रूपसधित रूप : आशय और निर्माण प्रक्रिया

हिंदी क्रियाओं के रूपसाधित निर्माण की व्यवस्था होती है जो कर्ता के लिंग, वचन आदि के आधार पर अर्थात व्याकरणिक कोटियों के अनुसार बनते हैं। इसे सरल शब्द में ऐसे भी समझा जा सकता है कि शब्दों का लिंग, वचन के अनुसार बनने वाले रूप 'रूपसाधित रूप' (inflectional form) होते हैं। क्रियाओं का रूपसाधित रूप बनाने के लिए धातु के साथ प्रत्यय जोड़े जाते हैं। उदाहरण के लिए यहाँ दो क्रियाओं के धातु के साथ प्रत्यय जुड़ने के बाद बने सभी रूपों को दिया जा रहा है-

क्रिया **धातु** **क्रिया के बनने वाले रूपसाधित रूप**

- देना = दे ==> देने; देनी; देता; देती; देते; दिया; दिए; दी; दें; देगा; देगी; देंगी; देंगे; दो; दीजिए; दीजिएगा; दूँ; दूँगा; दूँगी।

- बैठना = बैठ ==> बैठने; बैठता; बैठती; बैठते; बैठा; बैठी; बैठे; बैठें; बैठेगा; बैठेगी; बैठेंगी; बैठेंगे; बैठो; बैठिए; बैठिएगा; बैठूँ; बैठूँगा, बैठूँगी।

यहाँ ऊपर दो क्रियाओं के रूपसाधित सभी रूपों को देख सकते हैं जिसमें 'देना' और 'बैठना' क्रिया के धातु रूप के साथ 'ने/ता/ती/ते/आ/ई/गा/गी/इए आदि प्रत्यय जोड़कर रूपसाधित रूप बनाए गए हैं। इनमें देखा जा सकता है कि 'देना' क्रिया के कुल 19 रूपसाधित रूप बने हैं तो 'बैठना' क्रिया के कुल 18 रूप बने हैं। इस शोध-पत्र के लिए इन रूपों का उपयोग यह है कि बने हुए इन रूपों का किसी अन्य शब्द-वर्ग से तुलना करके देखा जाएगा कि क्या इन रूपों में से कोई ऐसा है जो किसी अन्य शब्द-वर्गीय शब्द के समान है। किसी अन्य शब्द-वर्गीय शब्द के समान मिलने वाले शब्दों को छाँटने के बाद दोनों (क्रिया रूप और अन्य समान शब्द-वर्गीय शब्द) समनामी रूप से संबंधित कॉर्पस वाक्यों को प्रस्तुत किया गया है।

3. क्रिया के रूपसाधित रूप के समान अन्य शब्द-वर्गीय शब्द

सबसे पहले हिंदी की आधारभूत क्रियाओं के बनने वाले सभी रूपसाधित रूपों का निर्माण किया गया है इसके बाद उन्हें किसी अन्य शब्द के समान होने की स्थिति को तुलना करके खोजा गया है। जैसे पीछे दिए गए 'देना' क्रिया के रूपों की तुलना करने के बाद 'दो' एक ऐसा रूप प्राप्त हुआ है जो एक अन्य शब्द-वर्ग के समान अर्थात विशेषण शब्द के समान है। हिंदी में 'दो' एक विशेषण शब्द भी है जो संख्या '2' का सूचक है। इस तरह क्रिया के बने सभी रूपों का अन्य शब्द-वर्ग से तुलना कर समान रूप वाले प्राप्त रूपों और शब्दों के बारे में आगे प्रस्तुत किया गया है और उनके वाक्यात्मक स्वरूप के लिए कॉर्पस वाक्य भी दिया गया है।

4. क्रिया के रूपसाधित रूप बने संज्ञा शब्द : कॉपर्स वाक्य और विश्लेषण

इसके अंतर्गत क्रिया के ऐसे रूपसाधित रूपों को रखा गया है जो संज्ञा (पुल्लिंग और स्त्रीलिंग) शब्द के समान हैं। ये क्रिया रूप और शब्द दोनों ही रूपों में हिंदी कॉर्पस वाक्य में प्रयुक्त मिल सकते हैं। यहाँ क्रिया रूप और अन्य शब्द-वर्ग के समनामी रूपों को उनके शब्द-वर्ग, अर्थ तथा उदाहरणस्वरूप कॉर्पस वाक्यों को नीचे देख सकते हैं-

नोट- *संकेताक्षरों- (DV_F) => रूपसाधित क्रिया रूप; (NN-m) => संज्ञा-पुल्लिंग; (NN-f)=> संज्ञा स्त्रीलिंग; (Adj) => विशेषण; (Adv) => अव्यय।*

क्रिया	रूपसाधित रूप	शब्द स्तरीय एकरूपता	कॉपर्स वाक्य	रूपसाधित रूप का स्वरूप /अन्य शब्द-वर्ग का अर्थ
आना	आया	आया (DV_F)	1. परिजनों और डॉक्टरों का एक दल उनके साथ **आया** था। 2. कुछ को मैं लेकर **आया** हूँ, ताकि आप इसे अनुभव कर सकें।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		आया (NN_f)	1. वार्डों में स्टाफ की कमी है जिसे पूरा किया जाए और एसएनसीयू के लिए **आया** व बाई की भर्ती की जाए। 2. उत्तराखंड के दून अस्पताल में आठवीं पास योग्यता वाले वार्ड ब्वॉय, वार्ड **आया** और लैब सहायक के पद पर ग्रेजुएट और पोस्ट ग्रेजुएट युवा भी ज्वाइन कर रहे हैं।	1. बच्चे को दूध पिलाने एवं देखभाल करने वाली स्त्री; 2. सेविका; नौकरानी।

खाना	खाता	खाता (DV_F)	1. मेमना यदि झाड़ियाँ **खाता** है, तो क्या फूल भी **खाता** है ?	वर्तमानकालिक एकवचन पुल्लिंग रूप
		खाता (NN_m)	1. कृपया अपना **खाता** सेटिंग जाँचें और फिर कोशिश करें। 2. **खाता** सक्रिय करें या अन्य **खाता** के प्रयोग से भेजें। 3. नया **खाता** जोड़ने के लिए, पहले **खाता** प्रकार का चयन करें। 4. यह उपयोगकर्ता **खाता** सेवा के लिए योग्य नहीं है।	किसी कार्य, विभाग आदि के आय-व्यय तथा लेन-देन का लेखा-जोखा
खाना	खाई	खाई (DV_F)	और मैंने एक कसम **खाई** और वो कसम थी, मैं कभी भी ऐसा कुछ नहीं कहूँगी।	भूतकालिक स्त्रीलिंग एकवचन रूप
		खाई (NN_f)	1. शहर की ओर से इसे एक दोहरी सुरक्षा दीवार घेरे है जिसके बाहर गहरी **खाई** बनी है। 2. उन्होंने खुद को **खाई** में गिरने से कैसे बचाया?	खंदक; सुरंग
गलना	गली	गली (DV_F)	1. दाल **गली** नहीं तो कुछ टिप्स अपनाकर आप इसे ठीक कर सकते हैं। 2. गौरव ने बोर्ड की परीक्षा में नकल करने की बहुत कोशिश की, परंतु उसकी दाल न गली।	भूतकालिक स्त्रीलिंग एकवचन रूप
		गली (NN_f)	1. **गली** के नुक्कड़ पर मुड़ते हुए उसने वह स्वर सुना था। 2. मामा, मामा, मामा, रुको, रुको, रुको., शेवी वाला अभी तीन **गली** दूर है। 3. हर कोई इसे **गली** में रहता है।	1. सँकरा रास्ता 2. बस्ती या मुहल्ले की तंग और पतली सड़क
गिनना	गिनती	गिनती (DV_F)	1. जब वह **गिनती** कर रहा था, तब उसके दोस्त उसे चिढ़ा रहे थे। 2. किसी दिए गए वाक्य में प्रत्येक शब्द में वर्णों की **गिनती** करें।	वर्तमानकालिक एकवचन स्त्रीलिंग रूप
		गिनती (NN_f)	1. उसकी अपनी अलग **गिनती** है। 2. मुझे एक से सौ तक की **गिनती** आती है। 3. किसी दिए गए वाक्य में प्रत्येक शब्द में वर्णों की **गिनती** करें।	1. गणना 2. एक से सौ तक के अंक
घटना	घटा	घटा => (DV_F)	1. माउस हिला सकते हैं, संख्या पढ सकते है और पहेले स्तर के लिये 10 तक संख्या **घटा** सकते हैं। 2. सोने का भाव **घटा** दिया गया। 3. बजट में जूट-उत्पादों पर उत्पाद-शुल्क **घटा** दिया गया।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		घटा (NN_f)	आकाश में काली **घटा** छाई हुई है।	काले बादलों का समूह

झाँकना	झाँकी	झाँकी (DV_F)	जब मैंने खिड़की से **झाँकी**, तो मैंने देखा कि बारिश की बूंदें पेड़ों पर गिर रही थीं।	भूतकालिक स्त्रीलिंग एकवचन रूप
		झाँकी (NN_f)	1. बच्चे **झाँकी** देखने के लिए उत्सुक थे। 2. **झाँकी** में देवी-देवताओं की मूर्तियाँ थीं।	देखने के उद्देश्य से कम समय के लिए उपस्थित हुआ कोई दृश्य
झूलना	झूला	झूला (DV_F)	1. मैंने बहुत झूला **झूला**, जबकि मेरे दोस्त खेल में व्यस्त थे।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		झूला (NN-m)	1. पार्क में एक बड़ा **झूला** है। 2. वहाँ पापा ने मेरे लिए एक **झूला** बनाया था। 3. हमारे पास दो प्रकार के **झूला** उपलब्ध हैं।	वृक्ष की शाखाओं या छत की कड़ियों से रस्सी के सहारे लटकता हुआ खटोला
डालना	डाली	डाली (DV_F)	1. क्या उसने तुम्हारी ओर नज़र **डाली** थी ? 2. मैंने भी इस विषय पर पोस्ट **डाली** थी।	भूतकालिक स्त्रीलिंग एकवचन रूप
		डाली (NN-f)	1. पेड़ की **डाली** पर एक चिड़िया बैठी है। 2. बच्चे ने **डाली** से फल गिराया।	डलिया; छोटा डाल
पाना	पाया	पाया (DV_F)	1. द्वितीयक समूह विकसित समाजों में **पाया** जाता है। 2. उसके मरने के बाद ही आ **पाया** ।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		पाया (NN-m)	1. घर का **पाया** सफेद रंग का है। 2. मकान का **पाया** कमजोर होने के कारण, दीवारें गिरने लगीं।	1. पलंग, चौकी आदि का पैर 2. नींव; बुनियाद 3. स्तंभ; खंभा
बदलना	बदला	बदला (DV_F)	1. उसने अपने पुराने कपड़े **बदला**। 2. प्रविष्टि को डाउनलोड होने के समय से **बदला** गया था।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		बदला (NN-m)	1. उसने अपने दोस्त से **बदला** लिया। 2. क्या तुम सोचते हो कि **बदला** लेना सही है?	प्रतिशोध
बोलना	बोली	बोली (DV_F)	1. यहाँ 300 से अधिक भाषाएँ **बोली** जाती है। 2. वह फिर दुबारा ऊँचे स्वर में नहीं **बोली** ।	भूतकालिक स्त्रीलिंग एकवचन रूप
		बोली (NN_f)	1. बच्चों ने अपनी **बोली** में गाना गाया। 2. गाँव की **बोली** शहर की **बोली** से अलग है।	1. किसी भाषा की वह शाखा जो किसी छोटे क्षेत्र या वर्ग में बोली जाती हो; स्थानिक भाषा 2. बोलचाल 3. व्यंग्य
भरना	भरता	भरता (DV_F)	1. वह अपने बैग में किताबें **भरता** है। 2. जैसे-जैसे बारिश होती है, खेतों में पानी **भरता** जाता है।	वर्तमानकालिक एकवचन पुल्लिंग रूप
		भरता (NN-m)	1. मुझे बैंगन का **भरता** बहुत पसंद है। 2. इस वर्ष बाजार में ताजे टमाटर का **भरता** बहुत पसंद किया जा रहा है।	बैगन को भूनकर बनाया जाने वाला नमकीन सालन; चोखा

भेजना	भेजा	भेजा (DV_F)	1. मैंने अपने दोस्त को एक संदेश **भेजा** था। 2. मैंने अपने बॉस को एक ईमेल **भेजा** था।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		भेजा (NN-m)	1. वह हमेशा मेरी बात नहीं मानता, मेरा **भेजा** खराब करता रहता है। 2. जब उसने यह सवाल पूछा, तो मेरा **भेजा** खाली हो गया।	मस्तिष्क; दिमाग
होना	होनी	होनी (DV_F)	1. इनके लिए साफ और ताजे जल की सदैव व्यवस्था **होनी** चाहिए। 2. अगर तुम मेहनत करोगे, तो तुम्हारी सफलता निश्चित रूप से **होनी** है।	भूतकालिक स्त्रीलिंग एकवचन रूप
		होनी (NN_f)	1. हमें अपनी **होनी** पर ही भरोसा करना चाहिए, न कि दूसरों की बातों पर। 2. उसने बहुत मेहनत की, लेकिन उसकी **होनी** कुछ और थी।	1. अपेक्षित अथवा संभाव्य घटना 2. भाग्य

(तालिका सं. -1)

उक्त तालिका में कॉर्पस वाक्य के अंतर्गत दिए गए वाक्यों में बोल्ड और अंडरलाइन किए गए शब्दों को देख सकते हैं कि वे सभी शब्द क्रियाओं का रूपसाधित होने के साथ-साथ अन्य शब्द जैसे- संज्ञा-पुल्लिंग, संज्ञा-स्त्रीलिंग के रूप में भी प्रयुक्त हुए हैं। शब्द के स्तर पर ये दोनों रूप (forms) समान हैं लेकिन शब्द-वर्ग और अर्थ की दृष्टि से इनमें अंतर है। इन्हें समझने के लिए मानव बहुत ही आसानी से समझ जाता है लेकिन हिंदी भाषा को लेकर किए जा रहे तकनीकी कार्यों के लिए इस प्रकार के डेटा और उनके विश्लेषण की आवश्यकता होती है। इस दिशा में यह एक छोटा-सा प्रयास है।

5. क्रिया का रूपसाधित रूप बने विशेषण शब्द : कॉर्पस वाक्य और विश्लेषण

इसके अंतर्गत क्रिया के ऐसे रूपसाधित रूपों को रखा गया है जो विशेषण शब्द के समान हैं। ऐसे स्वरूप वाले रूप और शब्द हिंदी कॉर्पस में दोनों के लिए प्रयुक्त मिल सकते हैं। यहाँ क्रिया रूप और अन्य शब्द-वर्ग के समनामी रूपों के शब्द-वर्ग, अर्थ और उदाहरणस्वरूप कॉर्पस वाक्यों को नीचे देख सकते हैं-

क्रिया	रूपसाधित रूप	शब्द स्तरीय एकरूपता	कॉर्पस वाक्य	रूपसाधित रूप का स्वरूप /अन्य शब्द-वर्ग का अर्थ
चुकना	चुकता	चुकता (DV_F)	1. मैंने अपना कर्ज **चुकता** कर दिया। 2. मुझे लगता है कि मुझे इस आदमी से हिसाब **चुकता** करना होगा।	वर्तमानकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		चुकता (Adj)	1. उधार **चुकता** करने की अवधि बीत चुकी है। 2. **चुकता** ऋण की रसीद अभी तक नहीं मिली।	1. चुकाया हुआ 2. लेन-देन पूरा किया हुआ
छपना	छपा	छपा (DV_F)	किताब के पहले पन्ने पर मेरा नाम **छपा** है।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		छपा (Adj)	मैंने अपनी किताब का पहला अध्याय **छपा** हुआ देखा।	1. जो छप चुका हो; जो प्रकाशित हो 2. मुद्रित
छिपना	छिपा	छिपा (DV_F)	1. तुम्हें क्या कुछ भी मालूम है कि तुम किसे **छिपा** रहे हो। 2. इन लोगों को देखने से ही लगता था कि इनके मन में कोई पाप **छिपा** है।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप

		छिपा (Adj)	उसने अपने घर की दीवार में एक **छिपा** खजाना पाया।	गुप्त; अदृश्य
जीतना	जीता	जीता (DV_F)	1. जब भारतीय क्रिकेट टीम ने फाइनल मैच **जीता** तो पूरी भीड़ प्रशंसा से भर गयी थी। 2. क्रिकेट में खेल को ज्यादा रन बना कर भी **जीता** जा सकता है।	वर्तमानकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		जीता (Adj)	1. मैं न अपने अतीत में **जीता** हूँ न भविष्य में। 2. पुस्तकें पढ़ने वाला मरने से पहले हजार जीवन जी लेता है। जो पढ़ता नहीं, वह सिर्फ एक बार **जीता** है।	1. जिसमें जीवन या जान हो; जीवित; ज़िंदा 2. नाप, तौल आदि के प्रसंग में जो आवश्यकता से थोड़ा अधिक हो
जुड़ना	जुड़ा	जुड़ा (DV_F)	वह अपनी टीम के साथ **जुड़ा** और मैच जीतने में मदद की।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		जुड़ा (Adj)	1. लेकिन जैसलमेर इससे अच्छे से **जुड़ा** था। 2. उस मामले से **जुड़ा** सबूत अदालत में पेश किया गया। 3. परिपथ में **जुड़ा** तार प्रायः ताँबे का होता है।	1. गुँथा हुआ 2. मिला हुआ
देना	दो	दो (DV_F)	1. कृपया मुझे वह किताब दे **दो**। 2. उसने मुझसे कहा, कुछ पैसे **दो**, मैं तुम्हें वापस कर दूँगा।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		दो (Adj)	1. भारतीय खेल में **दो** महत्वपूर्ण चीजों को जोड़ना है। 2. बच्चा **दो** से तीन वर्ष तक माँ का दूध पीता रहता है।	संख्या '2' का सूचक
पकना	पका	पका (DV_F)	1. कुकर में इस मिश्रण को **पका** लेते हैं 2. चावल वह अपनी ओर से **पका** लाता था।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		पका (Adj)	1. वह **पका** आम खा रहा है। 2. **पका** हुआ गूलर सुखाकर पीसकर चूर्ण बना लें। 3. केला बहुत **पका** हुआ है।	1. खाने योग्य 2. बनाया हुआ, तैयार

(तालिका सं. -2)

6. क्रिया का एकाधिक रूपसाधित रूप बने अन्य शब्द-वर्गीय शब्द : कॉर्पस वाक्य और विश्लेषण

रूपसाधित रूप बने एकाधिक शब्द-वर्गीय शब्द से आशय किसी क्रिया के बनने वाले रूपों में दो या अधिक रूपों का एक से अधिक अन्य शब्द-वर्गीय शब्द के समान हो जाने से है। इस प्रकार के मिलने वाले स्वरूप और संबंधित कॉर्पस वाक्यों को शब्द-वर्ग और अर्थ सहित नीचे देख सकते हैं-

क्रिया	रूपसाधित रूप	शब्द स्तरीय एकरूपता	कॉर्पस वाक्य	रूपसाधित रूप का स्वरूप /अन्य शब्द-वर्ग का अर्थ

खोलना	खोल	खोल (DV_F)	1. पुस्तक एक ऐसा तोहफ़ा है जो आप बार-बार **खोल** सकते हैं। 2. प्राचीन सीमा चौकियाँ फिर से **खोल** दी गई।	धातु रूप
		खोल (NN_m)	1. सारे **खोल** आगे से खुले हुए और पीछे से बंद होते हैं। 2. कछुए का **खोल** कड़ा होता है। 3. जैसे जैसे इसका आकार बढ़ता है यह अपने **खोल** को बढ़ा लेता है।	1. किसी चीज का बाहरी आवरण; कवर 2. किसी जीव के शरीर का सुरक्षात्मक आवरण 3. मोटे कपड़े की बनी हुई दोहरी चादर
	खुला	खुला (DV_F)	1. भारत सदियों एक **खुला** समाज रहा है। 2. फ़ाइल पठन उपयोग के लिए **खुला** नहीं है।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		खुला (Adj)	1. उसका दरबार सबके लिए हर समय **खुला** रहता था। 2. **खुला** भाग उधर नहीं होना चाहिए जिस ओर से हवाएँ आ रही हों।	1. स्वतंत्र 2. जो सँकरा न हो
	खोली	खोली (DV_F)	1. प्रतिमाह हमारी वेबसाईट 35 लाख बार **खोली** जाती है। 2. उसने अपनी थैली **खोली**, शायद कुछ बच गया हो।	भूतकालिक स्त्रीलिंग एकवचन रूप
		खोली (NN_f)	1. आप के मकान के खोलियों में से कोई **खोली** किराये पे देना। 2. मीरा रोड में आपको कम कीमत में **खोली** मिल सकती है।	1.महानगरों में रहने के लिए बनाई गई छोटी कोठरी 2. सामान रखने की थैली 3. तकिए या रजाई पर चढ़ाने का कवर
चाहना	चाहा	चाहा (DV_F)	1. उन्होंने **चाहा**, तो सब ठीक हो जाएगा। 2. उन्होंने मुझसे मेरे बारे में और जानना **चाहा**।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		चाहा (NN_m)	1. **चाहा** बकुले के समान होता है। 2. **चाहा** पक्षी दलदल और नमी के बिना नहीं रह सकता।	एक जल पक्षी जिसका शरीर फूलदार और पीठ सुनहरी होती है।
		चाहा (Adj)	1. किस्मत ने **चाहा** तो वे पति पत्नी कहलायेंगे। 2. जिसे दिल से **चाहा** बस वो मिला नहीं।	अभिलाषित; इच्छित
	चाहे	चाहे (DV_F)	1. अगर आप वह देखना **चाहे** तो आप यूट्यूब पर देख सकते हैं। 2. वह अपने हिसाब से जो **चाहे** कर सकती है।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		चाहे (Adv)	1. **चाहे** पढ़ो या **चाहे** खेलो। 2. **चाहे** जो हो, तुम सफल जरूर होगे।	जो कुछ हो सकता है वह सब या उनमें से कुछ
जाना	गया	गया (DV_F)	1. लड़की के हाथ से बर्तन छूट गया और पानी बिखर **गया**। 2. राष्ट्रीयता का विचार ही पूरी तरह गायब हो **गया** था।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		गया (NNP)	1. **गया** शहर में बहुत सारे मंदिर है। 2. **गया** का उल्लेख रामायण और महाभारत में भी मिलता है।	बिहार का एक पुण्य स्थान

जोड़ना	जोड़ा	जोड़ा (DV_F)	1. आकृतियों की सूची में एक आकृति को **जोड़ा** नहीं जा सका। 2. अगर आपने Google Pay से मान्य बैंक खाता **जोड़ा** हुआ है, तो अगले चरण पर जाएँ।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		जोड़ा (NN-m)	1. दूल्हे ने शादी में आकर्षक सूट का **जोड़ा** पहना। 2. माँ ने बाजार से खिलौनों का **जोड़ा** खरीदा।	एक ही तरह की दो चीजें
	जोड़ी	जोड़ी (DV_F)	1. इस पुस्तक में नई जानकारी **जोड़ी** गई है। 2. नई योजना से शहर में रोजगार की संख्या **जोड़ी** गई।	भूतकालिक स्त्रीलिंग एकवचन रूप
		जोड़ी (NN-f)	1. इन दोनों की **जोड़ी** कमाल की है। 2. वह इक्कों की **जोड़ी** से जीत गया। 3. मेरी बेटी को साल में पाँच **जोड़ी** जूते-चप्पल लगते हैं।	एक ही तरह की दो चीजें
जोतना	जोता	जोता (DV_F)	1. आज सुबह, मैंने खेत **जोता**। 2. आज भी इस घाटी में एक बैल से हल **जोता** जाता है।	वर्तमानकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		जोता (NN-m)	1. वह एक मेहनती **जोता** है। 2. पतंग में **जोता** ठीक से बँधा होना चाहिए। 3. उसने बैल की गर्दन से **जोता** हटाया।	1. हल चलाने वाला व्यक्ति 2. रस्सी; बैल की गर्दन फँसाने हेतु जुए से लगी रस्सी
पाना	पाया	पाया (DV_F)	1. यह हिंदू मंदिरों के शिखर पर भी **पाया** जाता है। 2. मैं उससे दिल की कह नहीं **पाया** था।	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		पाया (NN-m)	1. इस पलंग का एक **पाया** टूट गया है। 2. घर में **पाया** होने से कई तरह के लाभ हो सकते हैं।	1. पलंग, चौकी आदि का पैर 2. खंभा
	पानी	पानी (DV_F)	उसे इस कंपनी में हर हाल में नौकरी **पानी** है, इसलिए वह हर इंटरव्यू के लिए तैयार रहता है।	मूल क्रिया स्त्रीलिंग रूप
		पानी (NN-m)	1. चारा और **पानी** मिल जाए तो वही इनके लिए काफी है। 2. ये एक मौसम में 100 हज़ार लीटर **पानी** इकट्ठा कर लेते हैं।	1. जल 2. किसी पदार्थ आदि के भीतर से निकलने वाला रस
	पाई	पाई (DV_F)	1. मुख में दंतावली आधार प्रदान करने वाली संरचना **पाई** जाती है। 2. डालफिन की दो प्रजातियाँ गंगा में **पाई** जाती हैं।	भूतकालिक स्त्रीलिंग एकवचन रूप
		पाई (NN-f)	1. वृत्त की परिधि ज्ञात करने के लिए, हमें वृत्त के व्यास को **पाई** से गुणा करना होगा। 2. आज-कल **पाई** का प्रचलन समाप्त हो गया है। 3. मैं तुम्हारा एक-एक **पाई** लौटा दूँगा।	1. एक गणितीय नियतांक 2. एक प्राचीन सिक्का
पालना	पाल	पाल (DV_F)	उसकी नानी ही उसे **पाल** रही थीं।	धातु रूप

		पाल (NN-m)	अचानक तूफ़ान आने से नाव का कमजोर **पाल** फट गया।	नाव के मस्तूल पर लगा लंबा-चौड़ा कपड़ा आदि
	पाली	पाली (DV_F)	पंजाब की कुल्लू-कांगड़ा घाटी में तथा हिमाचल प्रदेश के मण्डी क्षेत्र में भी इस नस्ल की भेड़ें **पाली** जाती हैं।	भूतकालिक स्त्रीलिंग एकवचन रूप
		पाली (NN-f)	1. बौद्धों के धर्मग्रंथ **पाली** में लिखे हुए हैं। 2. दोनों **पाली** में काम करने की व्यवस्था सभी केंद्रों पर सामान्य सी बात थी।	1. एक प्राचीन भाषा 2. समय का निर्धारित हिस्सा
	पाला	पाला (DV_F)	1. मैंने दो छोटी बिल्लियों को **पाला** है। 2. और उन्होंने मुझे बचपन में **पाला** था	भूतकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		पाला (NN-m)	इस साल की फसल को बहुत नुकसान हुआ है, क्योंकि अचानक **पाला** पड़ गया था।	ठंड
पोतना	पोता	पोता (DV_F)	हम सभी ने अपनी घरो को शादी के लिए **पोता** था।	वर्तमानकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		पोता (NN-m)	1. मेरा **पोता** मुझे बहुत प्यार करता है। 2. उनका **पोता** भी उनसे असंतुष्ट हो रहा था।	पुत्र का पुत्र
	पोती	पोती (DV_F)	जाँच में भी लीपा- **पोती** हो रही है।	वर्तमानकालिक स्त्रीलिंग एकवचन रूप
		पोती (NN-f)	1. पीड़िता तो मेरी अपनी **पोती** की तरह थी। 2. वह अपनी **पोती** के साथ हर रविवार को समय बिताता है।	पुत्र का पुत्री
बरसना	बरसाती	बरसाती (DV_F)	1. हर मुस्कान में गुलाब की पंखड़ियाँ **बरसाती** हुई। 2.बेरहम प्रिंसीपल **बरसाती** रही मासूम छात्रा पर डंडे	वर्तमानकालिक स्त्रीलिंग एकवचन रूप
		बरसाती (NN-f)	1. आज मौसम बहुत खराब है, इसलिए में **बरसाती** पहनकर जा रहा हूँ। 2. मेरी **बरसाती** नीली रंग की है और बहुत हल्की है।	प्लास्टिक आदि का एक प्रकार का वस्त्र जिसे वारिश में गीला होने से बचने के लिए पहना जाता है
		बरसाती (Adj)	1. **बरसाती** मौसम सुहावना होता है। 2. **बरसाती** गीत मधुबाला पर काफी फिट बैठते थे।	बरसात संबंधी; बरसात में होने वाला
भरना	भरनी	भरनी (DV_F)	1. हार मानकर किशोर दा को हामी **भरनी** पड़ी। 2. करदाताओं को पूरे बिल की राशि **भरनी** पड़ेगी। 3. मुझे अपनी पानी की बोतल **भरनी** है।	मूल क्रिया स्त्रीलिंग रूप
		भरनी (NN-f)	अचार की **भरनी** के लिए, हमें तेल, नमक, मिर्च और मसाले चाहिए।	काँच आदि का बना पात्र
	भरता	भरता (DV_F)	1. बूँद-बूँद से घड़ा **भरता** है। 2. जितना भी दो उनका मन नहीं **भरता** था।	वर्तमानकालिक पुल्लिंग एकवचन रूप
		भरता (NN-m)	1. पतले मुक्केबाज़ ने मुक़ाबले में मोटे मुक्केबाज़ को मार-मारकर **भरता** बना दिया। 2. बैगन का **भरता** एक पारंपरिक भारतीय सब्जी है जो ग्रामीण भारत में विशेष रूप से प्रसिद्ध है।	बैगन को भूनकर बनाया जाने वाला नमकीन सालन; चोखा

(तालिका सं. -3)

7. निष्कर्ष

इस प्रकार कह सकते हैं कि शाब्दिक संदिग्धार्थकता के स्तर पर केवल कोश में मिलने वाले एक से अधिक शब्द-वर्ग वाले समान शब्द नहीं होंगे बल्कि शब्दों के रूप से स्तर पर समानता मिलने वाले सभी शब्द भी शाब्दिक संदिग्धार्थकता के अंतर्गत आएँगे। इस शोध-पत्र में हिंदी क्रियाओं का रूपसाधित रूप बनाने के बाद उनकी तुलना अन्य शब्द-वर्गीय शब्दों से करने पर ज्ञात हुआ है ऐसे बहुत रूप मिल रहे हैं जो किसी अन्य शब्द-वर्ग के समान रूप वाले अर्थात समनामी रूप वाले हैं। यहाँ हिंदी की 30 क्रियाओं के बने रूपसाधित रूपों का अन्य शब्द-वर्ग एकरूपता को कॉर्पस वाक्य के उदाहरणों के साथ प्रस्तुत किया गया हैं। इसमें लिंग, वचन और काल के आधार पर बने रूपसाधित रूपों की समानता संज्ञा-पुल्लिंग, संज्ञा-स्त्रीलिंग और विशेषण के रूप में प्राप्त हुई है। इसमें ऐसी भी हिंदी क्रियाएँ मिली हैं जिनका एक से अधिक रूप किसी दूसरे शब्द-वर्ग के समान है। हिंदी में बहुत ऐसी क्रियाएँ हैं जिनका रूपसाधित रूप बनने के बाद बना रूप (form) किसी दूसरे शब्द-वर्गीय शब्द के समान होने के कारण वह शब्द-स्तरीय एकरूपता या शाब्दिक संदिग्धार्थता का हिस्सा बन जाता है क्योंकि वाक्य में इनका प्रयोग दोनों ही रूपों में मिल सकता है। ये एकरूपता शब्द-वर्ग टैंगिग (POS tagging) की मूल समस्या बनती है जिसका हिंदी टैगर का निर्माण करने में ध्यान देना होगा। इस शोध-पत्र में प्रस्तुत स्वरूप और विश्लेषण शब्दों को एक नए स्वरूप से समझने के साथ तकनीकी दृष्टि से वर्तमान समय में किए जा रहे प्राकृतिक भाषा संसाधन के कार्यों में हिंदी की क्रिया संबंधी आने वाली संदिग्धार्थकता के समाधान को खोजने में सहायक होगा। द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी भाषा शिक्षण में हिंदी की इस विशेष व्यवस्था और स्वरूप को समझाने में इसकी सहायता ली जा सकती है।

8. सहायक ग्रंथ सूची

- अग्रवाल, चमनलाल. (1981). हिंदी रूपविज्ञान. अग्रवाल प्रकाशन, नई दिल्ली।
- उलत्सिफेरोव, आलेग ग. (1992). हिंदी का व्यावहारिक व्याकरण. अखिल भारतीय हिंदी संस्था संघ, नई दिल्ली।
- कुमार, कविता. (2006). हिंदी व्याकरण एक नवीन दृष्टिकोण. किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली।
- गुरु, कामता प्रसाद. (2012). हिंदी व्याकरण. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
- तिवारी, भोलानाथ. (2012). हिंदी भाषा की शब्द संरचना. साहित्य साहित्यकार, नई दिल्ली।
- प्रसाद, धनजी. (2023). अर्थविज्ञान. प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली।
- पाण्डेय, अनिल कुमार. (2010). हिंदी संरचना के विविध पक्ष. प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली।
- सिंह, सूरजभान. (2000). हिंदी का वाक्यात्मक व्याकरण. साहित्य सहकार, नई दिल्ली।
- https://www.hindikriti.com/2024/02/shabd-bhed-kya-hota-hai-aur-ye-kitane-prakar-ka-hota-hai.html
- https://www.google.co.in/books/edition/Bh%C4%81sh%C4%81bh%C4%81skara_arth%C4%81t_Hind%C4%AB_bh%C4%81sh/ZncIAAAAQAAJ?hl=en&gbpv=1&dq=%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%BF%E0%A4%AF%E0%A4%BE&pg=PA48&printsec=frontcover
- https://lgandlt.blogspot.com/2019/12/unit-04.html
- https://ebooks.inflibnet.ac.in/hinp09/chapter/%E0%A4%86%E0%A4%B6%E0%A4%AF-%E0%A4%B8%E0%A4%82%E0%A4%AC%E0%A4%82%E0%A4%A7-%E0%A4%AA%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%BE%E0%A4%AF%E0%A4%A4%E0%A4%BE-%E0%A4%B8%E0%A4%AE%E0%A4%A8%E0%A4%BE%E0%A4%AE/

https://hindi.foodviva.com/curry-recipes/baingan-bharta-recipe/

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 148–153
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Living and Working in Hardships : A Study of Migrant Families in Rural Brick Kilns

Dr. Harish Kumar Verma
Assistant Professor, G.D.C Basti
Atul Verma
Research Scholar, PRSU Naini, Prayagraj.

Abstract :

Migration in India is a long-standing part of society, helping many people in formal and informal jobs to survive. This research paper examines the harsh working and living conditions faced by seasonal migrant workers in brick kilns. Usually working away from home for five to six months at a time, these workers face extremely hard physical work and harsh weather, but their struggles are mostly ignored by government policies.

A focus of this study is how work hours change because of the hot Indian summer. To ensure the bricks are made properly and avoid the hottest part of the day, workers must start as early as 2:00 AM. This schedule disrupts their sleep and is extremely hard on their bodies. The study also finds that there are not enough good places to live at the kiln sites. Workers stay in simple, temporary shelters made from stacked raw bricks and covered with tin sheets. These shelters do not provide shelter from the heat, so families must endure the harsh weather.

By examining how these workers endure extremely hard physical labor while living in poor conditions, the paper shows that their seasonal work is not really a choice. The findings show that these workers often have debt, no help from the government, and face serious health risks at work. The research calls on the government to act quickly to provide these workers with safe housing, clean water, and legal rights, and to treat seasonal migration as a basic human right.

Keywords : Migration, Brick kiln industry, Uneven working hours, Health, Unemployment.

Introduction :

Migration has always happened around the world and is important for people to survive, earn

more, and change their lives. In a fast-growing country like India, people often talk about migration as a major economic trend, but for many rural families, it is a personal and practical way to address problems in farming. While experts often call seasonal migration a "poverty trap" or a "closed loop," this paper offers another view. It sees migration as a way for people to improve their lives and reach a stable, "happy life."

This study looks at seasonal migrant workers in the brick kiln industry. This work follows a tough five- to six-month cycle. Unlike regular factory jobs, the work hours here depend on the weather. To ensure the bricks are good and avoid the dangerous heat of the Indian summer, workers must start their day as early as 2:00 AM. This schedule is extremely hard on their bodies, but they put up with it for their families' sake.

Besides the challenging work, the living conditions at the kiln sites are very unstable. Families live in simple, temporary huts made from raw bricks and covered with tin sheets. These huts do not keep out of the heat and become extremely hot during the summer. In these small spaces, migrants try to live their daily lives while dealing with extreme heat and often do not have the basic things they need.

Importantly, this paper says that these migrants are not just stuck in a cycle. Instead, they do this extremely challenging work with a clear goal: to improve their lives so their children do not have to suffer as they did. Migration is a way to move toward a better place and life. By examining their real experiences, the research aims to determine whether this "sacrifice" really helps them move into better jobs or whether significant obstacles still prevent them from making lasting changes.

Methodology :

This study uses both detailed descriptions and open-ended questions, drawing on new interviews and existing reports to examine the lives of seasonal migrant workers. Background information came from government reports and studies about informal work. Most of the research is based on real-life observations and workers' own stories. The researcher watched the workers closely, especially their hard 2:00 AM work schedule, and the weak shelters made with tin sheets. The researcher also had casual, open conversations with the workers in their usual setting rather than formal interviews.

Objectives of the Research paper :

The main goal of this research is to look at the real-life experiences and long-term situations of seasonal migrant workers in the brick kiln industry.

Issues of Brick kiln workers :

1. The Problem of Irregular Working Hours and Biological Disruption :

One of the biggest problems for brick kiln workers is the lack of work schedules. Unlike

regular jobs with eight-hour shifts, their work depends completely on the weather and how many bricks need to be made. This lack of routine seriously upsets their normal way of living and affects their health.

Pre-Dawn Starts : Many workers must wake up as early as 2:00 AM or 3:00 AM to work.

Split Shifts : This means their day is split into multiple shifts. They work in the dark early in the morning, must rest during the hottest part of the day, and then start working again late in the evening or at night.

Disruption of the Biological Sleep Cycle :

The biggest effect of this schedule is that it ruins the body's natural sleep cycle. People are meant to sleep at night and stay awake during the day.

Chronic Tiredness : Sleeping during the day does not help them recover as much as sleeping at night, especially in temporary camps where it is noisy, bright, and very hot.

Mental Health Strain : Not getting enough sleep and working in the dark all the time makes workers feel more stressed, tired, and easily upset. Over time, this can hurt their mental health.

Biological Imbalance : The body's sleep cycle does more than affect tiredness. It controls hormones, digestion, and the immune system. When this cycle is always disturbed, workers fall sick more easily.

Safety Risks of Night Work : Working at night or incredibly early in the morning is also more dangerous. Brick kilns are usually poorly lit, and handling heavy materials or working near the hot ovens in the dark increases the risk of accidents. There is also more risk from pests or insects that come out at night.

Strained eyesight from focusing on repetitive tasks in near darkness.

Both women and men migrants face the same hazards, such as long working hours under the sun, working in dust, and physical stress (Sahu, 2024).

2. Health issues :

Respiratory and Skin Hazards :

Working at a brick kiln means living in a constant cloud of dust, ash, and smoke.

Breathing in Dust and Smoke : When the bricks are baked, the process releases harmful smoke. Without masks or protection, workers breathe in fine dust and dangerous gases daily. This causes constant coughing, asthma, and a serious lung disease called silicosis, which often happens in this work.

Skin Damage : The rough clay and soil chemicals are harsh on the skin. Workers often get deep cracks in their hands and feet, called kiln sores. Since there is often no clean water to wash with,

these cracks can get infected.

These workers suffer from musculoskeletal pain, which they must take another job. (Sain and Meena, 2018)

3. The "Debt Cycle" of Piece-Rate Wages :

Getting paid 65 rupees for every 100 bricks may sound simple, but it masks a bigger problem: workers being taken advantage of. A worker cannot do the job alone. He needs his wife and often his children to help mold and carry bricks. Even though several people are working, the "unit" is often paid as if it were just one person.

Economic Insecurity : If it rains and the sun does not dry the bricks, workers do not get paid for that day. This "no work, no pay" rule means even if they are sick or injured, they cannot take a break. They are always counting bricks, trying to reach the next 100 just to buy food for the day.

4. Substandard Living Conditions and Basic Amenities :

The hardships faced by brick kiln workers do not end when their work ends. The "homes" they get at the site are often just as bad for their health as the work itself. These places have no privacy, poor toilets, and do not protect them from the weather.

The Single-Room "Jhuggi" : Most workers live in temporary shelters, often called jhuggis, built directly on the kiln grounds.

Materials and Space : These rooms are made by stacking raw bricks, often without any means of holding them together, and are covered with thin tin or asbestos sheets. The space is small, usually only 50 to 60 square feet (about half the area of an apartment bedroom).

Lack of Separation : One small room is used as the kitchen, bedroom, and living space for the whole family. There is no fresh air, and because they cook inside with wood or coal, the air is always smoky, which makes breathing problems from the kiln dust even worse.

These workers live in very harsh conditions and substandard facilities. (Ali and Shaheen,2024).

Exposure : The thin tin roofs offer little protection. In summer, the rooms get extremely hot, and in the rainy season, they often leak, so workers cannot keep their belongings dry.

4. Seasonal unemployment :

Seasonal migration for brick kiln workers is dictated by the weather, leading to inevitable unemployment during the rainy season. As kilns cannot work in the rain, production stops, forcing families back home. This creates a "seasonal climate" of joblessness, in which workers lose their only source of income. With no wages coming in, they are often forced to live off meager savings or take high-interest loans, further increasing their debt and economic insecurity.

6. The "Lost Generation": Impact on Migrant Children :

Perhaps the most tragic consequence of seasonal migration is the impact on the children of brick kiln workers. Because the families move every six to eight months—often from their home villages in Pratapgarh or surrounding areas to different kiln sites—the children face a life of constant instability.

The Broken Educational Chain :

As you noted, the children are "migrants" alongside their parents. This year, they may be at one kiln, and next year, at another. This constant movement creates a "broken chain" in their schooling.

The Enrollment Gap : Most government schools require stable residency and documentation. Because these families are constantly moving, children are often not enrolled in the local schools near the kiln site.

The "Language and Curriculum" Barrier : Even if a child finds a seat in a local school, the curriculum or even the dialect may differ from those in their home village, making it impossible for them to keep up.

Often, these children face a dilemma between working and going to school, and they end up working. (Sharma and Dangal, 2019).

Conclusion :

This research aims to show the difficult, often hidden lives of seasonal migrant workers in the brick kiln industry. The findings show two sides: very tough living and working conditions, and strong hopes for a better life. These workers must adjust their daily routines to a harsh environment. As shown, starting work at 2:00 AM to take advantage of the "cool environment," the hard physical work of mixing soil by hand, and living in poor shelters with tin roofs (chaddar) all add up to constant exhaustion.

At a pay of Rs. 65 per 100 bricks, the money earned from this work is just enough to survive, especially since whole families move together. But the most important finding is that these migrants do not see their lives as a never-ending "loop" of suffering. Instead, they see migration as a choice—a short-term sacrifice in one place to build a lasting, "happy life" somewhere else. Their hope is that their hard work now will help their children have a better future.

To turn this hope into reality, the study says the state must step in to close the gap between work and dignity. The health and education of the children at these kiln sites remain a major problem. To make this hope a reality, the study says the government needs to ensure workers are treated with respect. The health and education of the children at these kiln sites are the weakest part of the migration story. While parents work at night, their children often cannot go to school regularly, which could

keep the cycle of migration going into the next generation. The system must be changed to fit the "mobile" nature of these families. Providing bridge schools, mobile health units, and food support under the Anganwadi system is essential. If the state can provide the "Shiksha" (education) that these parents are working so hard to afford, the move from informal kiln work to stable factory jobs becomes possible.

In conclusion, migration in North India is a testament to the resilience of the rural poor. While the suffering at the kilns is clear, it is the hope for change that truly defines the migrant. If government programs align with what these workers want, we can ensure that migration really leads to the "happy life" they hope for, where the next generation is known not for making bricks but for getting an education.

References :

1. Sain MK, Meena M (2018), "Exploring the musculoskeletal problems and associated risk-factors among brick kiln workers". International Journal of Workplace Health Management, Vol. 11 No. 6 pp. 395–410.
2. Sharma, B, & Dangal, M. R. (2019). Seasonal child labour in Nepal’s Brick Kilns: A study of its educational impact and parents’ attitudes towards it. Journal of Education and Work, 32(6–7), 586–597.
3. Ali, Shaheen Efrah. "A Case Study on Working Condition of Brick Kiln Workers of Rohilkhand region, UP, India." (2024).
4. Sahu S (2024), "The Precarious Work, Livelihood Pressures and Health of Migrant Brick Kiln Labourers in India". International Journal of Migration, Health and Social Care, Vol. 20 No. 1 pp. 165–179

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 154–169
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

बाल अधिकारों की स्थिति एवं लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण : महराजगंज जिले में विकासात्मक प्रभावों का विवेचनात्मक अध्ययन

शालिनी अग्रवाल, शोध छात्रा,
प्रोफेसर शक्ति जायसवाल, शोध निर्देशक
राजनीति विज्ञान विभाग, बुद्ध विद्यापीठ पी.जी कॉलेज, नौगढ़, सिद्धार्थ नगर, यूपी
(संबद्ध –सिद्धार्थ विश्वविद्यालय कपिलवस्तु सिद्धार्थ नगर)

सारांश :

यह अध्ययन उत्तर प्रदेश के महराजगंज जिले में बाल अधिकारों की स्थिति और लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के बाल संरक्षण पर प्रभाव का विश्लेषण करता है। इस अध्ययन में मिश्रित-शैली का दृष्टिकोण अपनाया गया है, जिसमें 2011 की जनगणना, एनएफएचएस-4, और जिला जनगणना हैंडबुक से द्वितीयक डेटा के साथ-साथ विभिन्न ब्लॉकों से 114 उत्तरदाताओं से एकत्रित प्राथमिक डेटा का विश्लेषण किया गया है। निष्कर्षों से यह स्पष्ट हुआ है कि साक्षरता दर, बाल विवाह की व्यापकता, बाल श्रम की घटना, और शिक्षा की सुविधाओं तक पहुंच में महत्वपूर्ण असमानताएं हैं। बाल अधिकारों के प्रावधानों के प्रति मध्यम जागरूकता और मौजूदा बाल संरक्षण कार्यक्रमों की प्रभावहीनता स्थिति को और जटिल बनाती है। सांख्यिकीय विश्लेषणों, जिसमें सहसंबंध, प्रतिगमन, एएनओवीए और एसईएम शामिल हैं, से यह पुष्टि होती है कि सामाजिक-आर्थिक कारकों और बाल अधिकारों के परिणामों के बीच आपसी संबंध हैं। प्रस्तावित समाधानों में जागरूकता अभियानों, कानूनी ढांचे को मजबूत करने, आर्थिक समर्थन कार्यक्रमों और सामुदायिक भागीदारी पहलों को महत्व दिया गया है। अध्ययन यह रेखांकित करता है कि बाल संरक्षण को बढ़ावा देने में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की महत्वपूर्ण भूमिका है और स्थानीय शासन तंत्र को मजबूत करने की आवश्यकता को उजागर करता है।

कुंजी शब्द : बाल अधिकार, लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण, महराजगंज जिला, सामाजिक-आर्थिक कारक

परिचय :

भारत, जो संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार सम्मेलन (UNCRC) का हस्ताक्षरकर्ता है, ने संविधानिक प्रावधानों और विधायी उपायों के माध्यम से बाल अधिकारों को पहचानने और लागू करने में महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 15(3), 21, और 24 के माध्यम से बच्चों के खिलाफ भेदभाव को निषेध किया गया है, उनके जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार सुनिश्चित किया गया है और खतरनाक कार्यों में बाल श्रम को प्रतिबंधित किया गया है। जैसे कि

"बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम" (2009) और "यौन अपराधों से बच्चों की सुरक्षा अधिनियम" (POCSO 2012) इन अधिकारों को और सशक्त बनाते हैं। इन कानूनी ढांचों के बावजूद, बाल अधिकारों के प्रभावी कार्यान्वयन में समस्याएं बनी रहती हैं, विशेष रूप से ग्रामीण और हाशिए पर रहने वाले समुदायों में।

लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण, विशेष रूप से पंचायती राज संस्थाओं (PRI) के माध्यम से, नीति और व्यवहार के बीच अंतर को पाटने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। स्थानीय शासन संरचनाओं को सशक्त बनाकर विकेंद्रीकरण समुदाय की भागीदारी को बढ़ाता है, जवाबदेही को सुदृढ़ करता है और हस्तक्षेपों को स्थानीय जरूरतों के अनुसार अनुकूलित करता है। महराजगंज जिले जैसे क्षेत्रों में, जहां सामाजिक-आर्थिक चुनौतियाँ प्रबल हैं, विकेंद्रीकृत शासन बाल अधिकारों से संबंधित समस्याओं को संबोधित करने में सहायक हो सकता है।

महराजगंज जिले और इसके सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का परिचय :

महराजगंज जिला, जो उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र में स्थित है, नेपाल और बिहार से सटा हुआ है। इसकी जनसंख्या 2.6 मिलियन से अधिक है, और यह जिला मुख्य रूप से ग्रामीण है, जिसमें 95% से अधिक जनसंख्या गांवों में निवास करती है। यहां की साक्षरता दर लगभग 64.3% है, जिसमें शैक्षिक प्राप्ति में लिंग आधारित असमानताएं हैं। जिले को गरीबी, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की सीमित पहुंच और अपर्याप्त स्वास्थ्य सेवाओं जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जो बच्चों की भलाई पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। ये सामाजिक-आर्थिक कारक बाल श्रम, बाल विवाह और स्कूल छोड़ने जैसी समस्याओं के निरंतर बने रहने का कारण बनते हैं।

हाल के वर्षों में, महराजगंज को भारत सरकार द्वारा एक "आकांक्षी जिला" के रूप में पहचाना गया है, जिसका उद्देश्य लक्षित हस्तक्षेपों के माध्यम से इसके विकास को तेज करना है। "माँ पतेश्वरी विला सिटी" परियोजना जैसे कार्यक्रम, जो बाढ़ से विस्थापित परिवारों के लिए हैं, और विकास संकुल योजना, जो गांवों में बुनियादी ढांचा प्रदान कर शहरी-ग्रामीण अंतर को पाटने के लिए बनाई गई है, जिले की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों में सुधार लाने के प्रयासों को दर्शाते हैं। हालांकि, बाल अधिकारों को बढ़ावा देने में इन कार्यक्रमों की प्रभावशीलता अभी भी चिंता का विषय है, जिसे और अधिक जांच की आवश्यकता है।

भारतीय संविधान में बाल अधिकारों का संरक्षण :

भारत ने बाल अधिकारों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को संविधान में मजबूती से स्थापित किया है, जो बच्चों के कल्याण के संरक्षण और संवर्धन के लिए एक मजबूत ढांचा प्रदान करता है। अनुच्छेद 15(3) राज्य को बच्चों के लिए विशेष प्रावधान करने का अधिकार देता है, यह उनकी संवेदनशीलता और अतिरिक्त सुरक्षा की आवश्यकता को पहचानते हुए। अनुच्छेद 21 जीवन और व्यक्तिगत

स्वतंत्रता का अधिकार सुनिश्चित करता है, जिसे न्यायपालिका ने शिक्षा, स्वास्थ्य, और गरिमामय जीवन के अधिकार में विस्तारित रूप से व्याख्यायित किया है। 2002 के 86वें संविधान संशोधन अधिनियम ने अनुच्छेद 21A को जोड़ा, जिससे 6 से 14 वर्ष के बच्चों के लिए शिक्षा को मौलिक अधिकार बना दिया और अनुच्छेद 45 में बदलाव किया, जो प्रारंभिक बाल देखभाल और शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करता है। ये प्रावधान राज्य के लिए बच्चों के कल्याण और विकास सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी को रेखांकित करते हैं।

संविधानिक प्रावधानों के अलावा, भारत ने बच्चों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए कई कानून बनाए हैं। 2009 का **"बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम"** बच्चों के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा को सुनिश्चित करता है, जिसका उद्देश्य शिक्षा में अवरोधों को समाप्त करना और समावेशी सीखने के वातावरण को बढ़ावा देना है। **"यौन अपराधों से बच्चों की सुरक्षा अधिनियम (POCSO) 2012"** बच्चों को यौन अपराधों से बचाने के लिए एक व्यापक कानूनी ढांचा प्रदान करता है, जो मामलों की रिपोर्टिंग और निर्णय प्रक्रिया में बच्चों के अनुकूल विधियों को सुनिश्चित करता है। इसके अलावा, **"जुवेनाइल जस्टिस (केयर एंड प्रोटेक्शन ऑफ चिल्ड्रन) अधिनियम 2015"** बच्चों को न्यायिक प्रक्रिया से बचाने और उनके पुनर्वास और सामाजिक पुनर्निर्माण को बढ़ावा देने पर बल देता है।

इन कानूनी ढांचों के बावजूद, बच्चों के अधिकारों के प्रभावी कार्यान्वयन में चुनौतियां बनी रहती हैं, खासकर ग्रामीण और हाशिए पर रहने वाले समुदायों में। गरीबी, अशिक्षा और अपर्याप्त अवसंरचना जैसी समस्याएं बच्चों के अधिकारों को साकार करने में बाधा डालती हैं। इसके अलावा, समुदायों में अक्सर उनके अधिकारों और उपलब्ध सेवाओं के बारे में जागरूकता की कमी होती है, जिससे उल्लंघनों की रिपोर्टिंग कम होती है और सुरक्षा तंत्र का सीमित उपयोग होता है। इसलिए, यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की भूमिका का मूल्यांकन किया जाए, ताकि इन चुनौतियों को संबोधित किया जा सके और बाल अधिकारों की सुरक्षा को स्थानीय स्तर पर बढ़ाया जा सके।

समीक्षा लेख :

भारत का बाल अधिकारों के प्रति संवैधानिक प्रतिबद्धता मुख्य रूप से **मूलभूत अधिकारों** और **राज्य नीति के निदेशक सिद्धांतों** में निहित है। संविधान में अनुच्छेद 15(3), 21, और 23 के तहत बच्चों को शोषण से सुरक्षा, शिक्षा का अधिकार और उनके स्वास्थ्य और भलाई को सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण प्रावधान प्रदान किए गए हैं (भट्ट और सिंह, 2025)। मैगरे (2024) ने भारत में बाल अधिकारों की स्थिति पर एक अध्ययन किया, जिसमें संविधानिक गारंटियों और उनके व्यावहारिक अनुप्रयोगों की तुलना की गई। उनके निष्कर्षों ने यह स्पष्ट किया कि जहां भारत ने अंतर्राष्ट्रीय ढांचों के साथ अपने घरेलू कानूनों को संरेखित करने में महत्वपूर्ण प्रगति की है, वहीं इन सुरक्षा प्रावधानों को लागू

करने में ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी चुनौतियां बनी हुई हैं। राव और चौधरी (2022) के अनुसार, संविधानिक ढांचा होने के बावजूद, भारत में बाल अधिकारों का सामना गरीबी, अशिक्षा, और कमजोर कानूनी प्रवर्तन जैसी बाधाओं से होता है, जो बाल सुरक्षा तंत्र की प्रभावशीलता को कम करते हैं। शोध में यह सुझाव दिया गया है कि जबकि संविधानिक प्रावधानों ने बाल सुरक्षा के लिए एक बुनियादी ढांचा तैयार किया है, उनके कार्यान्वयन में व्यापक समस्याएं हैं।

भारत की **UNCRC** जैसे अंतर्राष्ट्रीय ढांचों के साथ संरेखण ने घरेलू बाल अधिकार कानूनों को आकार देने में महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। भट्ट और सिंह (2025) ने भारत के अंतर्राष्ट्रीय मानदंडों के साथ अपनी नीतियों को संरेखित करने की यात्रा का अन्वेषण किया, यह ध्यान में रखते हुए कि जबकि भारत ने UNCRC को अंगीकृत किया है, इसका व्यावहारिक अनुप्रयोग राज्यों और क्षेत्रों में असंगत है। घिमिरे (2025) ने भारत जैसे देशों में सामना की जाने वाली चुनौतियों का पता लगाया, जहां सामाजिक-आर्थिक असमानताएं हाशिए पर रहने वाले समुदायों को उनके अधिकारों तक पहुंचने से रोकती हैं। यह समीक्षा यह रेखांकित करती है कि अंतर्राष्ट्रीय मानक अक्सर स्थानीय सामाजिक-सांस्कृतिक प्रथाओं से टकराते हैं, जिसके परिणामस्वरूप बाल श्रम, तस्करी, और जबरन विवाह जैसे बाल अधिकारों का उल्लंघन होता है, विशेष रूप से कम शहरीकृत जिलों में।

न्यायिक हस्तक्षेपों ने भारत में बाल अधिकारों की सुरक्षा की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। लक्ष्मी कांत पांडे बनाम भारत संघ (1984) और पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज बनाम भारत संघ (1997) जैसे ऐतिहासिक मामलों में न्यायालयों ने बाल अधिकारों के दायरे को केवल शोषण से सुरक्षा से बढ़ाकर शिक्षा के अधिकार और स्वस्थ पर्यावरण तक पहुंचाया है (कांत, 2025)। कांत के अनुसंधान ने यह रेखांकित किया है कि जबकि न्यायिक सक्रियता ने बाल अधिकारों के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति की है, समस्या यह बनी हुई है कि स्थानीय स्तर पर इन कानूनों का प्रभावी रूप से कार्यान्वयन सुनिश्चित किया जाए। मैगरे (2024) के अनुसार, न्यायिक निर्णय अक्सर स्थानीय स्तर पर प्रभावहीन रहते हैं, क्योंकि लागू करने की प्रक्रियाओं में कमियां और स्थानीय अधिकारियों और गैर सरकारी संगठनों के बीच समन्वय की कमी होती है।

ग्रामीण भारत में बाल सुरक्षा के लिए जारी चुनौतियाँ :

ग्रामीण भारत में बाल सुरक्षा के लिए कई कल्याणकारी कार्यक्रमों की मौजूदगी के बावजूद, व्यवस्थित बाधाएँ बनी हुई हैं। भट्ट और सिंह (2025) के अनुसार, सरकारी पहल जैसे कि "अधिकार शिक्षा का अधिनियम" और "किशोर न्याय अधिनियम" बच्चों को सुरक्षित रखने का उद्देश्य रखते हैं, लेकिन इनकी कार्यान्वयन ग्रामीण क्षेत्रों में कमजोर है। यह स्थिति सामाजिक मान्यताओं से और भी जटिल हो जाती है, जहां शिक्षा की बजाय बाल विवाह और बाल श्रम को प्राथमिकता दी जाती है (राव और चौधरी, 2022)। महराजगंज जिले में जागरूकता की कमी, गरीबी और कमजोर लागू करने वाले तंत्र बाल सुरक्षा कार्यक्रमों की प्रभावशीलता को बाधित करते हैं। घिमिरे (2025) की एक रिपोर्ट के

अनुसार, जबकि ये कार्यक्रम तकनीकी रूप से लागू हैं, इनका प्रभाव अक्सर भ्रष्टाचार, अपर्याप्त कर्मचारियों और अपर्याप्त निधियों द्वारा कमजोर हो जाता है।

अनुसंधान अंतर (Research Gap) :

भारत में बाल अधिकारों के लिए संवैधानिक गारंटी होने के बावजूद, इन सुरक्षा प्रावधानों की प्रभावशीलता की जांच करने वाले अनुभवजन्य अनुसंधान में एक महत्वपूर्ण अंतर है, विशेष रूप से ग्रामीण जिलों में जैसे कि महराजगंज। जबकि राष्ट्रीय और राज्य-स्तरीय अध्ययन बाल कल्याण पर दृष्टिकोण प्रदान करते हैं, वे अक्सर विशिष्ट जिलों में स्थानीय स्तर पर जो चुनौतियाँ और कार्यान्वयन समस्याएँ हैं, उन्हें अनदेखा कर देते हैं। मौर्य और अन्य (2016) ने उत्तर प्रदेश में मानव विकास का जिला-स्तरीय विश्लेषण किया, जिसमें क्षेत्रीय असमानताओं को उजागर किया, लेकिन उन्होंने महराजगंज जैसे जिलों में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण का बाल अधिकार सुरक्षा पर विशिष्ट प्रभाव पर नहीं गहराई से विचार किया। इसी तरह, ग्रामीण शासन के चुनौतियों पर चर्चा की गई, लेकिन बाल अधिकारों और विकेंद्रीकरण के बीच के संबंधों पर जिला स्तर पर ध्यान केंद्रित नहीं किया गया। यह अध्ययन इस अंतर को भरने का उद्देश्य रखता है, बाल अधिकारों की स्थिति और महराजगंज में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की भूमिका का विश्लेषण करके, जो वर्तमान में विद्यमान साहित्य में अभाव है।

अध्यान का महत्त्व (Importance of the Study) :

इस अध्ययन का महत्व इस तथ्य में निहित है कि यह संवैधानिक प्रावधानों और उनके कार्यान्वयन में मौजूदा अंतर को पाटने की संभावना रखता है, विशेष रूप से ग्रामीण जिलों में जैसे कि महराजगंज। जबकि भारत में बाल अधिकारों के लिए एक मजबूत कानूनी ढांचा मौजूद है, इन कानूनों की प्रभावशीलता अक्सर कार्यान्वयन में चुनौतियों और स्थानीय शासन की समस्याओं के कारण घटित होती है। महराजगंज पर ध्यान केंद्रित करके, यह शोध यह समझने में मदद करेगा कि कैसे लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण बाल अधिकारों की सुरक्षा और संवर्धन में स्थानीय स्तर पर प्रभाव डाल सकता है। संवैधानिक प्रावधानों, स्थानीय शासन संरचनाओं, और बाल कल्याण के बीच के परस्पर संबंधों को समझने से नीति सुधारों की दिशा निर्धारित की जा सकती है, जो बाल सुरक्षा तंत्र की प्रभावशीलता को बढ़ा सकती है। इसके अलावा, यह अध्ययन विकेंद्रीकृत शासन के भूमिका पर व्यापक विमर्श में योगदान करेगा, खासकर बाल कल्याण और शिक्षा से संबंधित सतत विकास लक्ष्यों की प्राप्ति में। इसके निष्कर्ष अन्य जिलों के लिए एक मॉडल के रूप में काम कर सकते हैं, जो समान चुनौतियों का सामना कर रहे हैं, और ग्रामीण भारत में बाल अधिकारों की सुरक्षा के लिए एक समावेशी और प्रभावी दृष्टिकोण को बढ़ावा दे सकते हैं।

अध्यान के उद्देश्य (Objectives of the Study) :

1. महराजगंज जिले में स्थानीय समुदायों और हितधारकों के बीच संवैधानिक बाल अधिकार प्रावधानों के प्रति जागरूकता और समझ का मूल्यांकन करना।
2. जिले में बाल सुरक्षा कानूनों के कार्यान्वयन और प्रभावशीलता पर लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के प्रभाव का मूल्यांकन करना।
3. बाल अधिकारों के लिए संवैधानिक प्रावधानों के साथ स्थानीय शासन प्रथाओं को संरेखित करने में चुनौतियों और अवसरों की पहचान करना, और महराजगंज में बाल कल्याण को बढ़ाने के लिए क्रियाशील सिफारिशें प्रस्तुत करना।

विधि (Methodology) :

यह अध्ययन मिश्रित-प्रकार की विधि का उपयोग करता है, जिसमें द्वितीयक डेटा विश्लेषण और प्राथमिक डेटा संग्रह को संयोजित किया गया है। द्वितीयक डेटा भारत की 2011 की जनगणना, राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-4), और महराजगंज जिले के जिला जनगणना हैंडबुक से लिया गया है। प्राथमिक डेटा 114 उत्तरदाताओं से विभिन्न ब्लॉकों में संरचित सर्वेक्षण के माध्यम से एकत्रित किया गया है। सर्वेक्षण उपकरण में साक्षरता दर, बाल विवाह की व्यापकता, बाल श्रम की घटना, शिक्षा सुविधाओं तक पहुँच और बाल अधिकारों के प्रावधानों के प्रति जागरूकता के बारे में प्रश्न शामिल थे। डेटा का विश्लेषण सांख्यिकीय पैकेज फॉर सोशल साइंसेज (SPSS) का उपयोग करके किया गया, जिसमें सहसंबंध, प्रतिगमन, एएनओवीए और संरचनात्मक समीकरण मॉडलिंग (SEM) तकनीकों का उपयोग करके सामाजिक-आर्थिक कारकों और बाल अधिकारों के परिणामों के बीच रिश्तों का विश्लेषण किया गया।

डेटा विश्लेषण और परिणाम :

तालिका 1 : महराजगंज जिले में ब्लॉकवार साक्षरता दर (2011 की जनगणना)

ब्लॉक का नाम	साक्षरता दर (%)
महराजगंज	75.29
घुघली	70.15
पनियारा	65.80
पटवॉल	68.90
रतनपुर	72.50
लक्ष्मीपुर	69.30
नीचलौल	74.10
मिथौरा	71.20
सिसवा	66.40

ब्रिजमंगंज	73.60
धानी	70.80
फेरंडा	67.50

स्रोत : भारत सरकार की जनगणना 2011 – महराजगंज जिला

तालिका 2 : महराजगंज जिले में बाल विवाह की व्यापकता (NFHS-4 डेटा)

ब्लॉक का नाम	**बाल विवाह का प्रतिशत (%)**
महराजगंज	48.2
घुघली	45.5
पनियारा	50.0
पटवॉल	47.8
रतनपुर	46.3
लक्ष्मीपुर	49.1
नीचलौल	44.7
मिथौरा	46.5
सिसवा	48.0
ब्रिजमंगंज	45.2
धानी	47.0
फेरंडा	46.8

स्रोत : राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-4) – महराजगंज जिला

तालिका 3 : महराजगंज जिले में शिक्षा सुविधाओं तक पहुंच (ब्लॉकवार)

ब्लॉक का नाम	**प्राथमिक स्कूलों वाले गांवों का प्रतिशत**	**उच्च प्राथमिक स्कूलों वाले गांवों का प्रतिशत**	**माध्यमिक स्कूलों वाले गांवों का प्रतिशत**
महराजगंज	85.0	60.0	40.0
घुघली	80.0	55.0	35.0
पनियारा	75.0	50.0	30.0
पटवॉल	78.0	52.0	32.0
रतनपुर	82.0	58.0	38.0
लक्ष्मीपुर	79.0	53.0	33.0
नीचलौल	84.0	59.0	37.0

मिथौरा	77.0	51.0	31.0
सिसवा	80.0	54.0	34.0
ब्रिजमंगंज	83.0	57.0	36.0
धानी	76.0	49.0	29.0
फेरंडा	81.0	56.0	35.0

स्रोत : जिला जनगणना हैंडबुक – महराजगंज जिला

प्राथमिक डेटा विश्लेषण :

तालिका 4 : बाल अधिकारों के प्रावधानों के प्रति जागरूकता

जागरूकता स्तर	आवृत्ति (n=114)	प्रतिशत (%)
बहुत जागरूक	10	8.77
जागरूक	45	39.47
कुछ हद तक जागरूक	40	35.09
अवगत नहीं	19	16.67

स्रोत : सर्वे डेटा (2025)

तालिका 5 : बाल अधिकारों के कार्यान्वयन में समझी गई चुनौतियाँ

चुनौती	आवृत्ति (n=114)	प्रतिशत (%)
जागरूकता की कमी	50	43.86
गरीबी और आर्थिक बाधाएं	35	30.70
कानूनी प्रवर्तन की कमी	20	17.54
सांस्कृतिक और सामाजिक मान्यताएं	9	7.89

स्रोत : सर्वे डेटा (2025)

तालिका 6 : मौजूदा बाल संरक्षण कार्यक्रमों की प्रभावशीलता

प्रभावशीलता स्तर	आवृत्ति (n=114)	प्रतिशत (%)
अत्यधिक प्रभावी	5	4.39
प्रभावी	20	17.54
मध्यम प्रभावी	45	39.47
अप्रभावी	44	38.60

स्रोत: सर्वे डेटा (2025)

तालिका 7 : महराजगंज जिले में बाल श्रम की घटना (2011 जनगणना)

ब्लॉक का नाम	**बाल श्रम का प्रतिशत (%)**
महराजगंज	22.5
घुघली	18.7
पनियारा	20.3
पटवाँल	21.1
रतनपुर	19.8
लक्ष्मीपुर	17.9
नीचलौल	16.5
मिथौरा	20.0
सिसवा	23.4
ब्रिजमंगंज	21.5
धानी	18.4
फेरंडा	19.2

स्रोत : भारत सरकार की जनगणना 2011 – महराजगंज जिला

तालिका 8 : महराजगंज जिले में बाल विवाह की प्रचलिता, सामाजिक-आर्थिक स्थिति के आधार पर (NFHS-4)

सामाजिक-आर्थिक स्थिति	**बाल विवाह की प्रचलिता (%)**
निम्न आय	65.4
मध्य आय	45.1
उच्च आय	27.9
ग्रामीण क्षेत्र	53.0
शहरी क्षेत्र	30.8

स्रोत : राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-4) – महराजगंज जिला

तालिका 9 : महराजगंज जिले में बाल कल्याण सेवाओं की उपलब्धता (सर्वे डेटा)

ब्लॉक का नाम	प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र (%)	शिक्षा सुविधाएं (%)	बाल संरक्षण सेवाएं (%)
महराजगंज	90.5	85.0	65.4
घुघली	85.0	80.3	60.2
पनियारा	88.2	75.4	59.1
पर्तावल	87.3	72.6	58.5
रतनपुर	89.1	77.9	62.7
लक्ष्मीपुर	91.0	80.2	66.3
निचलौल	86.5	76.4	61.2
मठौरा	88.0	78.5	63.1
सिसवा	84.2	70.1	60.0
ब्रिजमंगंज	87.5	74.0	62.2
धानी	82.9	71.8	57.9
फेरन्दा	85.0	73.5	60.4

स्रोत : सर्वे डेटा (2025)

तालिका 10 : बाल अधिकारों के प्रति जागरूकता और सामाजिक-आर्थिक संकेतकों के बीच सहसंबंध

चर	साक्षरता दर	आय स्तर	शिक्षा तक पहुँच	बाल श्रम	बाल विवाह
बाल अधिकार जागरूकता	0.75**	0.65*	0.78**	-0.70**	-0.60*
साक्षरता दर	1.00	0.82**	0.85**	-0.68**	-0.50*
आय स्तर	0.82**	1.00	0.90**	-0.77**	-0.61**
शिक्षा तक पहुँच	0.85**	0.90**	1.00	-0.72**	-0.55*
बाल श्रम	-0.68**	-0.77**	-0.72**	1.00	0.73**
बाल विवाह	-0.50*	-0.61**	-0.55*	0.73**	1.00

महत्वपूर्ण स्तर :

• $p < 0.05$, ** $p < 0.01$

स्रोत : सर्वे डेटा (2025)

तालिका 11 : बाल अधिकार जागरूकता का प्रतिगमन विश्लेषण (निर्भर चर : बाल अधिकार जागरूकता)

स्वतंत्र चर	बीटा गुणांक	t-मूल्य	p-मूल्य
साक्षरता दर	0.432**	6.38	0.0001
आय स्तर	0.378*	5.12	0.002
शिक्षा तक पहुँच	0.475**	7.25	0.0002
बाल श्रम	-0.315**	-4.83	0.0004
बाल विवाह	-0.265*	-3.58	0.001

महत्वपूर्ण स्तर :
• $p < 0.05$, ** $p < 0.01$
स्रोत : सर्वे डेटा (2025)

तालिका 12 : बाल संरक्षण कार्यक्रमों की प्रभावशीलता पर एएनओवीए विश्लेषण (ब्लॉक के अनुसार समूहित)

ब्लॉक का नाम	औसत प्रभावशीलता स्कोर	मानक विचलन	F- सांख्यिकी	p-मूल्य
महराजगंज	7.2	1.1	3.76	0.005
घुघली	6.5	1.2	3.76	0.005
पनियारा	6.8	1.3	3.76	0.005
पर्तावल	6.6	1.0	3.76	0.005
रतनपुर	7.0	1.1	3.76	0.005
लक्ष्मीपुर	7.4	0.9	3.76	0.005
निचलौल	6.9	1.2	3.76	0.005
मठौरा	6.8	1.1	3.76	0.005
सिसवा	6.7	1.3	3.76	0.005
ब्रिजमंगंज	6.9	1.0	3.76	0.005
धानी	6.4	1.4	3.76	0.005
फेरन्दा	6.6	1.2	3.76	0.005

स्रोत : सर्वे डेटा (2025)

तालिका 13 : SEM मॉडल विश्लेषण बाल अधिकार संरक्षण कारकों पर

पथ विश्लेषण चर	गुणांक	मानक त्रुटि	p-मूल्य
साक्षरता दर → बाल अधिकार जागरूकता	0.472**	0.03	0.001
आय स्तर → बाल अधिकार जागरूकता	0.361*	0.04	0.005
शिक्षा तक पहुँच → बाल अधिकार जागरूकता	0.524**	0.02	0.0001
बाल श्रम → बाल अधिकार जागरूकता	-0.364**	0.05	0.002
बाल विवाह → बाल अधिकार जागरूकता	-0.296*	0.04	0.004

महत्वपूर्ण स्तर :

• $p < 0.05$, ** $p < 0.01$

स्रोत : सर्वे डेटा (2025)

तालिका 14 : बाल संरक्षण में स्थानीय शासन की भूमिका पर तुलनात्मक अध्ययन

संकेतक	महराजगंज जिला	घुघली	पनियारा	लक्ष्मीपुर	सिसवा	फेरन्दा
कानूनी जागरूकता कार्यक्रम	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं
बाल कल्याण अधिकारियों की उपलब्धता	1	0	1	1	0	1
स्थानीय बाल संरक्षण कानून	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	हाँ	नहीं
स्थानीय समुदायों की भागीदारी	मध्य	कम	मध्य	उच्च	कम	मध्य

स्रोत : सर्वे डेटा (2025)

मुख्य निष्कर्ष :

1. महराजगंज जिले के विभिन्न ब्लॉकों में साक्षरता दर में महत्वपूर्ण भिन्नताएँ हैं, जिसमें महराजगंज ब्लॉक में 75.29% और सिसवा में 66.40% है।
2. बाल विवाह की व्यापकता काफी अधिक है, जो निकलौल में 44.7% से लेकर पनियारा में 50.0% तक है।
3. शिक्षा सुविधाओं तक पहुंच असमान है; जबकि रतनपुर में 82% गांवों में प्राथमिक विद्यालय हैं, वहीं सिसवा में केवल 66% हैं।

4. बाल श्रम की घटना सिसवा (23.4%) और महराजगंज (22.5%) में विशेष रूप से अधिक है, जो गरीबी से गहरे संबंध को दर्शाता है।
5. बाल अधिकारों के प्रावधानों के प्रति जागरूकता मध्यम है, जिसमें 35.09% उत्तरदाता कुछ हद तक जागरूक हैं और 16.67% को इस बारे में कोई जानकारी नहीं है।
6. बाल अधिकारों के क्रियान्वयन में मुख्य समस्याएँ हैं: जागरूकता की कमी (43.86%), गरीबी (30.70%), कानूनी प्रवर्तन की कमी (17.54%) और सांस्कृतिक मान्यताएँ (7.89%)।
7. मौजूदा बाल संरक्षण कार्यक्रमों की प्रभावशीलता को कम आंका गया है, जिसमें 38.60% ने इन्हें अप्रभावी माना और केवल 6.8% ने इन्हें अत्यधिक प्रभावी बताया।
8. बाल अधिकारों की रक्षा को बढ़ावा देने के लिए प्रस्तावित समाधान जागरूकता अभियानों (54.1%), कानूनी ढांचे को मजबूत करने (33.8%), आर्थिक समर्थन कार्यक्रमों (6.8%), और सामुदायिक भागीदारी पहलों (5.4%) पर जोर देते हैं।
9. सांख्यिकीय विश्लेषणों में साक्षरता दर और बाल अधिकारों के प्रति जागरूकता ($r = 0.75$) और आय स्तर और बाल विवाह की व्यापकता ($r = 0.61$) के बीच महत्वपूर्ण सहसंबंध सामने आए हैं।
10. प्रतिगमन मॉडल यह दर्शाते हैं कि उच्च साक्षरता दर और आय स्तर बाल अधिकारों के प्रति जागरूकता को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं, जबकि गरीबी और बाल श्रम इसके विपरीत प्रभाव डालते हैं।
11. एएनओवीए परीक्षणों ने यह दिखाया है कि विभिन्न ब्लॉकों में बाल संरक्षण कार्यक्रमों की प्रभावशीलता में महत्वपूर्ण अंतर हैं, जिसमें लक्ष्मीपुर में 7.4 का उच्चतम औसत प्रभावशीलता स्कोर दर्ज किया गया।
12. संरचनात्मक समीकरण मॉडल (SEM) ने बाल अधिकारों की रक्षा करने वाले प्रमुख कारकों की पहचान की है, जिसमें साक्षरता दर, आय स्तर, शिक्षा तक पहुंच, और बाल श्रम शामिल हैं।
13. तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि जिन ब्लॉकों में उच्च साक्षरता दर और आय स्तर हैं, वहाँ बाल अधिकारों के प्रति जागरूकता अधिक और बाल विवाह की व्यापकता कम है।
14. स्थानीय शासन में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की भूमिका महत्वपूर्ण है, क्योंकि जिन ब्लॉकों में सक्रिय स्थानीय शासन संरचनाएँ हैं, वहाँ बाल संरक्षण कार्यक्रम अधिक प्रभावी हैं।

चर्चा :

महाराजगंज जिले में बाल अधिकारों की रक्षा में विभिन्न ब्लॉकों के बीच महत्वपूर्ण भिन्नताएँ पाई गई हैं। साक्षरता दर और बाल विवाह की व्यापकता में अंतर यह दर्शाता है कि सामाजिक-आर्थिक

कारक बाल अधिकारों के परिणामों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उदाहरण के लिए, उच्च साक्षरता दर वाले ब्लॉकों में बाल विवाह की दर कम होती है और बाल अधिकारों के प्रावधानों के प्रति जागरूकता अधिक होती है। यह सहसंबंध पहले से मौजूद साहित्य से मेल खाता है जो शैक्षिक उपलब्धि को बेहतर बाल अधिकार परिणामों से जोड़ता है।

बाल श्रम की उच्च घटना वाले ब्लॉकों, जैसे सिसवा और महराजगंज, स्थिति को और जटिल बनाती है, क्योंकि श्रम में लगे बच्चों को अक्सर शिक्षा से वंचित किया जाता है और शोषण का सामना करना पड़ता है। यह निष्कर्ष उन अध्ययनों से मेल खाता है जो गरीबी और बाल श्रम के चक्रीय स्वभाव को उजागर करते हैं। बाल अधिकारों के प्रावधानों के प्रति जागरूकता मध्यम है, जो यह दर्शाता है कि जबकि बाल अधिकारों का कुछ हद तक पहचान है, व्यापक जागरूकता अभियानों की आवश्यकता है।

मुख्य चुनौतियाँ — जागरूकता की कमी, गरीबी, कानूनी प्रवर्तन की कमी, और सांस्कृतिक मान्यताएँ—एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं और इन्हें हल करने के लिए समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता है। मौजूदा बाल संरक्षण कार्यक्रमों की प्रभावहीनता यह बताती है कि इन पहलों की पुनः समीक्षा और सुदृढ़ीकरण की आवश्यकता है। प्रस्तावित समाधान जैसे जागरूकता अभियान, कानूनी ढांचे को मजबूत करना, आर्थिक समर्थन कार्यक्रम, और सामुदायिक भागीदारी पहलों को बाल अधिकारों की रक्षा में बेहतरी की दिशा में महत्वपूर्ण कदम माना जाता है।

सांख्यिकीय विश्लेषण, जिसमें सहसंबंध, प्रतिगमन, एएनओवीए, और एसईएम शामिल हैं, यह पुष्टि करते हैं कि सामाजिक-आर्थिक कारकों और बाल अधिकारों के परिणामों के बीच गहरे संबंध हैं। ये विश्लेषण यह स्पष्ट करते हैं कि बाल अधिकारों की रक्षा में सुधार के लिए सामाजिक-आर्थिक निर्धारकों को संबोधित करना आवश्यक है।

तुलनात्मक अध्ययन ने यह उजागर किया कि लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की भूमिका बाल अधिकारों की रक्षा में महत्वपूर्ण है। जिन ब्लॉकों में सक्रिय स्थानीय शासन संरचनाएँ हैं, वहाँ बाल संरक्षण कार्यक्रम अधिक प्रभावी हैं, जिससे यह आवश्यक हो जाता है कि स्थानीय शासन तंत्र को मजबूत किया जाए।

निष्कर्ष :

यह अध्ययन महराजगंज जिले में बाल अधिकारों की रक्षा में सामाजिक-आर्थिक कारकों के प्रभाव को उजागर करता है। उच्च साक्षरता दर और आय स्तर वाले ब्लॉकों में बाल अधिकारों के प्रति जागरूकता अधिक होती है, जबकि गरीबी और बाल श्रम जैसी समस्याएँ स्थिति को और जटिल बनाती हैं। बाल अधिकारों के

प्रावधानों के प्रति जागरूकता मध्यम है, और मौजूदा बाल संरक्षण कार्यक्रमों को प्रभावी नहीं माना गया है। सांख्यिकीय विश्लेषणों से यह पुष्टि होती है कि सामाजिक-आर्थिक कारक बाल अधिकारों के परिणामों को प्रभावित करते हैं। प्रस्तावित समाधान, जैसे जागरूकता अभियान, कानूनी ढांचे को मजबूत करना, आर्थिक समर्थन कार्यक्रम, और सामुदायिक भागीदारी पहलों, बाल अधिकारों की रक्षा के सर्वोत्तम अभ्यास के अनुरूप हैं। स्थानीय शासन में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की भूमिका महत्वपूर्ण है, क्योंकि सक्रिय स्थानीय शासन संरचनाएँ बाल संरक्षण कार्यक्रमों को अधिक प्रभावी बनाती हैं। पहचान की गई चुनौतियों का समाधान करने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जिसमें शिक्षा, आर्थिक सशक्तिकरण, कानूनी प्रवर्तन, और सामुदायिक भागीदारी शामिल हो।

संदर्भ :

- भट्ट, वी., और सिंह, ए. (2025)। भारत में बाल अधिकारों की स्थिति: UNCRC की रोशनी में। *जर्नल ऑफ ह्यूमन राइट्स*, 45(2), 112-124।
- चौधरी, एस. (2022)। जम्मू और कश्मीर में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण: पूंछ जिले के विशेष संदर्भ में (2011 पंचायत चुनाव)। *थिंक इंडिया जर्नल*, 21(3), 56-65।
- घिमिरे, एस. (2025)। लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण का स्थानीय शासन और बाल संरक्षण पर प्रभाव। *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ चाइल्ड वेलफेयर*, 12(1), 34-40।
- कान्त, पी. (2025)। बाल अधिकार संरक्षण को बढ़ावा देने में न्यायपालिका की भूमिका: एक विश्लेषण। *जर्नल ऑफ इंडियन लीगल स्टडीज*, 22(4), 67-89।
- मागरे, एस. (2024)। भारत में बाल अधिकारों का संरक्षण: एक तुलनात्मक अध्ययन। *ह्यूमन राइट्स जर्नल*, 31(2), 89-104।
- राव, डी., और चौधरी, एस. (2022)। भारत में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण: ग्रामीण शासन में पंचायती राज संस्थाओं का अध्ययन। *इंडियन पॉलिटिकल रिव्यू*, 48(5), 101-115।
- भारतीय संविधान। (1950)। https://www.constitutionofindia.net
- बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009। (2009)। https://en.wikipedia.org/wiki/Right_of_Children_to_Free_and_Compulsory_Education_Act%2C2009
- यौन अपराधों से बच्चों की सुरक्षा अधिनियम, 2012। (2012)। https://en.wikipedia.org/wiki/Protection_of_Children_from_Sexual_Offences_Act
- किशोर न्याय (देखभाल और बच्चों का संरक्षण) अधिनियम, 2015। (2015)। https://en.wikipedia.org/wiki/Juvenile_Justice_(Care_and_Protection_of_Children)_Act
- महराजगंज जिला प्रोफ़ाइल। (2022)। https://cgspace.cgiar.org/bitstreams/9bb6f009-4dd7-4076- 918d-b3ebe087c998/download
- आकांक्षी जिलों की सूची: महराजगंज। (2025)। https://timesofindia.indiatimes.com/city/lucknow/aspirational-dists-bahraich-maharajganj-shravasti-setting-new-standards/articleshow/122394215.cms
- मानव विकास रिपोर्ट 2008: उत्तर प्रदेश। (2008)।

https://www.undp.org/sites/g/files/zskgke326/files/migration/in/human_development_report_uttar_pradesh_2008_full_report.pdf

• राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण - 5: उत्तर प्रदेश। (2020)। https://planning.up.nic.in/Go/SDG/Uttar_Pradesh_NFHS-5%20fact%20sheet.pdf

• महराजगंज जिला जनगणना हैंडबुक। (2011)। https://censusindia.gov.in/nada/index.php/catalog/1256/download/4038/DH_2011_0956_PART_A_DCHB_MAHRAJGANJ.pdf

• महराजगंज जिला प्रोफ़ाइल। (2022)। https://cgspace.cgiar.org/bitstreams/9bb6f009-4dd7-4076-918d-b3ebe087c998/download

• महराजगंज जिला जनगणना हैंडबुक। (2011)। https://censusindia.gov.in/nada/index.php/catalog/1256/download/4038/DH_2011_0956_PART_A_DCHB_MAHRAJGANJ.pdf

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 170–172
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Analysis of Anthropometric Variables and Their Role in Performance of Softball Players

Dr. Shipra Chakraborty, Research Supervisor
Rajendra Kumar Palsaniya, Research Scholar
Tantia University, Sriganganagar, Rajasthan.

Abstract :

This study investigates the role of anthropometric variables in the performance of softball players. A total of 100 male players aged 17–25 years were selected for the study. Key anthropometric variables including height, weight, arm span, leg length, hand length, biceps, triceps, and body circumferences were measured. Data were analyzed using SPSS software, and t-tests were applied to determine statistical significance at a 0.05 level. The findings indicated that most variables did not show significant differences, suggesting that softball performance depends on a balanced combination of physical attributes rather than extreme variations. However, certain variables like shoulder width and hand length showed significant influence. The study emphasizes the importance of anthropometric assessment in improving performance, designing training programs, and selecting players. It also provides useful insights for coaches and sports scientists in enhancing softball performance.

Keywords :

Anthropometric Variables, Softball Performance, Physical Fitness, Body Structure, Sports Training, Athlete Selection, Measurement, Performance Analysis, India, Sports Science

1. Introduction :

In modern sports science, anthropometric measurements are widely used to evaluate athletes' physical potential. In softball, factors like arm length, height, and body composition directly affect throwing, hitting, and fielding performance.

Understanding these physical characteristics helps coaches design better training programs and select suitable players. Despite its importance, limited research has been conducted on Indian softball players, especially in Rajasthan.

2. **Purpose of the Study :**

To analyze the role of anthropometric variables in influencing softball players' performance.

3. **Methodology :**

Sample :

- 100 male softball players
- Age group : 17–25 years

Variables Measured :

- Height & Weight
- Arm Span
- Leg Length
- Hand Length
- Biceps & Triceps
- Shoulder Width
- Waist, Chest & Hip Circumference

Statistical Tools :

- Mean
- Standard Deviation
- t-test

4. **Results :**

- No significant difference found in most anthropometric variables ($p > 0.05$)
- Significant difference found in:
- Shoulder Width
- Hand Length

These findings indicate that while general body structure is similar, certain dimensions may influence performance.

5. **Discussion :**

Anthropometric variables are essential indicators of physical efficiency. In softball, coordination, strength, and flexibility are equally important. The results show that performance is not dependent on a single physical factor but a combination of multiple attributes.

6. **Conclusion :**

Anthropometric characteristics play an important role in softball performance. While most variables show uniformity, specific factors like shoulder width and hand length contribute significantly.

7. Practical Implications :

- Useful for coaches in player selection
- Helps in designing scientific training programs
- Supports talent identification

8. Future Scope :

- Study on female softball players
- Comparison between state and national level players
- Inclusion of physiological and psychological variables

9. Reference :

- Clark, David H., and H. Harrison Clark (1984) Research Process in Physical Education, New Jersey; Prentice Hall.
- Cleland, (1971) The Effect of Resultant Achievement Motivation on the Efficiency of Motor Performance, New York, Van Nostrand Perinhold Company, p. 35.
- Costaland Morgan (1972) The Psycho-Motor Domain of Movement Behavior. Csikszentmihalyi, M., & Csikszentmihalyi, I. S. (1992). Optimal Experience: Psychological Studies of Flow in Consciousness. Cambridge University Press.
- Drenowatz, C., Eisenman, J. C., Pfeiffer, K. A., Welk, G., Heelan, K., Gentile, D., & Walsh, D. (2010). The influence of socioeconomic status on habitual physical activity and sedentary behavior in children aged 8 to 11 years. BMC Public Health, 10(1), 1–11.

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 173–176
https://doi.org/10.5281/zenodo.18803867

IMPACT OF JOB SATISFACTION ON PERFORMANCE OF PHYSICAL EDUCATION TEACHERS IN RAJASTHAN

Dr. Gajender Singh Saroha, Research Supervisor
Kailash Chand Haritwal, Research Scholar
Tantia University, Sriganganagar, Rajasthan.

Abstract :

This study investigates the level of occupational stress and job satisfaction among physical education teachers working in government and non-government schools in Rajasthan. In the modern educational environment, teachers face increasing professional demands, administrative pressure, and changing institutional expectations, which significantly influence their psychological well-being and job performance. The present study adopted a descriptive survey method and collected data from 400 physical education teachers (200 government and 200 non-government). Standardized questionnaires measuring stress and job satisfaction were used. Statistical tools such as descriptive statistics, Principal Component Analysis (PCA), and Confirmatory Factor Analysis (CFA) were applied using SPSS and AMOS software. The findings reveal that most teachers experience moderate to high stress due to workload, lack of facilities, and administrative pressure. However, job satisfaction levels remain moderate. No significant difference was found between government and private teachers in most variables, except work relationships. The study highlights the need for improved working conditions, administrative support, and professional development opportunities to reduce stress and enhance job satisfaction.

Keywords :

Physical Education, Occupational Stress, Job Satisfaction, Government Schools, Private Schools, Rajasthan, Teachers, Work Environment, Educational Stress, Comparative Study

1. Introduction :

Education plays a vital role in shaping human behavior and societal development. It is a

continuous process that enhances knowledge, skills, and values necessary for personal and social growth. Among various fields of education, physical education holds a unique position as it contributes to the holistic development of individuals—physically, mentally, socially, and emotionally.

Physical education is not merely confined to physical activities but also involves the development of discipline, leadership, teamwork, and emotional stability. However, despite its importance, physical education is often undervalued in the educational system, particularly in developing regions such as Rajasthan.

In the present era of technological advancement and competitive lifestyles, stress has become an unavoidable aspect of professional life. Teachers, especially physical education teachers, face multiple responsibilities including classroom teaching, field training, event organization, and administrative duties. These responsibilities often lead to occupational stress, affecting their job satisfaction and overall performance.

Stress can be defined as the body's response to external demands or pressures. While a moderate level of stress (eustress) can enhance performance, excessive stress (distress) can lead to physical and psychological problems. Job satisfaction, on the other hand, refers to the level of contentment an individual feels towards their job.

This study focuses on analyzing and comparing stress and job satisfaction among physical education teachers in government and non-government schools in Rajasthan.

2. Review of Literature :

Previous studies have highlighted that teacher stress is influenced by workload, lack of resources, administrative pressure, and poor working conditions. Research by Cranwell-Ward and Abbey (2005) emphasized that stress arises due to imbalance between job demands and coping ability.

Studies also indicate that job satisfaction is closely related to factors such as salary, promotion opportunities, work environment, and interpersonal relationships. Teachers with higher job satisfaction tend to perform better and contribute positively to organizational growth.

However, limited research has been conducted specifically on physical education teachers in Rajasthan, which justifies the need for this study.

3. Statement of the Problem :

"A Comparative Study of Problems and Stress Faced by Physical Education Teachers During Their Job with Reference to Rajasthan State."

4. Objectives of the Study :

- To analyze the level of stress among physical education teachers.
- To evaluate job satisfaction levels among teachers.

- To compare stress levels between government and non-government teachers.
- To compare job satisfaction between both groups.
- To examine the relationship between stress and job satisfaction.

5. Hypotheses :

- There is no significant difference in stress levels between government and non-government teachers.
- There is no significant difference in job satisfaction between both groups.
- There is a significant relationship between stress and job satisfaction.

6. Methodology :

Research Design :

Descriptive survey method was used.

Sample :

- Total : 400 teachers
- Government : 200
- Non-Government : 200

Tools Used :

- Teacher Stress Questionnaire (34 items)
- Job Satisfaction Scale (17 items)

Data Analysis :

- Descriptive Statistics
- Principal Component Analysis (PCA)
- Confirmatory Factor Analysis (CFA)

7. Results and Discussion :

The results indicate that :

Teachers face high stress due to :

- Workload
- Time pressure
- Lack of facilities
- Administrative burden

Moderate satisfaction was observed in :

- Work environment
- Job security
- Work relationships

No significant difference between government and private teachers in :

- Stress
- Job satisfaction

Significant difference found only in :

- Work relationships

A negative correlation exists between stress and job satisfaction :

- Higher stress ? Lower satisfaction

8. Findings :

- Physical education teachers experience moderate to high stress.
- Job satisfaction levels are moderate.
- Government and private teachers show similar stress patterns.
- Work relationships differ significantly between groups.
- Administrative support is a key factor influencing stress.

9. Conclusion :

The study concludes that physical education teachers in Rajasthan face considerable occupational stress due to increasing job demands and insufficient institutional support. Although job satisfaction is moderate, it is negatively affected by stress levels.

Improving working conditions, providing better facilities, and enhancing administrative support can significantly reduce stress and improve job satisfaction.

10. Recommendations :

- Improve infrastructure and sports facilities in schools.
- Provide regular training and professional development programs.
- Reduce administrative workload.
- Encourage supportive leadership and positive work culture.
- Conduct stress management workshops for teachers.

11. References (Sample APA Style) :

- Cranwell-Ward, J., & Abbey, A. (2005). *Organizational Stress*. Palgrave Macmillan.
- Bucher, C. A. (1994). *Physical Education and Health in Elementary Schools*. Macmillan.

संगम Impact Factor : 7.834 Website : www.ginajournal.com ISSN : 2321-8037
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 177-180
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

समाज में सोशल मीडिया की भूमिका : नेटवर्कयुक्त सार्वजनिक क्षेत्र, मनोवैज्ञानिक प्रभाव और राजनीतिक गतिशीलता का एक अनुभवजन्य विश्लेषण

Dr. Sushil Kumar Daiya, Research Supervisor,
ASSISTANT PROFESSOR (Commerce and Management)
Hema, Researcher
Subject - Commerce
Tantia University, Sri Ganganagar.

प्रस्तावना और सैद्धांतिक पृष्ठभूमि :

समकालीन युग में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के अभूतपूर्व विकास ने मानव समाज के परिदृश्य को मौलिक रूप से परिवर्तित कर दिया है। सोशल मीडिया अब एक जटिल सामाजिक–तकनीकी पारिस्थितिकी तंत्र (Socio-technical Ecosystem) के रूप में विकसित हो चुका है, जो मानवीय संबंधों, राजनीतिक विमर्शों, सांस्कृतिक प्रतिमानों और मनोवैज्ञानिक संरचनाओं को गहराई से प्रभावित कर रहा है।

इस जटिलता को समझने के लिए जुरगेन हैबरमास (Jürgen Habermas) के 'सार्वजनिक क्षेत्र' (Public Sphere) से लेकर आधुनिक 'नेटवर्कयुक्त सार्वजनिक क्षेत्र' (Networked Public Sphere) के उद्विकास की सैद्धांतिक रूपरेखा का उपयोग किया गया है। हैबरमास के सिद्धांत के अनुसार, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने एक 'वैश्विक सार्वजनिक क्षेत्र' का निर्माण किया है, जहाँ संचार का स्वरूप बहुआयामी और क्षैतिज (Horizontal) हो गया है। योचाई बेन्क्लर (Yochai Benkler) के अनुसार, यह नेटवर्क वास्तुकला नागरिकों को निष्क्रिय दर्शकों से सक्रिय सामग्री निर्माताओं में परिवर्तित कर देती है, जिससे एक अभूतपूर्व लोकतांत्रिक शक्ति उभरती है।

हालांकि, निकोलस लुहमान (Niklas Luhmann) के स्वपोएटिक सिस्टम सिद्धांत (Autopoietic Systems Theory) के आलोक में, यह भी स्पष्ट होता है कि अंतर्निहित एल्गोरिदम और डेटा पूंजीवाद (Data Capitalism) नई प्रकार की असमानताओं और नियंत्रण तंत्रों को भी जन्म दे रहे हैं, जहाँ सशक्तिकरण और सामाजिक बहिष्कार दोनों एक साथ सह–अस्तित्व में हैं।

भारत का जनसांख्यिकीय और सामाजिक परिदृश्य (2023–2024 तक)

भारत दुनिया के सबसे बड़े डिजिटल बाजारों में से एक है। 2023 और 2024 तक के रुझानों के अनुसार, इंटरनेट और स्मार्टफोन की पैठ ने भारत के डिजिटल परिदृश्य को अभूतपूर्व गति दी है।

डिजिटल समावेशन के दृष्टिकोण से सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन यह है कि इस वृद्धि का नेतृत्व अब ग्रामीण भारत कर रहा है। सस्ते डेटा प्लान और स्थानीय (Vernacular) भाषा में उपलब्ध सामग्री ने ग्रामीण क्षेत्रों में इस मांग को उत्प्रेरित किया है। इसके बावजूद, भारत में एक गहरा 'डिजिटल विभाजन' (Digital Divide) और लैंगिक विषमता भी विद्यमान है। महिलाओं की तुलना में पुरुषों की इंटरनेट और सोशल मीडिया तक पहुंच अधिक है, जो गहरी जड़ें जमाए हुए सामाजिक पदानुक्रम और पितृसत्तात्मक संरचनाओं को भी दर्शाती है।

वर्तमान में, इंस्टाग्राम और यूट्यूब जैसे दृश्य सामग्री (Visual Content) और शॉर्ट–फॉर्म वीडियो को प्राथमिकता देने वाले प्लेटफॉर्म भारतीय जनमानस में सबसे अधिक लोकप्रिय हैं। इसका सीधा प्रभाव डिजिटल अर्थशास्त्र पर पड़ा है, जहाँ ब्रांड्स अब पारंपरिक माध्यमों से हटकर 'इन्फ्लुएंसर–लेड' (Influencer-led) मार्केटिंग की ओर मुड़ चुके हैं।

राजनीतिक विमर्श, ध्रुवीकरण और चुनावी गतिशीलता :

भारत के राजनीतिक परिदृश्य पर सोशल मीडिया का प्रभाव अत्यंत व्यापक है। 2014 के आम चुनावों से शुरू हुआ 'डिजिटल कैंपेनिंग' का दौर, 2024 के चुनावी चक्र तक आते–आते एक अत्यंत परिष्कृत और डेटा–संचालित तंत्र में परिवर्तित हो चुका है। युवा आबादी राजनीतिक आख्यानों को गढ़ने और चुनौती देने में सोशल मीडिया का आक्रामक रूप से उपयोग कर रही है।

राजनीतिक ध्रुवीकरण के तंत्र :

यद्यपि सोशल मीडिया ने राजनीतिक भागीदारी को बढ़ाया है, इसने वैचारिक और भावनात्मक ध्रुवीकरण (Ideological and Affective Polarization) को भी प्रवर्धित किया है। इस ध्रुवीकरण की जड़ में कई अंतर्निहित तंत्र कार्य करते हैं :

- **चयनात्मक जोखिम और नेटवर्क समरूपता :** ऑनलाइन नेटवर्क अक्सर ऑफलाइन प्राथमिकताओं को प्रतिबिंबित करते हैं, जिससे एक ऐसा 'नेटवर्क समरूपता' बनता है जहाँ उपयोगकर्ता 'गूंज कक्षों' (Echo Chambers) में विभाजित हो जाते हैं और विरोधी विचारों से बचते हैं।
- **एल्गोरिदम प्रवर्धन (Algorithmic Amplification) :** चूँकि उग्र या भावनात्मक सामग्री अधिक ध्यान आकर्षित करती है, इसलिए सोशल मीडिया के एल्गोरिदम ऐसी सामग्री को कृत्रिम रूप से प्रवर्धित करते हैं।
- **गलत सूचना और अफवाहों की गतिशीलता :** भारत में व्हाट्सएप जैसे 'एंड–टू–एंड एन्क्रिप्टेड' मैसेजिंग ऐप सूचना प्रवाह के मुख्य केंद्र हैं। इन बंद समूहों में फैलाई गई गलत सूचनाएं नागरिकों के अवचेतन मन में गहरे पूर्वाग्रहों को जन्म देती हैं।
- **पहचान का प्रदर्शन :** 'लाइक्स' और 'शेयर' के माध्यम से सामाजिक मान्यता की आवश्यकता उपयोगकर्ताओं को अधिक चरम रुख अपनाने के लिए प्रेरित करती है।

मनोवैज्ञानिक प्रभाव और संज्ञानात्मक परिवर्तन :

सामाजिक मनोविज्ञान के दृष्टिकोण से, सोशल मीडिया ने मानव व्यवहार और मानसिक स्वास्थ्य पर गहरे

प्रभाव डाले हैं।

फोमो (FoMO) और डोपामाइन लूप :

'छूट जाने का भय' (Fear of Missing Out - FoMO) वह मनोवैज्ञानिक चिंता है जिसमें व्यक्ति यह महसूस करता है कि अन्य लोग उसके बिना अधिक संतोषजनक अनुभव प्राप्त कर रहे हैं। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म को इस तरह से डिजाइन किया गया है कि वे मस्तिष्क में डोपामाइन (Dopamine) के स्राव को उत्तेजित करते हैं, जिससे एक 'डोपामाइन–संचालित फीडबैक लूप' बनता है। उपयोगकर्ता लगातार नए नोटिफिकेशन्स के रूप में तात्कालिक संतुष्टि की खोज में रहता है, जो लत और अवसाद को जन्म देता है।

आत्म-संदर्भित प्रसंस्करण (Self-Referential Processing)

विभिन्न अनुसंधानों से स्पष्ट है कि अत्यधिक सोशल मीडिया उपयोग का संबंध सामाजिक चिंता और अवसाद से है। 'आत्म–संदर्भित प्रसंस्करण' के तहत, व्यक्ति किसी भी नकारात्मक सूचना या सामाजिक तुलना को अपनी वर्तमान मानसिक स्थिति से जोड़कर देखता है। शैक्षणिक दृष्टिकोण से भी, मल्टीटास्किंग और सूचना अधिभार (Information Overload) छात्रों की एकाग्रता और शैक्षणिक प्रदर्शन को बाधित कर रहे हैं।

पारिवारिक संरचना और सामाजिक पदानुक्रम पर प्रभाव :

भारतीय समाज, जो ऐतिहासिक रूप से अपनी मजबूत पारिवारिक संरचना के लिए जाना जाता है, एक गहरे संरचनात्मक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। सोशल मीडिया एक विरोधाभास प्रस्तुत करता है : यह भौगोलिक दूरियों को मिटाकर लोगों को डिजिटल रूप से जोड़े रखता है, लेकिन एक ही छत के नीचे रहने वाले लोगों के बीच आमने–सामने के संचार की गुणवत्ता को कम कर देता है।

पारंपरिक भारतीय परिवारों में बुजुर्ग प्राथमिक 'समाजीकरण अभिकर्ता' (Agents of Socialization) हुआ करते थे। आज, सोशल मीडिया ने यह स्थान साझा करना शुरू कर दिया है। बच्चे अब अपने नैतिक मूल्य ऑनलाइन इन्फ्लुएंसर्स से प्राप्त कर रहे हैं, जो अंतर–पीढ़ीगत संवाद (Intergenerational Dialogue) में दूरियां पैदा कर रहा है।

सकारात्मक सक्रियता, वकालत और जन–जागरूकता :

नकारात्मक पहलुओं के इतर, सोशल मीडिया नागरिक सक्रियता (Civic Activism) और जन–जागरूकता का एक अत्यंत सशक्त उपकरण भी है।

तमिलनाडु का 'जल्लीकट्टू आंदोलन' हो या 'रैली फॉर रिवर्स' जैसे पर्यावरण संरक्षण अभियान, इन जन–आंदोलनों ने लामबंदी और नीतिगत बदलाव की वकालत करने के लिए सोशल मीडिया का सफलतापूर्वक प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त, हाशियाकृत समूहों, विशेषकर आदिवासी और ग्रामीण महिलाओं ने अपने अधिकारों की वकालत करने और पितृसत्तात्मक आख्यानों को चुनौती देने के लिए डिजिटल प्लेटफॉर्म का उपयोग किया है। चिकित्सा और शिक्षा के क्षेत्र में भी सोशल मीडिया ने 'ज्ञान के लोकतंत्रीकरण' (Democratization of Knowledge) को जन्म दिया है, जो दूरदराज के क्षेत्रों तक स्वास्थ्य जागरूकता पहुंचाने का कार्य कर रहा है।

विनियामक परिदृश्य और डेटा संरक्षण (2023–2024) :

जैसे–जैसे सोशल मीडिया की पहुंच का विस्तार हुआ है, इसके नियमन और डेटा संरक्षण को लेकर

विधायी हस्तक्षेप अनिवार्य हो गया है।

भारत सरकार ने इस उभरते डिजिटल पारिस्थितिकी तंत्र को जवाबदेह बनाने के लिए डिजिटल पर्सनल डेटा प्रोटेक्शन (DPDP) एक्ट, 2023 पारित किया है। यह भारत का पहला व्यापक डेटा गोपनीयता कानून है, जो एक नागरिक–केंद्रित ढांचा प्रदान करता है। यह अधिनियम कंपनियों के लिए व्यक्तिगत डेटा एकत्र करने से पहले स्पष्ट 'सहमति' (Consent) लेना अनिवार्य बनाता है और नागरिकों को उनके डेटा पर संप्रभुता प्रदान करता है। इसके साथ ही, बच्चों के मानसिक स्वास्थ्य की सुरक्षा और 'डिजिटल साक्षरता' को बढ़ावा देने के लिए भी नीतिगत स्तर पर विमर्श जारी हैं, ताकि एक सुरक्षित और समावेशी डिजिटल परिदृश्य का निर्माण किया जा सके।

निष्कर्ष :

इस समाजशास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष स्थापित किया जा सकता है कि भारतीय समाज में सोशल मीडिया की भूमिका अत्यंत जटिल और गहरे अंतर्विरोधों से युक्त है। एक ओर, इस डिजिटल वास्तुकला ने संचार का लोकतंत्रीकरण किया है, ग्रामीण आबादी को मुख्यधारा से जोड़ा है और नागरिक सक्रियता को एक नई दिशा प्रदान की है।

दूसरी ओर, इसके अनियंत्रित प्रसार ने समाज के समक्ष अभूतपूर्व मनोवैज्ञानिक और राजनीतिक संकट खड़े कर दिए हैं। 'गूंज कक्षों' (Echo Chambers) ने राजनीतिक ध्रुवीकरण को संस्थागत रूप दिया है, और 'डोपामाइन लूप' ने युवाओं में अवसाद और अलगाव को बढ़ाया है।

इस दोहरे चरित्र के प्रबंधन के लिए केवल तकनीकी–आशावाद पर्याप्त नहीं है। एक संतुलित डिजिटल पारिस्थितिकी तंत्र की स्थापना के लिए DPDP एक्ट 2023 जैसे सुदृढ़ नीतिगत ढांचे का उचित क्रियान्वयन, बड़े पैमाने पर 'डिजिटल साक्षरता' (Digital Literacy) और 'आलोचनात्मक विचार' (Critical Thinking) को बढ़ावा देना अनिवार्य है। सफलता अंततः इस बात पर निर्भर करेगी कि हम एक समाज के रूप में इन उपकरणों को किस नैतिक बुद्धिमत्ता के साथ नियंत्रित करते हैं।

संगम Impact Factor : 7.834 Website : www.ginajournal.com ISSN : 2321-8037

गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 181–188

भगवद् गीता में निहित मनोवैज्ञानिक विचारों का शैक्षिक विश्लेषण : एक दार्शनिक एवं समकालीन अध्ययन

Psychological Ideas in the Bhagavad Gita : A Philosophical and Contemporary Educational Analysis

सुश्री मेघा पंवार, शोधकर्ता

डॉ. आरती आर्य, प्रोफेसर एवं शोध निर्देशक

बी. सी. जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास।

सारांश (Abstract)

भगवद् गीता भारतीय दार्शनिक परंपरा का एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है जिसमें मानव जीवन, कर्तव्य, आत्मज्ञान और मानसिक संतुलन से संबंधित गहन विचार निहित हैं। प्रस्तुत शोध पत्र भगवद् गीता के 18 अध्यायों में निहित मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का समकालीन मनोवैज्ञानिक विमर्श—विशेषतः अब्राहम मैस्लो का आत्म साक्षात्कार सिद्धांत, कार्ल युग के सामूहिक अचेतन, एरिक एरिक्सन के अहंकार-विकास मॉडल के साथ तुलनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

गुणात्मक विश्लेषण एवं व्याख्यात्मक पद्धति का प्रयोग करते हुए यह शोध प्रमाणित करता है कि गीता में वर्णित त्रिगुण सिद्धांत, आत्मज्ञान, मन का नियंत्रण, निष्काम कर्म तथा समत्व की अवधारणा आधुनिक मनोविज्ञान की संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा (CBT), माइंडफुलनेस, सकारात्मक मनोविज्ञान के साथ गहरी सैद्धांतिक समरसता रखती है। अध्ययन यह दर्शाता है कि इन सिद्धांतों को शिक्षा प्रणाली में समाहित करने से विद्यार्थियों के समग्र विकास, नैतिक मूल्यों और मानसिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ किया जा सकता है।

मुख्य शब्द : भगवद् गीता, मनोविज्ञान, त्रिगुण, संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा, आत्मज्ञान, निष्काम कर्म, भारतीय मनोविज्ञान, भारतीय दर्शन, शैक्षिक मनोविज्ञान

1. प्रस्तावना (Introduction)

भारतीय ज्ञान परंपरा में भगवद् गीता को मानव जीवन के गहन दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण स्रोत माना जाता है। यह ग्रंथ महाभारत के भीष्मपर्व में वर्णित एक अंश है, 5000 से अधिक वर्षों से भारतीय चिंतन परंपरा का केंद्र बिंदु रही है। गीता का मूल संवाद अर्जुन और श्रीकृष्ण के मध्य होता है जिसमें अर्जुन के मानसिक द्वंद्व और नैतिक संकट का समाधान प्रस्तुत किया गया है। यह संवाद केवल आध्यात्मिक मार्गदर्शन ही नहीं बल्कि एक प्रकार की मनोवैज्ञानिक परामर्श प्रक्रिया भी है।

बीसवीं एवं इक्कीसवीं शताब्दी में पश्चिम के विद्वानों जैसे हक्सले (1944), क्रिस्टोफर, इश्वुड, बारबरा स्टोलर मिलर प्रमुख हैं जिन्होंने गीता की मनोवैज्ञानिक प्रासंगिकता को स्वीकार किया है। भारतीय परंपरा में स्वामी विवेकानंद, अरविंद घोष एवं डॉ. राधाकृष्णन ने गीता को मानव-चित्त के विज्ञान के रूप में प्रस्तुत किया।

वर्तमान शोध की आवश्यकता इस तथ्य से उत्पन्न होती है कि वैश्विक मानसिक स्वास्थ्य संकट के परिप्रेक्ष्य में WHO (2023) के अनुसार विश्व में 940 मिलियन से अधिक लोग मानसिक विकारों से पीड़ित हैं। प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित मनोवैज्ञानिक संसाधनों का आधुनिक शैक्षिक संदर्भ में अनुप्रयोग एक अत्यावश्यक अनुसंधान क्षेत्र बन गया है।

1.1 शोध उद्देश्य (Research Objectives)

1. भगवद् गीता में वर्णित प्रमुख मनोवैज्ञानिक अवधारणाओं की पहचान एवं वर्गीकरण करना।
2. गीता के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों की तुलना समकालीन पश्चिमी मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों से करना।
3. शैक्षिक मनोविज्ञान एवं पाठ्यक्रम विकास में गीता के योगदान की संभावनाओं का मूल्यांकन करना।
4. भावनात्मक बुद्धिमत्ता, माइंडफुलनेस एवं नैतिक नेतृत्व में गीता-आधारित हस्तक्षेप की प्रासंगिकता स्थापित करना।

2. साहित्य समीक्षा (Literature Review)

गीता के मनोवैज्ञानिक और शैक्षिक पक्षों पर अनेक विद्वानों ने अध्ययन किया है। Rao (2008) ने Indian Psychology: Implication and Application में गीता की चेतना-संकल्पना को आधुनिक तंत्रिका विज्ञान से तथा Paranjpe (1984) ने भारतीय मनोविज्ञान की नींव के रूप में गीता के आत्मा-सिद्धांत की विवेचना की।

Misra and Verma (2011) ने अपनी पुस्तक Foundation of Indian Psychology में गीता के गुण सिद्धांत को व्यक्तित्व-मनोवैज्ञानिक के रूप में एवं Dalal & Mishra (2010) ने Psychology in India में गीता की कर्म-संकल्पना को प्रेरणा-सिद्धांत से संबद्ध किया।

हाल के अध्ययनों में Balodhi (2019) ने CBT एवं गीता के तुलनात्मक अध्ययन में पाया कि नकारात्मक विचार-प्रतिस्थापन की प्रक्रिया गीता के विवेक-विचार से मौलिक रूप से साम्य रखती है। Sharma (2022) के Positive Psychology में निहित एक प्रयोग में पाया कि गीता-आधारित माइंडफुलनेस प्रशिक्षण ने PSS स्कोर में 34% की कमी उत्पन्न की।

3. शोध पद्धति (Research Methodology)

3.1 शोध अभिकल्प (Research Design)

प्रस्तुत शोध मूलतः दार्शनिक एवं गुणात्मक पद्धति पर आधारित है। जिसमें व्याख्यात्मक-विश्लेषणात्मक पद्धति एवं तुलनात्मक दार्शनिक विश्लेषण का प्रयोग किया गया है। दस्तावेजी सामग्री विश्लेषण के अंतर्गत भगवद् गीता के प्रमुख अध्यायों के मूल संस्कृत श्लोकों, उनके आठ प्रमुख भाष्यों तथा समकालीन मनोवैज्ञानिक साहित्य का विश्लेषण किया गया है।

3.2 सामग्री स्रोत (Data Sources)

प्राथमिक स्रोत: भगवद् गीता के 18 अध्याय एवं 700 श्लोक—संस्कृत मूल एवं प्रमाणिक अनुवाद।

द्वितीयक स्रोत: Scopus पर उपलब्ध संबंधित पीयर-रिव्यूड शोध पत्र। WHO Mental Health Reports एवं NCERT NEP-2020 दस्तावेज।

4. भगवद् गीता के प्रमुख मनोवैज्ञानिक सिद्धांत

4.1 त्रिगुण सिद्धांत: व्यक्तित्व का वैदिक मॉडल

भगवद् गीता का त्रिगुण सिद्धांत (सत्व, रजस्, तमस्) मानव व्यक्तित्व एवं प्रकृति के विभाजन का एक परिष्कृत मनोवैज्ञानिक ढांचा प्रस्तुत करता है।

गीता के 14वें अध्याय में श्री कृष्ण कहते हैं:

"सत्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसंभवाः।

निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम्॥" (14.5)

इस त्रिगुणात्मक व्यक्तित्व मॉडल की तुलना आधुनिक मनोविज्ञान के विभिन्न व्यक्तित्व सिद्धांतों से की जा सकती है:

गुण	मनोवैज्ञानिक विशेषताएं	Big-5 व्यक्तित्व	Jung का तुल्य
सत्व	ज्ञान, शांति, सद्भाव, प्रकाश	Conscientiousness + Openness उच्च	Individual self / Anima
रजस्	सक्रियता, उत्तेजना, अहंकार, महत्वाकांक्षा	Extraversion + Neuroticism	Persona / Anima
तमस्	अज्ञान, जड़ता, भ्रम, आलस्य	Low Conscientiousness, High Neuroticism	Shadow Archetype

तालिका : त्रिगुण सिद्धांत एवं पश्चिमी व्यक्तित्व मॉडल का तुलनात्मक विश्लेषण

4.2 स्थित प्रज्ञा: भावनात्मक बुद्धिमत्ता का आदर्श

गीता के दूसरे अध्याय में अर्जुन का प्रश्न—'स्थित-साध्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव?' (2.54)—वस्तुतः आधुनिक के आदर्श Emotional Intelligence के आदर्श-रूप की परिभाषा मांगता है।

श्री कृष्ण का उत्तर (2.55-72) एक ऐसे व्यक्ति का चित्र प्रस्तुत करता है जो :

- दुःख में उद्‌विग्न नहीं होता — CBT का Cognitive Defusion
- सुख में आसक्त नहीं होता — Hedonic Adaptation प्रतिरोधक क्षमता
- निर्भय, निरहंकार एवं शोकरहित है — Self-Awareness & Self-Management

स्थित प्रज्ञा की अवधारणा Goleman (1995) के Emotional Intelligence के पाँचों घटकों के साथ संरचनात्मक समानता रखती है।

4.3 कर्म-योग एवं Flow Theory: समानांतर संरचनाएं

गीता का मूल उपदेश—'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' (2.47)—कल की आसक्ति के बिना कर्म में पूर्णतः संलग्न होने का निर्देश देती है। यह Csikszentmihalyi (1990) की Flow Theory के साथ उल्लेखनीय समानता रखती है। Flow अवस्था में व्यक्ति वर्तमान क्रिया में पूर्णतः लीन होता है—आत्म-चेतना तिरोहित होती है—एवं समय की अनुभूति बदल जाती है। गीता का निष्काम कर्म—परिणाम से निरपेक्ष होकर क्रिया में संलग्न होना—Flow State की एक सोद्देश्य साधना-पद्धति है।

4.4 ज्ञान-योग एवं Metacognition

गीता का ज्ञान-योग (18वाँ-16वाँ अध्याय) क्षेत्र एवं क्षेत्रज्ञ (देह एवं आत्मा) के विभेद के माध्यम से एक परिष्कृत Metacognitive Framework प्रस्तुत करता है। जब व्यक्ति अपने विचारों का साक्षी बनता है—'न अहंकर्ता'—तो यह Flavell (1979) के Metacognitive Monitoring एवं Kabat-Zinn के Observer-Mind की संकल्पना से मेल खाता है।

4.5 भक्ति-योग एवं Attachment Theory

गीता के 12वें अध्याय में भक्ति-योग का वर्णन है जो एक दिव्य केंद्र के प्रति अनुराग (Loving Attachment) को मनोवैज्ञानिक कल्याण का आधार मानती है। यह Bowlby (1969) की Secure Attachment Theory के आध्यात्मिक तुल्य है—जहाँ एक विश्वसनीय Secure Base से जुड़ाव व्यक्ति को अन्वेषण एवं विकास की स्वतंत्रता देता है।

4.6 अर्जुन का मनोवैज्ञानिक संकट: एक नैदानिक विश्लेषण

गीता के प्रथम अध्याय में अर्जुन की अवस्था—'गाण्डीवं स्रंसते हस्तात् त्वक् चैव परिदह्यते' (1.29-30)—शारीरिक लक्षणों (हाथ कांपना, त्वचा में जलन, धनुष छूट जाना), मानसिक लक्षणों (मोह, शोक, भ्रम) एवं व्यावहारिक लक्षणों (युद्ध छोड़ने का निर्णय) का वर्णन करती है जो DSM-5 के Acute Stress Response एवं Moral Injury Disorder के नैदानिक मानदंडों से साम्य रखती है।

Moral Injury सिद्धांत के अनुसार जब व्यक्ति को ऐसी क्रिया करनी पड़ती है जो उसके नैतिक विश्व-दृष्टि के विरुद्ध हो तो वह गहरे मनोवैज्ञानिक आघात से गुजरता है। गीता इस Moral Injury का उपचार Dharmic Reframing के माध्यम से करती है जो CBT के Cognitive Restructuring का एक पूर्ववर्ती रूप है।

5. शैक्षिक निहितार्थ (Educational Implications)

5.1 NEP-2020 एवं गीता-आधारित पाठ्यक्रम

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 ने भारतीय ज्ञान परंपरा को उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम में एकीकृत करने का स्पष्ट निर्देश दिया है। UGC ने 2022 में IKS पाठ्यक्रम दिशा-निर्देश जारी किये हैं जिसमें गीता-आधारित मनोविज्ञान एवं नेतृत्व प्रशिक्षण को विशेष स्थान दिया गया है। IIT, IIM एवं केंद्रीय विश्वविद्यालयों में Gita Studies, Values in Management एवं Mind Sciences पर पाठ्यक्रम प्रारंभ हो रहे हैं।

5.2 मानसिक स्वास्थ्य हस्तक्षेप में गीता-आधारित चिकित्सा

गीता-आधारित Cognitive Therapy (GBCT) जिसे Balodhi & Keshavan (1986) ने विकसित किया—एक व्यवस्थित मनोचिकित्सा-पद्धति है जो गीता के सिद्धांतों को CBT प्रोटोकॉल में एकीकृत करती है। जिसके द्वारा चिंता, अवसाद एवं तनाव में महत्वपूर्ण कमी उत्पन्न की।

5.3 भावनात्मक बुद्धिमत्ता शिक्षा में गीता

CASEL (Collaborative for Academic, Social and Emotional Awareness) के SEL Framework में जिसमें Self-Awareness, Self-Management, Social Awareness, Relationship Skills एवं Responsible Decision Making शामिल है—के सभी पाँच घटक गीता की स्थित-प्रज्ञा साधना में सम्मिलित हैं।

गीता-आधारित SEL Curriculum के प्रयोगात्मक अनुप्रयोग निम्नलिखित संस्थाओं में सफलतापूर्वक किये गये हैं:

- IIM Ahmedabad: MBA Curriculum में Values & Ethics (Gita Based) से Academic Integrity में सुधार
- AIESEC India: युवा नेतृत्व कार्यक्रम में Gita Leadership Module — Decision-Making Quality
- Chinmaya Mission School: विद्यार्थियों में Emotional Regulation में सुधार

6. भविष्य के शोध की दिशाएं

प्रस्तुत शोध अध्ययन से निम्नलिखित शोध-दिशाएं अत्यंत उपयोगी हो सकती हैं :

5. Gita Based Cognitive Therapy (GBCT) के RCT (Randomized Controlled Trials) में दीर्घकालीन प्रभाव अध्ययन।
6. त्रिगुण व्यक्तित्व मापनी (Trigunas Personality Scales) का विकास एवं मानकीकरण।
7. K-12 शिक्षा में Gita-SEL Curriculum का Cross-cultural प्रायोगिक अध्ययन।
8. Moral Injury एवं Post-Traumatic Growth में गीता-आधारित Narrative Therapy का प्रभाव अध्ययन।

7. निष्कर्ष (Conclusion)

प्रस्तुत शोध यह प्रमाणित करता है कि भगवद् गीता न केवल एक दार्शनिक-धार्मिक ग्रंथ है, बल्कि मानव मनोविज्ञान एवं आत्म-विकास का एक सुव्यवस्थित, सुसंगत एवं समकालीन प्रासंगिकता से

परिपूर्ण ज्ञान भंडार है। उसके त्रिगुण सिद्धांत, स्थित-प्रज्ञा आदर्श, निष्काम कर्म, साक्षी चेतना एवं भक्ति-योग की संकल्पनाएं आधुनिक मनोविज्ञान की Personality Theory, EI, Flow Theory, Metacognition एवं Attachment Theory के साथ गहरी सैद्धांतिक समानता एवं पूरकता रखती हैं।

शैक्षिक दृष्टि से, NEP-2020 के भारतीय ज्ञान परंपरा एकीकरण के आलोक में गीता-आधारित हस्तक्षेप—मानसिक स्वास्थ्य, भावनात्मक बुद्धिमत्ता एवं नैतिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। यह शोध इस दिशा में एक सुदृढ़ सैद्धांतिक आधार प्रस्तुत करता है।

अंततः पूर्व एवं पश्चिम के मनोवैज्ञानिकों के विचारों के मध्य सेतु-निर्माण जहाँ प्राचीन भारतीय प्रज्ञा आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति से संवाद करे—यह 21वीं शताब्दी के समग्र मानव-विज्ञान का सुदृढ़ लक्ष्य है। गीता इस संवाद में एक अनिवार्य एवं समृद्ध सहभागी है।

संदर्भ-ग्रंथ सूची (References)

- ओड लक्ष्मी लाल के. 'शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि', प्रकाशक: राजस्थान ग्रंथ अकादमी, जयपुर (राजस्थान)
- पुस्तक 'कल्याण', गोरखपुर: गीता प्रेस, 1988
- राय पारसनाथ (2011). 'अनुसंधान परिचय', प्रकाशक: लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा
- शर्मा रामनाथ. 'भारतीय नीति शास्त्र', मेरठ: केदारनाथ रामनाथ
- शर्मा एस.एन.—'The Educational Vision of Srimad Bhagavad Gita', आगरा: एच.पी.भार्गव बुक हाउस, 2002
- श्रीवास्तव एस.एन. (2008). 'भारतीय शिक्षा मनोविज्ञान', लखनऊ: भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका
- स्वामी प्रभुपाद ए.सी. भक्तिवेदांत. 'श्रीमद् भगवद् गीता', मुम्बई: भक्तिवेदांत बुक ट्रस्ट, हरे कृष्ण धाम, जुहू, 1990
- तिलक बालगंगाधर. 'श्रीमद् भगवद् गीता रहस्य', प्रकाशक: नारायण पेठ, केसरी ऑफिस, पुना सिटी (महाराष्ट्र)
- Balodhi, J.P. & Keshavan, M.S. (1986). Gita-Based Cognitive Behaviour Therapy. Indian Journal of Psychiatry.
- Csikszentmihalyi, M. (1990). Flow: The Psychology of Optimal Experience. Harper & Row, New York.
- Dalal, A.K. & Mishra, G. (2010). Psychology in India, Vol. 4. Pearson Education.

- Flavell, J.H. (1979). Metacognition and cognitive monitoring. American Psychologist, 34, 906–911.
- Goleman, D. (1995). Emotional Intelligence. Bantam Books, New York.
- Misra, G. & Verma, S.K. (2011). Foundations of Indian Psychology, Vol. 1. Pearson Education.
- Paranjpe, A.C. (1984). Theoretical Psychology: The Meeting of East and West. Plenum Press.
- Rao, K.R. (2008). Indian Psychology: Implications and Applications. ICPR.
- Sharma, R. (2022). Positive Psychology and the Bhagavad Gita. SAGE Publications India.
- WHO (2023). World Mental Health Report: Transforming Mental Health for All. Geneva.

sinha5272@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 189–194
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

रचनावादी शिक्षण पद्धति का प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक, सामाजिक एवं भावनात्मक विकास पर प्रभाव : एक अई–प्रायोगिक एवं मिश्रित विधि आधारित अध्ययन

डॉ. अल्पना आर्य, वरिष्ठ व्याख्याता
श० उ० म० विद्यालय, खजराना, इंदौर।
डॉ. आरती आर्य, प्रोफेसर, शोध निर्देशक
बीसीजी शिक्षा महाविद्यालय, सम्राट विक्रमादित्य विश्वविद्यालय उज्जैन।

सार (Abstract)

वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य रचनावादी शिक्षण पद्धति (Constructivist Teaching Approach) का प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास विशेष रूप से संज्ञानात्मक, सामाजिक एवं भावनात्मक आयामों पर प्रभाव का विश्लेषण करना है।

अध्ययन में अर्द्ध–प्रायोगिक एवं मिश्रित विधि (Mixed Method) दृष्टिकोण अपनाया गया। कुल 80 विद्यार्थियों को प्रायोगिक एवं नियंत्रण समूहों में विभाजित किया गया। प्रायोगिक समूह को 8 सप्ताह तक रचनावादी गतिविधियों समस्या–आधारित अधिगम, समूह कार्य परियोजना आधारित अधिगम के माध्यम से शिक्षण दिया गया। जबकि नियंत्रण समूह के पारंपरिक विधि से शिक्षण दिया गया। संज्ञानात्मक विकास के मापन हेतु ब्लूम की संशोधित वर्गीकरण (Bloom's Revised Taxonomy) पर आधारित उपलब्धि परीक्षण, सामाजिक विकास हेतु सामाजिक कौशल मापनी (Social Skill Scale) और भावनात्मक विकास हेतु भावनात्मक परिपक्वता मापनी (Emotional Maturity Scale) का उपयोग किया गया। सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु स्वतंत्र नमूना–परीक्षण ANOVA तथा Cohen's व प्रभाव आकार परीक्षण का प्रयोग किया गया। परिणामों से स्पष्ट हुआ है कि रचनावादी शिक्षण पद्धति संज्ञानात्मक, सामाजिक एवं भावनात्मक विकास में नियंत्रण समूह की तुलना में सांख्यिकीय रूप से सार्थक अंतर उत्पन्न करती है।

रिस्थिता सामाजिक और कुतर का ठीक से नही पढ़ पाते। यह शैक्षिक उपलब्धि की नहीं, बल्कि भावनात्मक विकास की भी है। इसको दृष्टिगत करते हुये यह यह शोध कार्य रचनावादी शिक्षण पद्धति की प्रभावशीलता को तीन आयामों – संज्ञानात्मक, सामाजिक एवं

भावनात्मक पर परखने एक छोटा सा प्रयास है।

अध्ययन को आवश्यकता एवं झौचित्य रचनावादी शिक्षण पर विदेशों में निष्कर्ष यह दर्शाते हैं कि रचनावादी उपागम प्राथमिक शिक्षा में समग्र विकास के लिये एक प्रभावशाली विकल्प है।

मुख्य शब्दः रचनावादी शिक्षण, संज्ञानात्मक विकास, सामाजिक विकास, भावनात्मक विकास, प्राथमिक शिक्षा, अर्द्ध–प्रायोगिक अनुसंधान।

प्रस्तावना

यह आधुनिक शिक्षा प्रणाली में यह मान्यता तेजी से विकसित हो रही है कि अधिगम केवल ज्ञान अर्जन तक सीमित नही है, बल्कि यह एक सक्रिय, सामाजिक एवं अनुभवात्मक प्रक्रिया है। NEP (2020) ने भी बालकों के समग्र विकास संगानात्मक, सामाजिक एवं भावनात्मक विकास के लिये पारंपरिक रटन–आधारित शिक्षण से आगे बढकर गतिविधि आधारित, अनुभवात्मक एवं बाल–केंद्रित शिक्षण पद्धतियों को अपनाना आवश्यक है NCERT 2022

रचनावादी सिद्धांत (Constructii) जिसे मुख्य रूप से पियाज (1952) और व्योगास्टकी (1978) ने विकसित किया, यह सिद्धांत सिद्धांत मानता है कि ज्ञान का निर्माण विद्यार्थी द्वारा स्वयं अपने अनुगनों एवं परिवंश से अंतःक्रिया के माध्यम से होता है। इस उपागम में शिएक की भूमिका सूचना प्रदाता से बदलकर मार्गदर्शक, सुगमकर्ता एवं समर्थक की हो जाती है।

भारत में प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता चिंता विषय रही है। ASER (2023) की रिपीट के अनुसार कक्षा 5 के 50: से अधिक बच्चे कक्षा 2 का स्तर ठीक से नही पढ पाते। यह रिस्थिता शैक्षिक उपलब्धि की नही बल्कि सामाजिक और भावनात्म विकास की भी है। इसको दृष्टिगत करते हुए यह शोध कार्य रचनावादी शिक्षण पद्धित्त की प्रभाविशलता को तीन आयामो – संज्ञानात्मक सामाजिक एंव भावनात्मक पर परखने का एक छोटा सा प्रयास है।

1.1 अध्ययन की आवश्यकता एवं औचित्य

रचनावादी शिक्षण पर विदेशो में विस्तृत शीघ्र कार्य हुये हैं। परंतु भारतीय शोध के अंतर्गत तार्किक चिन्तन (Beuli-v- 1987), कारणात्मक चिंतन (Bharti K- 1988) तार्किक योग्यता (garg k- P- 1988) प्रत्यमरीकरण (Srichandan P 1990) आदि कार्य हुये है प्राथमिक विद्यालयों के संदर्भ में विद्यालयों में इस पद्धति के तिआयामी प्रभाव पर अनुसंधान सीमित है। प्रस्तुत शोध अध्ययन इस शोध रिक्तिता को भरने का प्रयास करता है।

2. साहित्य समीक्षा

उपलब्ध शोध अध्ययनों का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि संज्ञानात्मक योग्यता के विभिन्न दोन तार्किक चिंतन (Beuli- V- 1987), कारणात्मक चिंतन (Bharti K- 1988), तार्किक योग्यता (Garg K-P- 1988) पर किये गये।

भावनात्मक विकास के संदर्भ में (Goleman 1995) ने भावनात्मक बुद्धिमत्ता, (CASEL 2019) ने सामाजिक भावनात्मा शिक्षा के क्षेत्र क्षेत्र में कार्य कियें।

सामाजिक विकास के संदर्भ में (Mishra & tripathi 2021) ने सक्रिय अधिगम से सामाजिक (Sharma, Tiwari & Verma- 2022) भागीदारी, ने NCERT पाठ्यक्रम रचनावादी तत्वों को सम्मिलित किया।

प्रस्तुत शोध अध्ययन एक साथ तीनों आयामो संज्ञानात्मक, सामाजिक एवं भावनात्मक को एक नियंत्रित प्रायोगिक अभिकल्प में मापता साथ ही है। और Cohen's व द्वारा प्रभाव आकार का भी विश्लेषण करता है।

3. शोध उद्देश्य एवं परिकल्पनाएँ

3.1 शोध उद्देश्यः–

प्रस्तुत शोध कार्य के निम्न उद्देश्य हैं–

- प्रायोगिक एवं नियंत्रण समूह के विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक विकास में अंतर का होना।
- प्रायोगिक एवं नियंत्रण समूह के विद्यार्थियों के सामाजिक विकास में अंतर के प्रभाव का अध्ययन करना।
- प्रायोगिक एवं नियंत्रण समूह के विद्यार्थियों के भावनात्मक विकास में अंतर के प्रभात का अध्ययन करना।
- लिंग के आधार आधा पर रचनावादी शिक्षण पद्धति की प्रभावशीलता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

3.2 शोध परिकल्पनाएँ:–

- रचनावादी शिक्षण पद्धति और पारंपरिक शिक्षण पद्धति इस शिक्षित विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक विकास में कोई सार्थक अंतर नहीं हैं।
- रचनावादी शिक्षण पद्धति और पारंपरिक शिक्षण पद्धति द्वारा शिक्षित विद्यार्थियों के सामाजिक विकास में कोई सार्थक अंतर नहीं हैं।
- रचनावादी शिक्षण पद्धति और पारंपरिक शिक्षण पद्धति द्वारा शिक्षित विद्यार्थियों के भावनात्मक विकास में कोई सार्थक अंतर नही है।
- लिंग के आधार पर रचनावादी शिक्षण पद्धति की प्रभावशीलता में कोई अंतर नहीं है।

4. अनुसंधान विधि

4.1 शोध अभिकल्प

प्रस्तुत अध्ययन में अर्द्ध–प्रायोगिक अनुसंधान अभिकल्प विधि (Quasi-Experimental Research Design) एवं मिश्रित विधि (Quasi-Experimental Research

Design) का उपयोग किया, पूर्ण–परीक्षण असमतुल्य नियंत्रण समूह अभिकल्प (Pre-test] Post Test- Non équivalent Control Group Design) अपनाया गया।

4.2 जनसंख्या एवं प्रतिदर्श

प्रस्तुत शोध अध्ययन में देवास दीन के सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में कक्षा 4 एवं 5 में अध्ययनरत विद्यार्थियों को लिया गया। उद्देश्यपूर्ण प्रतिदर्श विधि द्वारा दो विद्यालयों का चयन किया गया। एक को प्रायोगिक विद्यालय तथा दूसरे को नियंत्रण विद्यालय के रूप में नामित किया गया। गया। प्रत्येक विद्यालय से 80 विद्यार्थी (40 बालक 40 बालिकाये। चुने गये।

तालिका 1 प्रतिदर्श का वितरण।

समूह	विद्यालय	बालक	बालिका	कुल
प्रयोगिक समूह	प्रा.वि.स.	40	40	80
नियंत्रण समूह	प्राथमिक.वि.सं	40	40	80
कुल	2 विद्यालय	80	80	160

4.3 अनुसंधान उपकरण

(1) संज्ञानात्मक उपलब्धि परीक्षण Cognitive Achievement Test शोधकर्ताओं निर्मित 60 बहुविकल्पीय प्रश्नों का परीक्षण जो कलूम के संशोधित वर्गिकरण के 6 स्तरों को मापता है। विश्वसनीयता वैधता (Cronbach's α = 0.87) (CVi = 0.89)

(2) सामाजिक कौशल मापनी (Social skill scale) मट्सन एवं ओल्लेन्डिक की मूल मापनी का उपयोग किया गया। α=0.83

(3) भावनात्मक परिपक्वता मापनी (Emotional Maturity Scale) यश्वीर एवं महेश भार्गन (2012) द्वारा निर्मित मानकीकृत मापनी का उपयोग किया गया α=0.81

4.4 प्रायोगिक प्रक्रिया

प्रस्तुत शोध अध्ययन में हस्तक्षेप कार्यक्रम 8 सरनाई. तक चला। प्रायोगिक समूह की रचनावादी रणनीतियों द्वारा पढाया गया एवं नियंत्रण समूह को सामान्य व्याख्यान विधि एवं पाठ्यपुस्तक केंद्रित शिक्षण से पढाया गया।

5. परिणाम एवं विवेचन

5.1 पूर्व–परीक्षण तुल्यता का सत्यापन

प्रस्तुत शोध में हस्तादीप (Treatment) से पूर्व दोनो समूहों के पूर्व–परीक्षण प्राप्तांको पर स्वतंत्र–परीक्षण किया गया। परिणाम दर्शाते है कि तीनों चरों में सांख्यिकीय रूप से समतुल्य थे. (P>0.05) जो आतंरिक वैधता को सुनिश्चित करता है।

तालिका 2: पूर्व–परीक्षण तुल्यता (Independent t-test)

चर	प्रायोगिक M	प्रायोगिक SD	नियंत्रण M	नियंत्रण SD	T मान	c/f
चर	प्रायोगिक	नियंत्रण	T मान	c/f	p-मान	निर्णय
संज्ञानात्मक	34.12 / 5.21	33.87 / 6.43	0.23	118	0.811	Ns
सामाजिक	91.34 / 8.11	90.87 / 8.34	0.27	118	0.733	Ns
भावनात्मक	68.23 / 7.67	77.91 / 7.89	0.20	118	0.834	Ns

NS= Not significant - P>0.05

5.2 पश्च परीक्षण परिणाम एवं विश्लेषणः

पूर्व परीक्षण प्राप्तांको को सहचा (Covariate) के रूप में नियंत्रित करते हुये ANCOVA विश्लेषण किया गया।

तालिका 3:– ANCOVA – पश्च परीक्षण तुलनात्मक परिणाम

चर	प्रयोगिक	नियंत्रण	F- मान	p- मान
चर	प्रयोगिक	नियंत्रण	F- मान	p- मान
संज्ञानात्मक	58.73	48.12	67.73	< 0.001
सामाजिक	112.45	107.21	47.24	< 0.001
भावनात्मक	99.67	92.34	50.98	< 0.001
चर	प्रयोगिक	नियंत्रण	F- मान	p- मान
संज्ञानात्मक	58.73	48.12	67.73	< 0.001
सामाजिक	112.45	107.21	47.24	< 0.001
भावनात्मक	99.67	92.34	50.98	< 0.001

5.3 लिंग – आधारित तुलनात्मक विश्लेषण

लिंग के आधार पर 2x2 ANOVA (समुह X लिंग) किया गया। परिणामों में दर्शाया कि समूह X लिंग की अंतःक्रिया (Interaction Effect) तीनों चरों में सांख्यिकीय रूप से सार्थक नहीं थी। इसका अर्थ है कि रचनावादी बालिकाओं दोनों के लिये समान रूप से प्रभावशाली रहा।

तालिका 4: लिंग–आधारित ANOVA (2x2) अंताक्रिया प्रभाव

चर	समूह f	थ्लंग	समूह Xलिंग	P अंतकिया	NS/S
संज्ञानात्मक	64.14	1.32	0.87	0.353	NS
सामाजिक	54.67	0.99	1.12	0.292	NS
भावनात्मक	48.33	1.54	0.74	0.391	NS

5.4 परिकल्पना परिक्षण का सारांश

क्र.	परिकल्पना	निर्णय
1	संज्ञानात्मक विकास में कोई अंतर नही।	अस्वीकृत
2.	सामाजिक विकास में कोई अंतर नही।	अस्वीकृत
3.	भावनात्मक विकास में कोई अंतर नही।	अस्वीकृत
4.	लिंग से कोई अंतक्रिया प्रभाव नही।	स्वीकृत

6. निष्कर्ष

इस अध्ययन के निष्कर्ष कि स्पष्ट रूप से दर्शातें है की रचनावादी शिक्षण पद्धित्त प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक, सामाजिक एंव भावनात्मक तीनो आयामो में सांखीकी रूप से बड़े सकारात्मक प्रभाव उत्पन्न करती है। यह पद्धति पारंपरिक शिक्षण की तुलना में न केवल अधिक प्रभावशाली है, बल्कि लिंग निरपेक्ष भी है। NEP 2020 के आलोक में यह अनुशंसा की जाती है कि प्रारंभिक स्तर पर रचनावादी शिक्षण की क्रमिक रूप से अपनाया जाये।

6.1 अध्ययन की सीमाए

यह अध्ययन केवल देवास शहर तक सीमित है–अतः परिणामों का सामान्यीकता सावधानी पूर्वक किया जाना चाहिये।

या दृच्छिक चयन संभव नहीं होने की स्थिति में पक्षपात की संभावना बनती है।

6.2 भावी अनुसंधान हेतु सुझाव

भविष्य में इस विषय को माध्यमिक स्तर पर, या दृच्छिक नियंत्रित परिक्षण बड़े न्यादर्श पर, दीर्घकालिक अनुवर्ती अध्ययन तथा रचनावादी पद्धति ,वं डिजिटल प्रौद्योगिकी के संयुक्त प्रभाव पर अध्ययन किये जाने चाहिये।

संदर्भ–सूची (References)

- माथुर, एस.एस. (2010) शिक्षा मनोविज्ञान, आगराः अग्रवाल पब्लिकेशन्स
- मंगल, ,एस–के– (2011) शिक्षा मनोविज्ञान, नई दिल्लीः पी–,एच–आई लर्निंग लिमिटेड
- मिश्र, ब्रज कुमार मनोविज्ञान मानव व्यवहार का अध्ययन, नई दिल्लीः पी–,एच–आई लर्निंग लिमिटेड
- पाण्डे, कल्पलता शिक्षा मनोविज्ञान, नई दिल्लीः टाटा मेग्राहिल
- पाल हंस–राज (2006) प्रगत शिक्षा मनोविज्ञान, दिल्लीः हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निर्देशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय
- सारस्वत, मालती (2011) शिक्षा मनोविज्ञान, लखनऊः आलोक प्रकाशन
- सिंह अरुण कुमार सामान्य उच्चतर मनोविज्ञान, नई दिल्लीःमोतीलाल बनारसी दास
- सिंह अरुण कुमार संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, नई दिल्लीःमोतीलाल बनारसी दास
- सिंह अरुण कुमार (2011) शिक्षा मनोविज्ञान, पटनाःभारतीय भवन
- श्रीवास्तव, डी– ,एन– (2012) बाल मनोविज्ञानः बाल विकास, आगराः अग्रवाल पब्लिकेशन्स
- सुलैमान, मोहम्मद (2011) उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, नई दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास

sinha5272@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 195-200
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में निहित शैक्षिक अवधारणाओं का तुलनात्मक अध्ययन

अमृता चौधरी, शोधार्थी,
डॉ. आरती आर्य, प्रोफेसर,
बी. सी. जी. शिक्षा शोध संस्थान, देवास, मध्यप्रदेश।

शोध सार :

प्रस्तुत शोध पत्र "स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में निहित शैक्षिक अवधारणाओं का तुलनात्मक अध्ययन" विषय पर आधारित है। इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य भारतीय शिक्षा परंपरा के चमकते सितारे महान दार्शनिक संत स्वामी विवेकानंद के शिक्षा दर्शन एवं उनके शिक्षा उद्देश्यों तथा भारतीय शिक्षा नीति–2020 के मूल उद्देश्यों एवं सिद्धांतों के बीच संबंध एवं उनके मध्य जो अंतर है। उनका अध्ययन कर उनका विश्लेषण करना है। स्वामी विवेकानंद के अनुसार "शिक्षा वह है जो मनुष्य के अंदर पहले से विद्यमान पूर्णता को प्रकट करे"। स्वामी विवेकानंद का मानना था कि शिक्षा का उद्देश्य केवल सूचनाओं का संग्रहण करना नहीं है अपितु मानव मस्तिष्क एवं शरीर के भीतर छिपी अनंत संभावनाओं को विकसित करना है। स्वामी विवेकानंद की शिक्षा व्यवस्था में मनुष्य निर्माण, चरित्र, आत्मबल, आध्यात्मिक, सामाजिक सद्भावना, समाज कल्याण, नैतिकता का निर्माण को महत्व दिया गया है। दूसरी ओर शिक्षा नीति–2020 भी समग्र विकास, कौशल आधारित शिक्षा, नैतिक मूल्यों का निर्माण, भारतीय ज्ञान प्रणाली को बढ़ावा देना, चिंतन का विकास करना, सामाजिक कल्याण जैसे बिंदुओं को प्रमुखता से अपने शैक्षिक उद्देश्यों में शामिल करती है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में गुणात्मक अनुसंधान विधि का उपयोग किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में यह स्पष्ट होता है कि NEP–2020 एवं स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन में ज्ञान केवल सूचनाओं अथवा जानकारियों का स्रोत नहीं है अपितु व्यक्तित्व विकास, सामाजिक उत्थान की भावना का विकास, आत्मचिंतन का विकास करने का भी माध्यम है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक समग्र बहुआयामी, बहुउद्देशीय, राष्ट्र निर्माण, सामाजिक, आर्थिक उत्थान के शिक्षा उद्देश्यों पर आधारित है जो स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक विचारों की पुर्नस्थापना करती है। हालाँकि कुछ क्षेत्रों में चुनौतियाँ भी हैं लेकिन नीति का सफल क्रियान्वयन उन्हें समाप्त कर सकता है।

बीज शब्द :– स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020, बहुआयामी शिक्षा, राष्ट्र निर्माण, सामाजिक उत्थान।

1. प्रस्तावना :

प्राचीन काल से ही भारतीय ज्ञान प्रणाली अत्यधिक समृद्ध एवं प्राचीन रही है। भारतीय शिक्षा व्यवस्था सदैव ही ज्ञान, कौशल, नैतिकता, आध्यात्मिक विकास के सिद्धांतों के आधारों पर ही आधारित रही है। प्राचीन समय की गुरुकुल व्यवस्था जहाँ एक समग्र एवं सर्वांगीण गुणों से निहित विद्यार्थियों का निर्माण करना था। जहाँ केवल ज्ञान को जानकारी के रूप में न देकर उनका वास्तविक परिस्थितियों में उपयोग करना सिखाया जाता था। इस प्रकार व्यक्ति का समग्र विकास होता था। परंतु वर्तमान समय में बदलती शिक्षा, उपयोगिता, वैश्वीकरण, उद्योगीकरण एवं रोजगार आधारित शिक्षा की ओर शिक्षा प्रणाली को बनाया जा रहा था जिससे व्यक्ति में नैतिक विकास, आध्यात्मिकता, चरित्र निर्माण, सामाजिक उत्थान की भावना, भारतीयता की भावना का ह्रास होता जा रहा था। स्वामी विवेकानंद (1863–1902) के समय भारत देश में ब्रिटिश शिक्षा व्यवस्था चरम पर थी। यह व्यवस्था केवल भारतीयों को नौकर बनाने तक ही सीमित थी। ब्रिटिश समय में भारतीय शिक्षा व्यवस्था पर सबसे अधिक प्रभाव मैकाले की शिक्षा नीति का था जिसमें शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी भाषा थी। इसका उद्देश्य भारतीय भाषाओं एवं भारतीय ज्ञान को कमतर आंकना था। इसका उद्देश्य सिर्फ ऐसे भारतीयों को तैयार करना था जो रंग, रूप, तन, मन से भारतीय हों लेकिन उनकी सोच अंग्रेजी की हो। 1854 में वुड डिस्पैच, हंटर कमीशन आदि शिक्षा नीतियों का उद्देश्य भी मैकाले की शिक्षा व्यवस्था जैसा ही था कि भारतीयों को केवल नौकर एवं बाबू (क्लर्क) के रूप में तैयार करना। स्वामी विवेकानंद ने अंग्रेजों की शिक्षा व्यवस्था की कड़ी निंदा एवं आलोचना की। उनके अनुसार इस प्रकार की शिक्षा से नैतिक, चारित्रिक विकास संभव नहीं है। यह शिक्षा केवल किताबी ज्ञान तक ही सीमित है। स्वामी विवेकानंद ने एक ऐसी शिक्षा का समर्थन किया है जो व्यक्ति के अंदर निहित शक्तियों का विकास करे।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 21वीं सदी की पहली शिक्षा नीति है इसमें समग्र विकास, वास्तविक अधिगम, बहुभाषीय शिक्षा, सामाजिक कल्याण, मूल्य आधारित शिक्षा, आध्यात्मिक एवं चारित्रिक विकास की भावना पर बल देती है जो स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन से गहरा जुड़ाव और सामंजस्य रखती है। यद्यपि दोनों में कुछ मौलिक असमानताएं विद्यमान है, परंतु इन असमानताओं को परे रखकर देखा जाए तो स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में समानताएं भी हैं।

2. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :

स्वामी विवेकानंद (1863–1902) के समय भारत ब्रिटिशों के अधीन एक देश था जहाँ भारतीय शिक्षा व्यवस्था पर अंग्रेजों की नीतियों की गहरी छाप थी। ब्रिटिश सरकार की शिक्षा नीतियों का उद्देश्य केवल ब्रिटिश प्रशासनिक व्यवस्थाओं के लिए क्लर्कों एवं बाबुओं का निर्माण करना था। 1835 में मैकाले मिनट भारतीय शिक्षा प्रणाली के स्वरूप के लिए एक महत्वपूर्ण दस्तावेज था। मैकाले ने भारतीयों के लिए शिक्षा केवल अंग्रेजी भाषा में प्रदान करने की सिफारिश की थी। इसका छिपा उद्देश्य यह था कि भारतीयों को अपनी संस्कृति एवं भारतीय ज्ञान प्रणाली से अलग करना था जिससे बौद्धिक विभाजन उत्पन्न हो। इसके पश्चात 'वुड डिस्पैच' (1854) भारतीय शिक्षा की संस्थागत नीव पड़ी। इसमें विश्वविद्यालयों की स्थापना, शिक्षा विभाग का गठन, शिक्षण प्रशिक्षण जैसे प्रावधानों को शामिल किया गया। परंतु इसका उद्देश्य भी औपनिवेशिक शासन के लिए आवश्यक मानवीय संसाधन तैयार करना था। इसके बाद 1882 में हंटर कमीशन का गठन किया गया जिसमें प्राथमिक शिक्षा

व्यवस्था पर जोर दिया गया। ब्रिटिश शिक्षा नीति पूर्णतः पुस्तक आधारित थी जिसमें नैतिकता, चारित्रिक विकास, जीवन कौशलों का अभाव, समग्र विकास की भावना का न होना शामिल था। परिणाम स्वरूप ब्रिटिश कालीन शिक्षा केवल भारतीयों को प्रशासनिक कार्यों के लिए प्रशिक्षित करती थी। ऐसे परिदृश्य में स्वामी विवेकानंद ने संपूर्ण भारत में भ्रमण किया एवं उन्होंने जो महसूस किया उसे ही अपनी शिक्षा प्रणाली एवं शैक्षिक दर्शन का आधार बनाया। उन्होंने ऐसी शिक्षा व्यवस्था की कल्पना की जो आत्मनिर्भर, समग्र विकास, राष्ट्र निर्माण की भावना, सामाजिक कल्याण एवं उत्थान, चारित्रिक विकास, कौशल आधारित हो, जो भारतीय मूल्यों एवं भारतीय संस्कृति से जुड़ी हो। यही आगे चलकर NEP–2020 के लिए एक आधार बना जो भारतीय ज्ञान प्रणाली, आधुनिक जरूरतों के मध्य सामंजस्य संतुलित करने का प्रयास करती है।

3. शोध के उद्देश्य :

1. स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन का अध्ययन करना।
2. स्वामी विवेकानंद एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 का तुलनात्मक विश्लेषण करना।
3. मूल्य शिक्षा एवं नैतिक विकास का अध्ययन करना।
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में निहित शिक्षण पद्धतियों एवं स्वामी विवेकानंद के दर्शन में निहित शैक्षिक पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
5. स्वामी विवेकानंद एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में शिक्षक की अवधारणा का तुलनात्मक अध्ययन करना।

4. शोध विधि :

प्रस्तुत अध्ययन कार्य में गुणात्मक शोध विधि अपनाते हुए वर्णनात्मक एवं तुलनात्मक शोध विधि का उपयोग किया गया है। प्रस्तुत अनुसंधान कार्य के प्रमुख स्रोत स्वामी विवेकानंद की पुस्तकें, भाषण, उनके ऊपर प्रस्तुत शोध आलेख, सरकारी रिपोर्ट, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 का दस्तावेज, पुस्तकें, वेबसाइट आदि शामिल हैं। इसमें विषय वस्तु विश्लेषण एवं तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है।

5. अध्ययन का परिसीमन :

प्रस्तुत अध्ययन केवल स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 के प्रमुख प्रावधानों पर सीमित है। अध्ययन में केवल दोनों के मध्य समानताओं एवं असमानताओं को शामिल किया गया है।

5.1 अध्ययन की उपयोगिता :

प्रस्तुत शोध कार्य भारतीय ज्ञान प्रणाली एवं आधुनिक शिक्षा प्रणाली के मध्य सामंजस्य स्थापित करने का कार्य करेगा। जिससे दोनों के सहयोग से एक उच्च स्तर की शिक्षा व्यवस्था देश में शुरू की जा सके। जो वैश्विक मांगों के अनुरूप भी हो तथा जिसमें भारतीय संस्कृति, इतिहास एवं विचारों का मिश्रण भी हो।

6. स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 :

"हम ऐसी शिक्षा चाहते हैं जिससे चरित्र का निर्माण हो, मन की शक्ति बढ़े, बुद्धि का विकास हो और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सके।"

स्वामी विवेकानंद वेदांत दर्शन एवं सनातन धर्म में अत्यधिक विश्वास रखते थे। उन्होंने शिक्षा के माध्यम

से सामाजिक एवं आर्थिक असमानताओं को हटाने का प्रमुख साधन माना है। स्वामी विवेकानंद ने शिक्षा को मनुष्य एवं व्यक्तित्व निर्माण का प्रमुख साधन माना है वहीं राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 ने उसी विचार को आधुनिक संदर्भ में समग्र विकास के रूप में परिभाषित किया है। जहाँ स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन चरित्र, आत्मबल, सामाजिक उत्थान पर बल देता है वहीं राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 21वीं शताब्दी की आवश्यकतानुसार समग्र एवं बहुआयामी शिक्षा को प्रदर्शित करती है। दोनों के मध्य संबंधों को निम्न प्रमुख बिंदुओं के तुलनात्मक अध्ययन से समझा जा सकता है।

6.1 समग्र विकास :

स्वामी विवेकानंद मानव के समग्र विकास पर अत्यधिक जोर देते थे जिसमें शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक के साथ–साथ आध्यात्मिक विकास पर आधारित हो। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 के मूल सिद्धांतों का आधार भी यही तत्व है। NEP–2020 मानव में समग्रता के विकास पर जोर देती है। NEP–2020 एवं स्वामी विवेकानंद का शिक्षा दर्शन दोनों ही समग्र एवं सामंजस्य पूर्ण विकास पर जोर देती है।

6.2 समावेशी शिक्षा व्यवस्था :

स्वामी विवेकानंद का उद्देश्य शिक्षा समाज के प्रत्येक व्यक्ति तक पहुँचाना है। इसी प्रकार NEP–2020 इसी प्रतिबद्धता के साथ खड़ी है। NEP–2020 विशेष आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों की शिक्षा व्यवस्था पर भी जोर देती है जिससे गुणवत्तापूर्ण शिक्षा दी जा सके।

6.3 भारतीय मूल्यों एवं संस्कृति को बढ़ावा :

स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 भारत की समृद्धशाली संस्कृति विरासत और ज्ञान को शामिल करने पर जोर देती है। दोनों ही भारतीय शिक्षा को भारत के समग्र इतिहास एवं संस्कृति से जोड़ने पर बल देती है।

6.4 अनुभवात्मक अधिगम :

स्वामी विवेकानंद के शिक्षा दर्शन में 'करके सीखने' पर बल दिया गया है। NEP–2020 भी प्रयोगात्मक अधिगम, व्यवहारिक अधिगम पर जोर देती है। दोनों का ही आधार रटने की बजाय अनुभव, करके सीखना जैसे सिद्धांतों पर आधारित है।

6.5 जीवनोपयोगी शिक्षा :

स्वामी विवेकानंद ने शिक्षा को जीवनोपयोगी एवं रोजगार उन्मुख करने पर जोर दिया है और कौशल विकास पर भी जोर दिया है। इसी प्रकार NEP–2020 भी कौशल आधारित अधिगम एवं व्यावसायिक शिक्षा पद्धतियों पर जोर देती है। हम कह सकते हैं कि दोनों का लक्ष्य विद्यार्थी जीवन को सफल, आत्मनिर्भर एवं जीवनोपयोगी बनाना है।

6.6 शिक्षक :

स्वामी विवेकानंद जी के अनुसार शिक्षक के लिए पहली आवश्यकता है पावनता। शिक्षक को असीम धैर्यवान, सहानुभूतिपूर्ण होना चाहिए। विवेकानंद जी के अनुसार शिक्षक एक मार्गदर्शक के रूप में होना चाहिए जो छात्र के अंदर निहित शक्तियों का विकास कर सके। NEP 2020 भी शिक्षक को 'Facilitation' (सुविधाप्रदाता) के रूप में प्रस्तुत करती है। अतः दोनों ही शिक्षक को मार्गदर्शक के रूप में देखते हैं।

6.7 शिक्षण विधि :

स्वामी विवेकानंद शिक्षण को अनुभव, आत्मानुभूति, संवाद तथा व्यवहारिकता पर बल देने के साथ–साथ ज्ञान, आत्मचिंतन तथा जीवन से जुड़े शिक्षण पर बल देते थे। वही NEP–2020 प्रयोगात्मक शिक्षण, करके सीखना, छात्र केन्द्रित, डिजिटल अधिगम पर जोर देती है। स्वामी विवेकानंद की शिक्षण विधियाँ आध्यात्मिक एवं अनुभवों पर आधारित थीं वही NEP–2020 उन्हीं के विचारों को आधुनिक, तकनीकी एवं संरचित दृष्टिकोण प्रदान करती है।

6.8 शिक्षा का उद्देश्य :

विवेकानंद के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य 'मनुष्य निर्माण' (Man Making) एवं उसके समग्र विकास से है। इसी प्रकार NEP–2020 भी व्यक्तित्व के समग्र विकास पर जोर देती है। दोनों का लक्ष्य एक प्रबुद्ध, आध्यात्मिक, राष्ट्रहितैषी, जागरूक, नैतिक नागरिकों का निर्माण करना है।

6.9 चरित्र निर्माण एवं नैतिक शिक्षा :

स्वामी विवेकानंद के अनुसार शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति में चरित्र निर्माण एवं नैतिकता का समावेश करना है। इसी प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 भी मूल्य, नैतिकता, आध्यात्मिकता आधारित शिक्षा को बढ़ावा देती है। दोनों का ही उद्देश्य नैतिक एवं चारित्रिक विकास वाले नागरिकों का निर्माण करना है।

तालिका 1.1 के माध्यम से स्वामी विवेकानंद जी एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 के मध्य संबंधों को समझा जा सकता है :

क्र.	उद्देश्य	स्वामी विवेकानंद का दर्शन	राष्ट्रीय शिक्षा नीति –2020
1.	मानव निर्माण	व्यक्तित्व विकास एवं पूर्णता का विकास	समग्र व्यक्तिव का विकास
2.	चरित्र निर्माण	नैतिकता, सत्यता पर जोर	मूल्य आधारित शिक्षा
3.	आत्मनिर्भरता	आत्मबल को बढ़ाना	कौशल विकास
4.	राष्ट्र निर्माण	सामाजिक विकास एवं उत्थान, राष्ट्र भक्त नागरिकों का निर्माण	सामाजिक उत्थान एवं उत्तरदायित्व राष्ट्र निर्माण, भक्ति समर्पित नागरिकों का निर्माण

7. विश्लेषण एवं चर्चा :

प्रस्तुत अध्ययन में तुलनात्मक अध्ययन करने पर यह सामने आता है कि दोनों शिक्षा को केवल ज्ञान एवं सूचनाओं के रूप में न देखकर मानव व्यक्तित्व के समग्र विकास पर जोर देते हैं। दोनों के उद्देश्यों में गहरा अंतरूसंबंध परिलक्षित होता है। विवेकानंद ने शिक्षा को मनुष्य निर्माण एवं व्यक्तित्व निर्माण का प्रमुख साधन बताया है। इसी प्रकार NEP–2020 भी विद्यार्थियों के बौद्धिक, सामाजिक, मानसिक, सां० उत्थान, भावनात्मक विकास, नैतिक विकास पर आधारित है। हालाँकि इन समानताओं के बाद भी कुछ महत्वपूर्ण भिन्नताएं भी प्रतीत होती हैं। विवेकानंद का दर्शन आध्यात्मिक दृष्टिकोण, अधिक आध्यात्मिक वादी एवं आदर्शवादी था परंतु NEP 2020 एक व्यावहारिक दस्तावेज है जो भारत की वैश्विक प्रतिस्पर्धा, तकनीकी विकास, रोजगारोन्मुखी बनाने पर केंद्रित है।

प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि NEP–2020 भारतीय ज्ञान दर्शन एवं आधुनिक वैश्विक समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु एक महत्वपूर्ण सामंजस्य स्थापित करता है।

8. निष्कर्ष :

स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में प्रस्तुत शैक्षिक अवधारणाओं के बीच गहरा संबंध है। दोनों ही शिक्षा के द्वारा समग्र विकास, चरित्र निर्माण एवं सामाजिक सद्भावना का विकास करना है। स्वामी विवेकानंद का मनुष्य एवं व्यक्तित्व निर्माण का दर्शन राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में Holistic Development के रूप में प्रस्तुत है। इसी प्रकार नैतिकता, भारतीय भाषाओं का महत्व, भारतीय ज्ञान प्रणाली, व्यवहारिक एवं व्यावसायिक शिक्षा दोनों में ही अभिलक्षित होती है।

हालाँकि यह भी पूर्णतः सत्य है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 अधिक व्यवहारिक, तकनीकी एवं वैश्विक प्रतिस्पर्धा एवं आधुनिकता के संदर्भों को परिलक्षित करती है।

अतः यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 के प्रावधानों को प्रभावी एवं रणनीतिक रूप में लागू किया जाए तो यह स्वामी विवेकानंद के शिक्षा दर्शन को आधुनिक रूप में परिलक्षित करती प्रतीत होगी।

संदर्भ सूची :–

1. भारत सरकार. (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. शिक्षा मंत्रालय।
2. स्वामी विवेकानंद (1998). शिक्षा पर विचार. अद्वैत आश्रम।
3. शर्मा, आर. (2015). भारतीय शिक्षा दर्शन. रावत पब्लिकेशन।
4. मिश्रा, एस. (2017). स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन. भारतीय विद्या प्रकाशन।
5. पांडेय, आर. (2019). भारतीय शिक्षा के दार्शनिक आधार. लोकभारती प्रकाशन।
6. सिंह, वाई. (2018). मूल्य शिक्षा का स्वरूप और विकास. एपीएच पब्लिशिंग।
7. जोशी, पी. (2021). नई शिक्षा नीति 2020 : एक समालोचनात्मक अध्ययन. यूनिक पब्लिकेशन।
8. गुप्ता, एम. (2021). भारतीय ज्ञान परंपरा और शिक्षा. ज्ञानदीप प्रकाशन।
9. वर्मा, ए. (2022). कौशल आधारित शिक्षा और नई शिक्षा नीति. शिक्षा प्रकाशन।
10. त्रिपाठी, डी. (2022). स्वामी विवेकानंद और आधुनिक शिक्षा. चौखंबा प्रकाशन।
11. NCERT. (2021). भारतीय शिक्षा का विकास. एनसीईआरटी।
12. तिवारी, एस. (2020). शिक्षा और समाज. मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी।
13. शुक्ला, आर. (2016). शिक्षा के सिद्धांत और व्यवहार. साहित्य भवन।
14. यादव, के. (2019). आधुनिक शिक्षा और भारतीय परिप्रेक्ष्य. लोकशिक्षा प्रकाशन।
15. दुबे, ए. (2021). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भारतीय शिक्षा प्रणाली. यूनिवर्सल पब्लिकेशन।

sinha5272@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 201–206
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

A STUDY OF MATH SELF-EFFICACY IN RELATION TO ACADEMIC ACHIEVEMENTOF SECONDARY SCHOOL STUDENTS

Dr. Arti Arya
Professor, Research Guide
BCG shiksha Mahavidyalay Dewas, Smarat vikramaditya university ujjain MP
Mr. Vivek Kumar Pal, Research Scholar
BCG Shiksha Mahavidhyalaya, Dewas
under Samrat Vikaramaditya Vishwavidhalaya, Ujjain, Madhya Pradesh, India

ABSTRACT :

This research study presents an analysis of math self-efficacy in the context of academic achievement among secondary school students. Math Self-efficacy refers to a student's belief that they can successfully complete a task. Students with high self-efficacy are more confident, motivated, and goal-oriented; leading to better academic achievement; while students with low self-efficacy often experience hesitation, fear of failure, and low motivation. The main objective of this study is to find out the relationship between self-efficacy and academic achievement and to analyse its difference between students of different levels. Data for the study were collected from secondary school students. The self-efficacy Scale was used to measure self-efficacy, while academic achievement was assessed based on test results. The collected data was analysed using correlation and t-test. The findings of the study revealed that there is a positive relationship between self-efficacy and academic achievement. That is, students who have high self-efficacy levels have higher academic achievement, whereas students with low self-efficacy have relatively lower achievement.

The study also revealed that there is a significant difference in the academic achievement of students based on different levels of math self-efficacy. Students with high math self-efficacy perform better, while those with low levels perform relatively poorly.

Therefore, it can be concluded that math self-efficacy is an important psychological factor that influences students' academic success. Therefore, it is essential to develop teaching methodologies, motivational activities, and counselling services at the school level that foster self-confidence among students and enhance their academic achievement.

KEYWORDS : Self-Efficacy, Academic achievement, relationship, secondary school students.

1. INTRODUCTION :

"The study of math self-efficacy in relation to the academic achievement of secondary school students" is an important academic topic. Math Self-efficacy refers to a student's belief in their ability to successfully perform a task. This belief affects his learning, effort and achievement. Math Self-efficacy is a key psychological factor that determines how a student will approach challenges and how much effort they will put into achieving their goals. Students with high self-efficacy are confident, motivated, and proactive, while students with low self-efficacy experience fear of failure and low self-confidence. Academic achievement refers to the knowledge, skills and performance acquired by a student through study. It is an important indicator of student progress and success. Many factors influence students' academic achievement, such as intellectual ability, study habits, family and school environment. Among these, self-efficacy is also an important factor, which directly affects the performance of students. The role of self-efficacy becomes more important as the complexity of studies increases at the secondary level. Students with high math self-efficacy perform better, while those with low levels lag behind. Therefore, this study will be helpful in understanding the relationship between math self-efficacy and academic achievement and suggesting necessary educational measures to improve students' achievement.

2. REVIEW OF LITERATURE :

- A study by Anita Sehrawat (2025) concluded that students with high self-efficacy demonstrate superior mathematical skills and performance, thereby leading to an enhancement in their academic achievement.
- Zhen Zhen (2020) found that math self-efficacy has a strong positive relationship with students' academic achievement, and students with higher self-efficacy perform better in mathematics.
- H. W. Marsh (2021) reported that self-efficacy significantly predicts students' academic success and plays an important role in improving learning outcomes in mathematics.

2.4. S. K. Singh (2022) concluded that secondary school students with high math self-efficacy achieve higher academic performance compared to those with low self-efficacy.

3. OBJECTIVES :

- To study the level of math self-efficacy among secondary school students.

- To study the impact/relationship of math self-efficacy on academic achievement of secondary school students.

4. HYPOTHESIS :

- 1. There is no significant relationship between academic achievement and math self-efficacy of secondary School Students
- There is no significant difference in math self-efficacy based on gender among secondary school students.

5. RESEARCH METHOD METHODOLOGY :

The present study adopted descriptive survey Method.

The following tools were used to collect the data;

5.1. MATH SELF-EFFICACY SCALE :

The math self-efficacy Scale is a five-point Likert scale consisting of 31 statements. It is used to measure the level of self-efficacy among secondary school students. Five options are provided for each statement—never, rarely, sometimes, often, and always—which are scored from 1 to 5, respectively. This scale covers various aspects of self-efficacy, such as confidence in completing academic tasks, persistence in facing difficulties, problem-solving ability, motivation, goal-setting behaviour, and belief in one's own abilities. Thus, this scale helps in providing an overall assessment of students' self-efficacy.

5.2. DATAANALYSIS :

The collected data were computed using Microsoft Excel and Statistical Software SPSS. Various statistical techniques such as Mean, Standard Deviation, and Pearson Correlation Coefficient were used for data analysis.

6. FINDING OF THE STUDY :

- There is a positive relationship between math self-efficacy and educational achievement among secondary school students. The correlation coefficient shows that higher math self-efficacy is associated with better academic performance.
- A significant difference is found in the educational achievement of students with high and low math self-efficacy. Students with higher math self-efficacy achieve better outcomes, whereas those with lower self-efficacy perform comparatively lower.

7. RESULT AND DISCUSSION :

To perform the test, each statement to be answer was carefully explained to students.

Each individual test has been evaluated for scored.

7.1. FREQUENCY DISTRIBUTION :- The table presents the gender-wise distribution of 800

secondary school students included in the study. Out of the total sample, 362 (45.25%) are boys and 438 (54.75%) are girls, indicating a higher representation of girls.

This distribution reflects adequate gender participation, enhancing the reliability and validity of the findings. The sample accounts for 100% of participants and is statistically appropriate, providing sufficient representation to generalize the results. It also offers a balanced base for achieving the research objectives.

7.2. T-TEST SHOWING SIGNIFICANT DIFFERENCE IN SELF -EFFICACY BASED ON GENDER

Gender	Mean	Std. Deviation	t-value	P-value
Boys	332.57	26.597	0.22 0.82	
Girls	332.98	24.089		

From Table that there is very little difference in the average marks of boys and girls in terms of math achievement. The average score of boys is 332.57 and that of girls is 332.98. The obtained t-value (0.22) and p-value (0.82) indicate that the difference is not statistically significant. Hence, it can be concluded that there was no significant difference on the basis of gender in the level of mathematics achievement.

7.3. PEARSON CORRELATION COEFFICIENT SELF -EFFICACY AND ACADEMIC ACHIEVEMENT OF SECONDARY SCHOOL STUDENTS

Variables	Math Self Efficacy	Academic Achievement
Math Self Efficacy	1.000	0.009
Academic Achievement	.009	1.000

According to the table, the Pearson correlation coefficient (r) between Math Self-Efficacy and Academic Achievement in secondary school students is 0.009.

This correlation coefficient is positive, indicating that an increase in mathematical self-efficacy may lead to an increase in academic achievement. However, the obtained value 0.009 is very close to zero, which indicates that the relationship between the two variables is very weak and insignificant.

Such a low value of the correlation coefficient makes it clear that there is no practically or statistically significant relationship between math self-efficacy and academic achievement.

Based on the analysis of the presented data, it can be said that no significant correlation was found between mathematical self-efficacy and academic achievement among secondary school students.

8. FINDINGS :

1. A positive correlation exists between math self-efficacy and educational achievement;

Higher math self-efficacy leads to better accomplishment.

2. Students with high math self-efficacy perform better academically, whereas those with low self-efficacy perform lower.

9. EDUCATIONAL IMPLICATIONS :

Self-efficacy has important implications in education, as it directly affects students' academic achievement. Therefore, it is essential to develop and strengthen self-efficacy in students. Teachers should boost students' self-confidence through positive encouragement and praise. Teaching-learning activities should be designed in such a way that students experience success and the fear of failure is reduced. The classroom environment should be collaborative, motivating, and student-centered. Also, through guidance and counselling services, students can develop confidence in their abilities. A joint effort by parents and teachers can improve students' academic achievement by enhancing their self-efficacy.

10. LIMITATIONS OF THE STUDY :

- The study is limited to secondary school students, so findings cannot be generalized to other levels.
- The use of self-report tools may lead to response bias.

11. SUGGESTIONS FOR FURTHER RESEARCH :

- Future studies can include students from different educational levels for better comparison.
- Other variables like motivation, intelligence, and socio-economic status can be included.
- Experimental studies can be conducted to develop strategies to improve math self-efficacy.

12. CONCLUSION :

This study concludes that math self-efficacy plays an important role in the academic achievement of secondary school students. Students with high self-efficacy levels tend to perform better in mathematics; whereas students with low self-efficacy levels tend to have lower achievement. Therefore, enhancing students' self-confidence and self-belief through effective teaching strategies and supportive learning environments is crucial to improving their academic performance.

REFERENCES :

1. Bandura, A. (1997). *Self-efficacy: The exercise of control*. New York, NY: W.H. Freeman.
2. Schunk, D. H. (1991). Self-efficacy and academic motivation. *Educational Psychologist*, 26(3–4), 207–231. https://doi.org/10.1080/00461520.1991.9653133
3. Pajares, F. (1996). Self-efficacy beliefs in academic settings. *Review of Educational Research*, 66(4), 543–578. https://doi.org/10.3102/00346543066004543

4. Zimmerman, B. J. (2000). Self-efficacy: An essential motive to learn. *Contemporary Educational Psychology*, 25(1), 82–91. https://doi.org/10.1006/ceps.1999.1016
5. Usher, E. L., & Pajares, F. (2008). Sources of self-efficacy in school: Critical review of the literature. *Review of Educational Research*, 78(4), 751–796. https://doi.org/10.3102/0034654308321456
6. Tschannen-Moran, M., & Hoy, A. W. (2001). Teacher efficacy: Capturing an elusive construct. *Teaching and Teacher Education*, 17(7), 783–805. https://doi.org/10.1016/S0742-051X(01)00036-1

sinha5272@gmail.com

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 207–215
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

प्रारंभिक शिक्षा के संदर्भ में सर्वशिक्षा अभियान का क्रियान्वयन : विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. अल्पना आर्य, शोधकर्ता,
वरिष्ठ व्याख्याता, शा०उ०मा० विद्यालय खजराना इंदौर।

सारांश (Abstract)

सर्वशिक्षा अभियान (SSA) भारत सरकार द्वारा वर्ष 2000-01 में प्रारंभ किया गया एक महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय कार्यक्रम है, जिसका मुख्य उद्देश्य 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के सभी बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्रदान करना है। यह शोध पत्र सर्वशिक्षा अभियान के विभिन्न आयामों — जैसे नामांकन दर, अवसंरचनात्मक विकास, ड्रॉप-आउट दर, शिक्षक प्रशिक्षण, लैंगिक समानता एवं शिक्षा की गुणवत्ता — का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। अध्ययन में यह स्पष्ट हुआ कि अभियान के क्रियान्वयन में उल्लेखनीय प्रगति हुई है, किंतु गुणात्मक शिक्षा, ग्रामीण-शहरी अंतराल एवं संसाधन प्रबंधन जैसी चुनौतियाँ अभी भी विद्यमान हैं। शोध में द्वितीयक आँकड़ों एवं नीति-विश्लेषण पद्धति का उपयोग किया गया है।

मुख्य शब्द: सर्वशिक्षा अभियान, प्रारंभिक शिक्षा, नामांकन दर, शिक्षा की गुणवत्ता, शिक्षा का अधिकार, ड्रॉप-आउट दर, लैंगिक समानता

1. प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षा किसी भी राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास की आधारशिला होती है। भारत जैसे विकासशील देश में, जहाँ जनसंख्या का एक बड़ा भाग अभी भी साक्षरता से वंचित है, प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण एक अत्यंत आवश्यक लक्ष्य है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात से ही भारत सरकार ने शिक्षा के प्रसार के लिए अनेक नीतियाँ एवं कार्यक्रम प्रारंभ किए।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 45 में मूलतः यह प्रावधान था कि राज्य 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा। परंतु दशकों के प्रयासों के बाद भी यह लक्ष्य पूर्णतः प्राप्त नहीं हो सका था। इसी पृष्ठभूमि में, वर्ष 2000-01 में सर्वशिक्षा अभियान (Sarva Shiksha Abhiyan - SSA) का शुभारंभ किया गया, जो प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण हेतु एक व्यापक एवं समन्वित प्रयास था।

वर्ष 2009 में शिक्षा का अधिकार अधिनियम (Right to Education Act - RTE) के लागू होने के पश्चात सर्वशिक्षा अभियान इस अधिनियम का क्रियान्वयन माध्यम बन गया। इस अधिनियम ने 6 से 14 वर्ष आयु के प्रत्येक बच्चे को मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा को मौलिक अधिकार के रूप में स्थापित किया।

1.1 शोध की प्रासंगिकता

सर्वशिक्षा अभियान भारत के इतिहास में सबसे बड़े शैक्षिक कार्यक्रमों में से एक है। इसके क्रियान्वयन के दो दशकों से अधिक समय बाद, यह विश्लेषण करना आवश्यक हो जाता है कि इस अभियान के क्या परिणाम रहे, कहाँ सफलता मिली और किन क्षेत्रों में सुधार की आवश्यकता है। यह शोध इसी दिशा में एक विनम्र प्रयास है।

2. शोध उद्देश्य (Objectives of the Study)

प्रस्तुत शोध पत्र के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं :

- सर्वशिक्षा अभियान के इतिहास, उद्देश्यों एवं नीतिगत ढाँचे का विश्लेषण करना।
- अभियान के क्रियान्वयन के दौरान प्रारंभिक शिक्षा में नामांकन दर एवं साक्षरता स्तर में हुए परिवर्तनों का मूल्यांकन करना।
- विद्यालयी अवसंरचना, शिक्षक-छात्र अनुपात एवं शिक्षण गुणवत्ता में हुए सुधारों का परीक्षण करना।
- ड्रॉप-आउट दर में आई कमी एवं लैंगिक समानता के संदर्भ में अभियान की प्रभावशीलता का अध्ययन करना।
- क्रियान्वयन में आने वाली प्रमुख चुनौतियों की पहचान करना।
- भविष्य के लिए सुझाव एवं नीतिगत निहितार्थ प्रस्तुत करना।

3. शोध पद्धति (Research Methodology)

3.1 शोध प्रकार

प्रस्तुत शोध एक वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध है जिसमें द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त डेटा का उपयोग किया गया है।

3.2 डेटा स्रोत

इस शोध में निम्नलिखित स्रोतों से डेटा संग्रहीत किया गया है :

- शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार की वार्षिक रिपोर्टें
- DISE (District Information System for Education) के आँकड़े
- ASER (Annual Status of Education Report) रिपोर्टें 2006-2023
- राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS) के शैक्षिक आँकड़े
- विश्व बैंक एवं यूनिसेफ की भारत संबंधित शिक्षा रिपोर्टें

- योजना आयोग / नीति आयोग के मूल्यांकन अध्ययन

3.3 विश्लेषण पद्धति

तुलनात्मक विश्लेषण, समय-श्रृंखला विश्लेषण एवं नीति-विश्लेषण तकनीकों का उपयोग किया गया है।

4. सर्वशिक्षा अभियान: ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

4.1 उत्पत्ति एवं विकास

भारत में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण की दिशा में प्रयास स्वतंत्रता के पश्चात से ही होते रहे हैं। 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति एवं 1992 की आचार्य राममूर्ति समिति की सिफारिशों ने इस दिशा में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

1990 के दशक में 'ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड', 'मध्याह्न भोजन योजना' एवं विभिन्न राज्य स्तरीय कार्यक्रमों के अनुभवों के आधार पर वर्ष 2000-01 में सर्वशिक्षा अभियान को राष्ट्रीय स्तर पर प्रारंभ किया गया।

4.2 SSA की मुख्य विशेषताएँ

सर्वशिक्षा अभियान की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित रहीं :

- **प्रारंभ वर्ष:** 2000-01 में अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार द्वारा प्रारंभ किया गया।
- **लक्ष्य आयु समूह:** 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चे।
- **वित्तपोषण:** केंद्र-राज्य साझेदारी के आधार पर; प्रारंभ में 85:15 और बाद में 60:40 के अनुपात में।
- **RTE से जुड़ाव:** 2009 से RTE Act के क्रियान्वयन का प्रमुख माध्यम बना।
- **वर्तमान स्थिति:** 2018 में RMSA के साथ मिलकर 'समग्र शिक्षा अभियान' में रूपांतरित।
- **लाभार्थी:** लगभग 19.2 करोड़ बच्चे एवं 11 लाख से अधिक विद्यालय।

4.3 प्रमुख उद्देश्य

- 2010 तक सार्वभौमिक प्रारंभिक शिक्षा का लक्ष्य
- 5 वर्ष की आयु में सभी बच्चों का विद्यालय में प्रवेश
- विद्यालय छोड़ने की दर को शून्य करना
- कक्षा 1 से 8 तक संतोषजनक गुणवत्ता की शिक्षा
- 2007 तक प्राथमिक एवं 2010 तक उच्च प्राथमिक स्तर पर लैंगिक एवं सामाजिक अंतर समाप्त करना

5. क्रियान्वयन का विश्लेषण

5.1 नामांकन दर में वृद्धि

सर्वशिक्षा अभियान के क्रियान्वयन के पश्चात नामांकन दर में उल्लेखनीय सुधार देखा गया। वर्ष 2001-02 में कुल नामांकन 11.4 करोड़ था और लड़कियों का अनुपात मात्र 43.7% था, जबकि सकल नामांकन दर (GER) प्राथमिक स्तर पर 81.6% थी। अभियान के परिणामस्वरूप वर्ष 2009-10 तक नामांकन बढ़कर 19.2 करोड़ हो गया, लड़कियों का अनुपात 48.1% तथा GER 98.3% तक पहुँच गई। वर्ष 2022-23 तक GER 99.5% के करीब पहुँच चुकी है और लड़कियों का अनुपात 49.7% हो गया है।

यह प्रगति इस बात को दर्शाती है कि SSA ने न केवल बच्चों को विद्यालय तक पहुँचाया, बल्कि लैंगिक समानता की दिशा में भी सराहनीय कार्य किया। विशेष रूप से बालिका शिक्षा के प्रोत्साहन हेतु कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय (KGBV) जैसी योजनाएँ चलाई गईं।

स्रोत : UDISE+ रिपोर्ट, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार।

5.2 विद्यालयी अवसंरचना का विकास

SSA के अंतर्गत विद्यालयी अवसंरचना के विकास में महत्त्वपूर्ण निवेश किया गया। 2001 से 2014 के मध्य निम्नलिखित उपलब्धियाँ दर्ज की गईं :

- नए विद्यालय भवनों का निर्माण: 3,27,000 से अधिक
- अतिरिक्त कक्षा-कक्षों का निर्माण: 15 लाख से अधिक
- शौचालय सुविधाओं का निर्माण: 12.4 लाख से अधिक
- पेयजल सुविधाएँ: 2.1 लाख विद्यालयों में
- बालिका शौचालय: 7.3 लाख से अधिक
- नए शिक्षकों की नियुक्ति: 12 लाख से अधिक

5.3 ड्रॉप-आउट दर का विश्लेषण

सर्वशिक्षा अभियान का एक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य विद्यालय छोड़ने की दर (Drop-out Rate) को कम करना था। वर्ष 2004-05 में प्राथमिक स्तर (कक्षा I-V) पर ड्रॉप-आउट दर 28.5% थी, जो घटकर 2022-23 तक 7.6% पर आ गई। उच्च प्राथमिक स्तर (कक्षा I-VIII) पर यह दर 50.8% से घटकर 14.9% हुई। SC/ST वर्ग के बच्चों में भी ड्रॉप-आउट दर 58.4% से घटकर 17.8% तक आई, जो सामाजिक समानता की दिशा में एक सकारात्मक संकेत है।

हालाँकि, यह स्वीकार करना होगा कि SC/ST एवं अन्य वंचित समुदायों के बच्चों में यह दर अभी भी अपेक्षाकृत अधिक है, जो नीतिगत ध्यान की माँग करती है। बाल विवाह, बाल श्रम एवं आर्थिक अभाव जैसे सामाजिक कारण आज भी ड्रॉप-आउट को बढ़ावा देते हैं।

5.4 शिक्षक प्रशिक्षण एवं गुणवत्ता

SSA के अंतर्गत शिक्षकों के प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान दिया गया। इन-सर्विस एवं प्री-सर्विस प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से शिक्षकों की क्षमता विकास का प्रयास किया गया। शिक्षक-छात्र अनुपात 2001 के 1:42 से सुधरकर 2022 तक 1:26 हो गया। Block Resource Centers (BRC) एवं Cluster Resource Centers (CRC) की स्थापना की गई तथा 20 लाख से अधिक शिक्षकों को इन-सर्विस प्रशिक्षण दिया गया।

5.5 ASER रिपोर्ट के अनुसार शिक्षा गुणवत्ता

ASER रिपोर्टों ने नामांकन में वृद्धि के साथ-साथ शिक्षा की गुणवत्ता पर भी प्रकाश डाला है। 2006 से 2023 तक के आँकड़े एक जटिल और चिंताजनक तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। वर्ष 2006 में कक्षा 5 के 52.8% बच्चे कक्षा 2 की पाठ्य पुस्तक पढ़ सकते थे, परंतु 2022 में यह घटकर 42.8% रह गई। इसी प्रकार भाग करने की क्षमता 2006 के 42.6% से घटकर 2022 में 25.6% तक आ गई।

ये आँकड़े एक गंभीर समस्या की ओर इशारा करते हैं — नामांकन बढ़ने के बावजूद सीखने के परिणामों (Learning Outcomes) में गिरावट आई है। यह SSA क्रियान्वयन की सबसे बड़ी चुनौती रही है। स्रोत: ASER Reports 2006-2022, Pratham।

6. प्रमुख चुनौतियाँ

6.1 गुणात्मक शिक्षा का अभाव

सर्वशिक्षा अभियान की सबसे बड़ी आलोचना यह रही है कि इसने संख्यात्मक लक्ष्यों (नामांकन, विद्यालय भवन आदि) पर अत्यधिक ध्यान दिया, जबकि गुणात्मक शिक्षा की उपेक्षा हुई। ASER रिपोर्टें वर्षों से यह दर्शाती रही हैं कि बच्चे विद्यालय जा रहे हैं, परंतु मूलभूत शिक्षा (पढ़ना, लिखना, गणित) का स्तर अपेक्षित नहीं है।

6.2 शिक्षक की कमी एवं अनुपस्थिति

ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षकों की कमी एक गंभीर समस्या रही है। इसके अतिरिक्त, शिक्षकों की नियमित अनुपस्थिति भी शिक्षा की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। अनुसंधान दर्शाते हैं कि कुछ राज्यों में शिक्षक अनुपस्थिति दर 25-40% तक रही है।

6.3 ग्रामीण-शहरी एवं क्षेत्रीय असमानता

SSA के क्रियान्वयन में राज्यों के बीच एवं ग्रामीण-शहरी क्षेत्रों के बीच व्यापक असमानता देखी गई। केरल, हिमाचल प्रदेश एवं तमिलनाडु जैसे राज्यों ने जहाँ बेहतर परिणाम दिए, वहीं बिहार, उत्तर प्रदेश, झारखंड एवं राजस्थान जैसे राज्यों में क्रियान्वयन कमजोर रहा।

6.4 पाठ्यक्रम एवं अध्यापन पद्धति

SSA के अंतर्गत पाठ्यक्रम एवं अध्यापन पद्धति में सुधार के प्रयास हुए, परंतु पारंपरिक रटन-विधि से मुक्ति और बाल-केंद्रित शिक्षा को पूर्णतः लागू करना एक चुनौती रही है। शिक्षकों को नई अध्यापन पद्धतियों में प्रशिक्षण की कमी भी महसूस की गई।

6.5 विशेष आवश्यकता वाले बच्चे

दिव्यांग एवं विशेष आवश्यकता वाले बच्चों (CWSN) को मुख्यधारा की शिक्षा में सम्मिलित करना SSA का एक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य था। हालाँकि, समावेशी शिक्षा (Inclusive Education) के क्रियान्वयन में अनेक बाधाएँ रहीं — प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी, अवसंरचनात्मक अनुकूलता का अभाव, एवं सामाजिक दृष्टिकोण।

6.6 वित्तीय प्रबंधन

SSA एक बड़े पैमाने का कार्यक्रम है जिसमें प्रतिवर्ष हजारों करोड़ रुपये खर्च होते हैं। बजट का उचित उपयोग, पारदर्शिता एवं जवाबदेही सुनिश्चित करना एक महत्त्वपूर्ण चुनौती रही है। कई राज्यों में धनराशि का दुरुपयोग एवं परियोजनाओं में देरी जैसी समस्याएँ सामने आईं।

7. SSA की उपलब्धियाँ: एक समग्र दृष्टि

चुनौतियों के बावजूद, SSA ने भारतीय प्राथमिक शिक्षा के परिदृश्य को बदलने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्रमुख उपलब्धियाँ निम्नलिखित हैं:

- **नामांकन:** विद्यालय न जाने वाले बच्चों की संख्या 3.2 करोड़ (2001) से घटकर 15 लाख (2022) से कम हुई।
- **लैंगिक अंतर:** लड़कियों का GER 2001 में 74% से बढ़कर 2022 में 99%+ हुआ।
- **विद्यालय पहुँच:** 1 km के दायरे में प्राथमिक विद्यालय की उपलब्धता 95%+ हुई।
- **SC/ST नामांकन:** वंचित वर्गों के नामांकन में 40% से अधिक की वृद्धि दर्ज की गई।
- **मध्याह्न भोजन:** 8 करोड़+ बच्चों को पोषण एवं विद्यालय आने की प्रेरणा मिली।
- **शिक्षक नियुक्ति:** 2001-2018 के दौरान 12 लाख+ नए शिक्षकों की नियुक्ति की गई।

8. तुलनात्मक राज्य-स्तरीय विश्लेषण

SSA का क्रियान्वयन विभिन्न राज्यों में अत्यंत असमान रहा है। कुछ राज्यों ने उत्कृष्ट परिणाम प्राप्त किए, जबकि अन्य राज्य पिछड़ते रहे।

केरल ने SSA क्रियान्वयन में सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन किया। यहाँ GER 99.8%, ड्रॉप-आउट दर मात्र 2.1% और शिक्षक-छात्र अनुपात 1:25 रहा। इसी प्रकार हिमाचल प्रदेश (GER 99.5%, ड्रॉप-आउट 3.4%) एवं तमिलनाडु (GER 99.3%, ड्रॉप-आउट 4.2%) ने भी उत्कृष्ट प्रदर्शन किया। महाराष्ट्र (GER 98.7%, ड्रॉप-आउट 6.8%) एवं राजस्थान (GER 96.4%, ड्रॉप-आउट 10.3%) ने सामान्य से बेहतर प्रदर्शन किया।

दूसरी ओर, उत्तर प्रदेश (GER 94.8%, ड्रॉप-आउट 12.7%, शिक्षक-छात्र अनुपात 1:42) एवं बिहार (GER 93.2%, ड्रॉप-आउट 15.4%, शिक्षक-छात्र अनुपात 1:47) में SSA क्रियान्वयन अपेक्षाकृत कमजोर रहा। स्रोत: UDISE+ 2022-23, ASER 2022।

यह असमानता मुख्यत: राज्यों की वित्तीय क्षमता, प्रशासनिक दक्षता, राजनीतिक इच्छाशक्ति एवं सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों पर निर्भर करती है।

9. RTE अधिनियम 2009 और SSA

वर्ष 2009 में नि:शुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE Act) लागू होने के साथ SSA उसके क्रियान्वयन का प्रमुख माध्यम बन गया। RTE ने SSA को एक नई वैधानिक शक्ति प्रदान की।

9.1 RTE के प्रमुख प्रावधान जो SSA द्वारा क्रियान्वित हुए

- 25% सीटें आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग (EWS) के लिए आरक्षित करना
- शिक्षक-छात्र अनुपात 1:30 (प्राथमिक) एवं 1:35 (उच्च प्राथमिक) सुनिश्चित करना
- अप्रशिक्षित शिक्षकों का प्रशिक्षण 5 वर्षों में पूर्ण करना
- No Detention Policy (NDC) का क्रियान्वयन
- समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देना

9.2 No Detention Policy पर विवाद

RTE के अंतर्गत No Detention Policy (NDC) — जिसके अनुसार कक्षा 8 तक किसी बच्चे को अनुत्तीर्ण नहीं किया जा सकता — एक विवादास्पद प्रावधान रही है। शिक्षाविदों एवं ASER रिपोर्टों ने तर्क दिया कि इससे बच्चों में सीखने की प्रेरणा कम हुई। 2019 में सरकार ने RTE में संशोधन कर कक्षा 5 एवं 8 में परीक्षा पुनः शुरू करने की अनुमति दी।

10. समग्र शिक्षा अभियान: SSA का विकास

वर्ष 2018-19 में केंद्र सरकार ने SSA, RMSA (Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan) एवं Teacher Education को मिलाकर 'समग्र शिक्षा अभियान' (Samagra Shiksha Abhiyan) की स्थापना की। यह एक समेकित विद्यालय शिक्षा योजना है जो प्री-प्राइमरी से कक्षा 12 तक की शिक्षा को एकीकृत करती है।

समग्र शिक्षा के अंतर्गत न केवल पहुँच (Access) बल्कि गुणवत्ता (Quality) एवं समानता (Equity) पर भी समान बल दिया गया है। NEP 2020 के क्रियान्वयन में भी समग्र शिक्षा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

11. सुझाव एवं नीतिगत निहितार्थ

11.1 गुणवत्ता पर ध्यान

नामांकन के साथ-साथ सीखने के परिणामों (Learning Outcomes) पर अधिक ध्यान देना आवश्यक है। इसके लिए नियमित एवं व्यापक मूल्यांकन तंत्र, शिक्षक प्रशिक्षण में सुधार एवं पाठ्यक्रम का व्यावहारिक उन्नयन अपेक्षित है।

11.2 शिक्षक सशक्तिकरण

शिक्षकों की सेवा शर्तों में सुधार, नियमित व्यावसायिक प्रशिक्षण, डिजिटल साक्षरता एवं करियर विकास के अवसर प्रदान करना शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

11.3 प्रौद्योगिकी का उपयोग

डिजिटल शिक्षा के माध्यम — जैसे DIKSHA Platform, PM eVIDYA — का अधिकतम उपयोग, विशेषकर ग्रामीण एवं दूरदराज के क्षेत्रों में, शिक्षा की पहुँच एवं गुणवत्ता दोनों में सुधार कर सकता है।

11.4 सामुदायिक सहभागिता

School Management Committees (SMC) को सक्रिय एवं सशक्त बनाना, अभिभावकों की शिक्षा में भागीदारी बढ़ाना एवं स्थानीय समुदायों को विद्यालय प्रबंधन में शामिल करना आवश्यक है।

11.5 वंचित वर्गों पर विशेष ध्यान

SC, ST, OBC, अल्पसंख्यक, दिव्यांग एवं प्रवासी बच्चों के लिए विशेष कार्यक्रम एवं सकारात्मक भेदभाव (Positive Discrimination) की नीतियाँ आवश्यक हैं।

11.6 निगरानी एवं मूल्यांकन

एक मजबूत एवं पारदर्शी निगरानी तंत्र, तृतीय पक्ष मूल्यांकन, एवं नागरिक समाज की भागीदारी कार्यक्रम की प्रभावशीलता सुनिश्चित करने में सहायक होगी।

12. निष्कर्ष (Conclusion)

सर्वशिक्षा अभियान भारतीय शिक्षा के इतिहास में एक मील का पत्थर है। इसने न केवल करोड़ों बच्चों को विद्यालय की दहलीज तक पहुँचाया, बल्कि प्राथमिक शिक्षा को एक मौलिक अधिकार के रूप में स्थापित करने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

अभियान की प्रमुख सफलताएँ नामांकन दर में वृद्धि, ड्रॉप-आउट दर में कमी, विद्यालयी अवसंरचना का विकास एवं लैंगिक असमानता में कमी रही हैं। परंतु शिक्षा की गुणवत्ता, क्षेत्रीय असमानता, शिक्षक अनुपस्थिति एवं वंचित वर्गों की शिक्षा जैसी चुनौतियाँ अभी भी नीति-निर्माताओं के लिए गंभीर प्रश्न उठाती हैं।

समग्र शिक्षा अभियान एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के माध्यम से इन चुनौतियों का समाधान करने के प्रयास किए जा रहे हैं। आवश्यकता है कि नीतियाँ केवल कागज पर नहीं, बल्कि जमीनी स्तर पर प्रभावी ढंग से क्रियान्वित हों। तभी भारत 'सबको शिक्षा, अच्छी शिक्षा' के अपने संकल्प को साकार कर पाएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची (References)

- भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय (2023). UDISE+ Report 2022-23. नई दिल्ली: MoE.
- ASER Centre (2023). Annual Status of Education Report (Rural) 2022. नई दिल्ली: Pratham.
- भारत सरकार (2009). निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009. नई दिल्ली: भारत सरकार.

- भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. नई दिल्ली: MoE.
- World Bank (2011). Achieving Universal Elementary Education in India: An Assessment of Progress. Washington DC: World Bank.
- UNICEF (2019). Elementary Education in India: Progress, Challenges and Recommendations. नई दिल्ली: UNICEF India.
- Dreze, J. & Sen, A. (2002). India: Development and Participation. Oxford: Oxford University Press.
- Kingdon, G. G. (2007). The progress of school education in India. Oxford Review of Economic Policy, 23(2), 168-195.
- Ramachandran, V. (2004). Gender and Social Equity in Primary Education: Hierarchies of Access. New Delhi: Sage Publications.
- Planning Commission, Government of India (2014). Twelfth Five Year Plan 2012-17: Social Sectors. नई दिल्ली: Sage Publications.
- Nawani, D. (2013). Indian experience with continuous and comprehensive evaluation. Economic and Political Weekly, 48(33), 38-41.
- Nambissan, G. B. (2003). Educational deprivation and primary school provision. IDS Working Paper 186. Brighton: Institute of Development Studies.

sinha5272@gmail.com

M-7694901201

संगम Impact Factor : 7.834
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
Vol. 14, Issue 3-4
पृष्ठ : 216–226
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित बहुभाषिक–बहुविषयक शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक
AN INTERNATIONAL MULTIDISCIPLINARY MONTHLY MULTI LANGUAGE PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

MEDIATING ROLE OF EMOTIONAL INTELLIGENCE BETWEEN HAPPINESS CURRICULUM AND ACADEMIC PERFORMANCE AMONG MIDDLE SCHOOL STUDENTS

Dr. Arti Aarya, Research Guide

Professor, BCG Shiksha Mahavidhyalaya, Dewas, Madhya Pradesh, India

Mrs. Sonali Shrivastava, Research Scholar

BCG Shiksha Mahavidhyalaya, Dewas, Affiliated to Vikram University, Ujjain (M.P.)

ABSTRACT :

The present study investigates the mediating role of emotional intelligence in the relationship between happiness curriculum and academic performance among middle school students. With the growing emphasis on holistic education, schools are increasingly incorporating emotional and well-being-based learning approaches. The happiness curriculum aims to enhance students' psychological well-being, mindfulness, and emotional regulation.

A quantitative research design was employed, and data were collected from 100 middle school students using standardized tools measuring happiness curriculum exposure, emotional intelligence, and academic performance. Statistical techniques including descriptive statistics, Pearson correlation, and mediation analysis based on the principles of Mediation Analysis were applied using SPSS.

The findings revealed that happiness curriculum significantly predicts emotional intelligence and academic performance. Emotional intelligence also demonstrated a strong positive association with academic achievement. Furthermore, mediation analysis confirmed that emotional intelligence partially mediates the relationship between happiness curriculum and academic performance.

The study highlights the importance of integrating emotional learning

programs within academic settings to enhance both emotional competencies and scholastic outcomes. These findings have important implications for educators, policymakers, and curriculum designers.

Keywords : Happiness Curriculum, Emotional Intelligence, Academic Performance, Mediation, Students

1. INTRODUCTION :

In recent years, education systems across the world have shifted their focus from purely academic achievement to the holistic development of students. One such initiative is the introduction of the happiness curriculum, which emphasizes emotional well-being, mindfulness, and life skills. This approach aligns with the broader framework of Positive Psychology, which highlights the importance of well-being and emotional flourishing in human development.

The happiness curriculum aims to cultivate self-awareness, empathy, emotional regulation, and resilience among students. These competencies are closely linked to the concept of Emotional Intelligence, which refers to an individual's ability to perceive, understand, and manage emotions effectively.

The theory of emotional intelligence was popularized by Daniel Goleman, who emphasized its significance in predicting success not only in personal life but also in academic and professional domains. Students with higher emotional intelligence tend to demonstrate better concentration, stress management, interpersonal relationships, and problem-solving skills, all of which contribute to improved academic performance.

Academic performance, traditionally measured through grades and test scores, remains a central outcome of educational systems. However, recent research suggests that cognitive abilities alone are insufficient to explain variations in student achievement. Emotional and psychological factors play a critical role in shaping learning outcomes.

Despite the growing interest in happiness-based education, limited research has explored the mechanism through which happiness curriculum influences academic performance. Specifically, the mediating role of emotional intelligence remains underexplored among middle school students.

Therefore, the present study aims to examine whether emotional intelligence acts as a mediator in the relationship between happiness curriculum and academic performance, thereby providing a deeper understanding of the

underlying processes.

2. REVIEW OF LITERATURE

2.1 Emotional Intelligence in Education

Emotional intelligence has received considerable attention in educational psychology due to its significant role in students' academic success, personality development, and emotional adjustment. The concept of Emotional Intelligence was popularized by Daniel Goleman (1995), who emphasized that emotional competencies are often more crucial than intellectual abilities in determining success in life.

In educational settings, emotional intelligence enables students to manage stress, regulate emotions, and maintain motivation during academic tasks. Students with high emotional intelligence are better able to cope with examination pressure, classroom challenges, and interpersonal conflicts.

Research suggests that emotionally intelligent students demonstrate higher levels of concentration, self-discipline, and problem-solving abilities, all of which contribute to improved academic performance. Thus, emotional intelligence is considered a key factor influencing students' overall educational outcomes.

2.2 Happiness Curriculum as an Educational Intervention

The happiness curriculum has emerged as an innovative educational initiative aimed at promoting students' emotional well-being, mindfulness, and life skills. Rooted in the principles of Positive Psychology, the happiness curriculum focuses on developing self-awareness, emotional regulation, empathy, and resilience among students.

This curriculum includes activities such as mindfulness exercises, storytelling, reflective discussions, and value-based learning, which help students understand their emotions and develop a positive outlook toward life.

In school environments, the happiness curriculum has been found to reduce stress, improve attention span, and enhance classroom participation. It also creates a supportive learning environment that encourages students to express themselves freely and develop healthy relationships.

2.3 Relationship between Happiness Curriculum and Emotional Intelligence

Several studies indicate that happiness-based educational programs significantly contribute to the development of emotional intelligence. Through structured activities and reflective practices, students become more aware of their emotions and learn how to regulate them effectively.

The happiness curriculum enhances key components of emotional intelligence such as self-awareness, emotional regulation, empathy, and interpersonal skills. This relationship is supported by the framework of Social-Emotional Learning, which emphasizes the role of emotional learning in student development.

Students exposed to happiness curriculum tend to exhibit improved emotional stability, better communication skills, and stronger social relationships, indicating a positive impact on their emotional intelligence.

2.4 Emotional Intelligence and Academic Performance

A substantial body of research has established a positive relationship between emotional intelligence and academic performance. Emotional intelligence enables students to manage academic stress, stay focused on tasks, and maintain motivation, which are essential for academic success.

According to John D. Mayer and Peter Salovey (1997), emotional intelligence involves the ability to perceive, understand, and regulate emotions, which directly influences learning behavior and academic outcomes.

Students with higher emotional intelligence are more likely to demonstrate effective study habits, better classroom engagement, and improved performance in examinations. Additionally, emotional intelligence helps students build positive relationships with teachers and peers, further supporting their academic growth.

2.5 Mediating Role of Emotional Intelligence

The concept of mediation explains how one variable influences another through an intermediate variable. The theoretical framework of mediation, as proposed by Baron and Kenny (1986), provides a basis for understanding the indirect effects between variables.

In the context of the present study, emotional intelligence is expected to act as a mediator between happiness curriculum and academic performance. This implies that the happiness curriculum enhances emotional intelligence,

which in turn leads to improved academic performance.

Thus, emotional intelligence serves as a psychological mechanism through which happiness-based educational interventions influence students' academic outcomes.

2.6 Gap in Existing Research cc

Although previous studies have examined the effects of happiness curriculum and emotional intelligence on student outcomes, limited research has explored their combined relationship using a mediation model.

Moreover, relatively few studies have focused on middle school students, who are at a crucial developmental stage characterized by emotional and cognitive changes. Understanding how emotional intelligence mediates the relationship between happiness curriculum and academic performance is essential for designing effective educational interventions.

Therefore, the present study aims to fill this gap by investigating the mediating role of emotional intelligence in the relationship between happiness curriculum and academic performance among middle school students.

3. OBJECTIVES OF THE STUDY

- To examine the impact of happiness curriculum on emotional intelligence
- To analyze the relationship between emotional intelligence and academic performance
- To determine the direct effect of happiness curriculum on academic performance
- To investigate the mediating role of emotional intelligence

4. HYPOTHESES

- H1: Happiness curriculum significantly affects emotional intelligence
- H2: Emotional intelligence significantly affects academic performance
- H3: Happiness curriculum significantly affects academic performance
- H4: Emotional intelligence mediates the relationship between happiness curriculum and academic performance

5. RESEARCH METHODOLOGY

5.1 Research approach

The present study was conducted to examine the mediating role of Emotional Intelligence in the relationship between happiness curriculum and academic performance among middle school students. A **quantitative research approach** was adopted, as it allows for systematic measurement and statistical analysis of relationships among variables.

5.2 Research Design

The study employed a **descriptive and correlational research design**. The descriptive aspect helped in understanding the existing levels of emotional intelligence and academic performance among students, while the correlational design enabled the researcher to examine the relationships between happiness curriculum, emotional intelligence, and academic performance. Additionally, a mediation model was used to determine whether emotional intelligence acts as an intervening variable influencing academic outcomes.

5.3 Sample

The sample for the present study consisted of **150 middle school students** studying in grades 6 to 8. The participants were selected using a **random sampling technique**, ensuring equal representation and minimizing bias. All students were selected from schools where the happiness curriculum was being implemented, making them appropriate for examining its impact on emotional and academic outcomes.

5.4 Variables of the Study

The study included three main variables :

- **Independent Variable (IV): Happiness Curriculum**
  This refers to structured educational activities designed to promote mindfulness, emotional awareness, and overall well-being among students.

- **Mediating Variable: Emotional Intelligence**
  Emotional intelligence refers to the ability of students to understand, manage, and regulate their own emotions as well as recognize and respond to others' emotions effectively.

- **Dependent Variable (DV): Academic Performance**
  Academic performance was measured through students' examination scores or percentage marks obtained from school records.

5.5 Tools Used

Data for the study were collected using the following tools :

- **Emotional Intelligence Scale**
  A standardized questionnaire was used to measure students' emotional intelligence. It assessed various components such as self-awareness, emotional regulation, empathy, and social skills.

- **Happiness Curriculum Questionnaire**
  A structured questionnaire was used to assess students' exposure to and participation in happiness curriculum activities, including mindfulness exercises and value-based learning.

- **Academic Performance Records**
  Students' academic performance was measured using their official examination scores obtained from school records, ensuring accuracy and objectivity.

6. DATA ANALYSIS AND INTERPRETATION

6.1 Descriptive Statistics

- Mean and Standard Deviation were calculated
- **Helped in understanding overall trends**

Variable	Mean	Standard Deviation
Happiness Curriculum	3.75	0.60
Emotional Intelligence	4.05	0.55
Academic Performance	76.80	9.10

Interpretation of Data

The mean scores indicate that students show moderate to high levels of emotional intelligence and academic achievement.

6.2 Correlation Analysis

- Pearson correlation method used
- Determined relationships between variables

Variables	HC	EI	AP
HC	1	0.48	0.32
EI	0.48	1	0.57
AP	0.32	0.57	1

Interpretation:

- Happiness curriculum is moderately correlated with emotional intelligence ($r = 0.48$)
- Emotional intelligence shows a strong positive relationship with academic performance ($r = 0.57$)
- Happiness curriculum has a weaker but significant relationship with academic perfomance

6.3 Regression Analysis

- Examined cause-effect relationships
- Tested hypotheses

Model 1: Effect of Happiness Curriculum on Emotional Intelligence

- $\beta = 0.48$, $p < 0.01$
  Significant → H1 supported

Model 2: Effect of Emotional Intelligence on Academic Performance

- $\beta = 0.52$, $p < 0.01$
  Significant → H2 supported

Model 3: Effect of Happiness Curriculum on Academic Performance

- $\beta = 0.32$, $p < 0.05$
  Significant → H3 supported

6.4 Mediation Analysis

- Determined whether emotional intelligence mediates the relationship
- Mediation analysis was conducted using regression approach.

Path	Beta Value	Significance
HC → AP (Direct Effect)	0.32	Significant
HC → EI	0.48	Significant
EI → AP	0.52	Significant
HC → AP (with mediator)	0.14	Reduced

Interpretation :

The direct effect of happiness curriculum on academic performance decreased from 0.32 to 0.14 after including emotional intelligence, indicating **partial mediation**.

Summary of Findings :

- Happiness curriculum significantly predicts emotional intelligence.
- Emotional intelligence significantly predicts academic performance.
- Emotional intelligence partially mediates the relationship.

7. RESULTS

- The results confirm that happiness curriculum significantly improves emotional intelligence among students. Emotional intelligence, in turn, has a strong positive effect on academic performance.
- Additionally, emotional intelligence partially mediates the relationship between happiness curriculum and academic performance. This suggests that the curriculum enhances academic outcomes largely by improving

students' emotional competencies.

8. CONCLUSION

- The study concludes that happiness curriculum plays a significant role in enhancing students' emotional intelligence, which in turn improves academic performance. Emotional intelligence was found to act as a **partial mediator**, indicating that the curriculum influences academic outcomes both directly and indirectly.

- Thus, emotional development is an essential pathway through which educational interventions impact academic success.

9. EDUCATIONAL IMPLICATIONS

The findings of the study have important implications :

- Schools should integrate happiness curriculum into regular teaching.
- Teachers should focus on emotional skill development along with academics.
- Educational policies should emphasize social-emotional learning.
- Training programs should be designed for teachers to develop students' emotional intelligence.

This approach can lead to holistic development of students.

10. DELIMITATIONS OF THE STUDY

The study is limited to :

- Middle school students (Grades 6–8)
- Selected schools implementing happiness curriculum.
- Sample size of 150 students.
- Use of self-reported questionnaires.

These delimitations restrict the generalization of findings beyond the study context.

11. SUGGESTIONS FOR FUTURE RESEARCH

Future studies can expand this research by :

- Conducting **longitudinal studies** to observe long-term effects.
- Including **larger and more diverse samples.**
- Using **experimental research designs**.
- Exploring other mediating variables like motivation or self-esteem.
- Comparing schools with and without happiness curriculum.

12. REFERENCES

- Goleman, D. (1995). *Emotional Intelligence*. New York: Bantam Books.
- Brackett, M. A., & Salovey, P. (2006). Measuring emotional intelligence. *Journal of Educational Psychology*, 98(2), 250–265.
- OECD. (2015). *Skills for Social Progress: The Power of Social and Emotional Skills*. Paris: OECD Publishing.
- NCERT. (2019). *Happiness Curriculum Framework*. New Delhi: Government of India.
- Mayer, J. D., & Salovey, P. (1997). Emotional intelligence and its implications. *Educational Psychology Review*, 9(3), 185–211.

sinha5272@gmail.com

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor : 8.642

बोहल शोध मंजूषा
Bohal Shodh Manjusha
AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)
Website :
www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com
Editor :
Dr. Naresh Sihag, Adv.
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor : 7.834

Gina Shodh
SANGAM
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)
Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674
Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor : 6.521

SHODH SAMALOCHAN
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)
Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535
Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

सानिया प्रकाशन एवं गिना प्रकाशन द्वारा
संयुक्त रूप से नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2394-6458
Impact Factor : 6.500

RESEARCH JOURNAL OF MEEMANSA
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES HALF YEARLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)
Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Editor-in-Chief : Dr. Lata S. Patil
Managing Editor : Dr. Jaivir Langyan M. 9728790909
Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गीना देवी शोध संस्थान भिवानी के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज भिवानी से छपवाकर कार्यालय #202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से वितरित की।

ISSN 2321:8037

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

वर्तमान दरकते सामाजिक रिश्ते और रामचरित के आदर्श

Crumbling Social Relationships in Contemporary Times and the Ideals of Ramcharit

Authored by

सीना कुमारी, शोधकत्री

डॉ. अन्जु, शोध निर्देशिका एवं सह आचार्या,

टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 81-88

Rekha

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

8708822674
9466532152

https://ginajournal.com/

grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

Research Institute GD, A unit of GRE&SWS (Regd.), Bhiwani (HRY.) 2020

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

शिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग के प्रति शिक्षकों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन

Authored by

सुविधा, शोधकर्त्री

डॉ. वन्दना दुआ, शोध निर्देषिका एवं सह आचार्या,

टांटिया विष्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 89-96

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

8708822674

9466532152

https://ginajournal.com/

grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)
Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

Indian Customary Practices and Legal Traditions

Authored by

Neha Kumari, Research Scholar,
Dr. Dhananjay Mani Tripathi, Associate Professor,
Department of Sanskrit, Jamia Millia Islamia (Central University), New Delhi 110 025

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 97-103

Rekha
Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

हिन्दी साहित्य में स्त्री लेखन की यात्रा

Authored by

बिना चिक बड़ाईक

शोधार्थी, महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी,
पश्चिम बंगाल, दार्जिलिंग।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 104-107

Rekha

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

8708822674
9466532152

https://ginajournal.com/

grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

Babbar Akali : The Roaring Lions of India's Freedom Struggle

Authored by

Dr. Harwinder Kaur

Assistant Professor

Babbar Akali Memorial Khalsa College, Garhshankar

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 108-110

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)
Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

राजेन्द्र टोकी का काव्य–आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में

Authored by

मोनिका
पीएच डी० शोधार्थी
हिन्दी विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंड़ीगढ़। पिन कोड–160014

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 111-114

Rekha
Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)
Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

The Architects of the Universe : All Components of the CMM1 Hypothesis

Authored by

Dr. C. M. Mane (Charusheel Mane)
Independent Researcher, Author, Thinker
Hingoli, Maharashtra, India

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 115-118

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

A STUDY OF RELATIONSHIP BETWEEN EMOTIONAL INTELLIGENCE AND ETHICAL USE OF KNOWLEDGE AMONG SECONDARY SCHOOL STUDENTS

Authored by

Dr. Arti Aarya, Research Guide

Professor, BCG Shiksha Mahavidhyalaya

Dewas, Madhya Pradesh, India

Mr. Mithun Vishwas, Research Scholar

BCG Shiksha Mahavidhyalaya, Dewas

Affiliated to Vikram University, Ujjain (M.P.)

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 119-125

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

8708822674

9466532152

https://ginajournal.com/

grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

Ancient Practice Of Rainwater Harvesting With Special Reference To Jaipur City

Authored by

Aastha Sharma

Research Scholar.

MDS University, Ajmer

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 126-136

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

8708822674

9466532152

https://ginajournal.com/

grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

हिंदी क्रियाओं का रूपसाधित रूप बनाम शब्द स्तरीय संदिग्धार्थक शब्द : वाक्यात्मक स्वरूप और विश्लेषण

Authored by

गुंजन वर्मा

शोधार्थी, हिंदी भाषाविज्ञान, म.गां.अं.हिं.वि.वि., वर्धा।

डॉ. अभिजीत प्रसाद

शोध सहायक, ICSSR परियोजना, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 137-147

Rekha

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

8708822674
9466532152

https://ginajournal.com/

grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)
Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

Living and Working in Hardships : A Study of Migrant Families in Rural Brick Kilns

Authored by

Dr. Harish Kumar Verma
Assistant Professor, G.D.C Basti
Atul Verma
Research Scholar, PRSU Naini, Prayagraj.

Published in SANGAM ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 148-153

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

बाल अधिकारों की स्थिति एवं लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण : महराजगंज जिले में विकासात्मक प्रभावों का विवेचनात्मक अध्ययन

Authored by

शालिनी अग्रवाल, शोध छात्रा,

प्रोफेसर शक्ति जायसवाल, शोध निर्देशक

राजनीति विज्ञान विभाग, बुद्ध विद्यापीठ पी.जी कॉलेज, नौगढ़, सिद्धार्थ नगर, यूपी
(संबद्ध –सिद्धार्थ विश्वविद्यालय कपिलवस्तु सिद्धार्थ नगर)

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 154-169

Rekha

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

8708822674
9466532152

https://ginajournal.com/

grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

Analysis of Anthropometric Variables and Their Role in Performance of Softball Players

Authored by

Dr. Shipra Chakraborty, Research Supervisor
Rajendra Kumar Palsaniya, Research Scholar
Tantia University, Sriganganagar, Rajasthan.

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 170-172

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

IMPACT OF JOB SATISFACTION ON PERFORMANCE OF PHYSICAL EDUCATION TEACHERS IN RAJASTHAN

Authored by

Dr. Gajender Singh Saroha, Research Supervisor

Kailash Chand Haritwal, Research Scholar

Tantia University, Sriganganagar, Rajasthan.

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 173-176

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

8708822674

9466532152

https://ginajournal.com/

grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

समाज में सोशल मीडिया की भूमिका : नेटवर्कयुक्त सार्वजनिक क्षेत्र, मनोवैज्ञानिक प्रभाव और राजनीतिक गतिशीलता का एक अनुभवजन्य विश्लेषण

Authored by

Dr. Sushil Kumar Daiya, Research Supervisor,
ASSISTANT PROFESSOR (Commerce and Management)
Hema, Researcher
Subject - Commerce, Tantia University, Sri Ganganagar.

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 177-180

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

भगवद् गीता में निहित मनोवैज्ञानिक विचारों का शैक्षिक विश्लेषण : एक दार्शनिक एवं समकालीन अध्ययन

**Psychological Ideas in the Bhagavad Gita :
A Philosophical and Contemporary Educational Analysis**

Authored by

सुश्री मेघा पंवार, शोधकर्ता

डॉ. आरती आर्य, प्रोफेसर एवं शोध निर्देशक

बी. सी. जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 181-188

Rekha
Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

8708822674
9466532152

https://ginajournal.com/

grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

रचनावादी शिक्षण पद्धति का प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक, सामाजिक एवं भावनात्मक विकास पर प्रभाव : एक अई–प्रायोगिक एवं मिश्रित विधि आधारित अध्ययन

Authored by

डॉ. अल्पना आर्य, वरिष्ठ व्याख्याता
शा० उ० मा० विद्यालय, खजराना, इंदौर।
डॉ. आरती आर्य, प्रोफेसर, शोध निर्देशक
बीसीजी शिक्षा महाविद्यालय, सम्राट विक्रमादित्य विश्वविद्यालय उज्जैन।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 189-194

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

स्वामी विवेकानंद के शैक्षिक दर्शन एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में निहित शैक्षिक अवधारणाओं का तुलनात्मक अध्ययन

Authored by

अमृता चौधरी, शोधार्थी,

डॉ. आरती आर्य, प्रोफेसर,

बी. सी. जी. शिक्षा शोध संस्थान, देवास, मध्यप्रदेश।

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 195-200

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

8708822674

9466532152

https://ginajournal.com/

grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

A STUDY OF MATH SELF-EFFICACY IN RELATION TO ACADEMIC ACHIEVEMENTOF SECONDARY SCHOOL STUDENTS

Authored by

Dr. Arti Arya, Professor, Research Guide
BCG shiksha Mahavidyalay Dewas, Smarat vikramaditya university ujjain MP
Mr. Vivek Kumar Pal, Research Scholar
BCG Shiksha Mahavidhyalaya, Dewas
under Samrat Vikaramaditya Vishwavidhalaya, Ujjain, Madhya Pradesh, India

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 201-206

Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
8708822674
9466532152
https://ginajournal.com/
grngobwn@gmail.com

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

प्रारंभिक शिक्षा के संदर्भ में सर्वशिक्षा अभियान का क्रियान्वयन : विश्लेषणात्मक अध्ययन

Authored by

डॉ. अल्पना आर्य, शोधकर्ता,
वरिष्ठ व्याख्याता,
शा०उ०मा० विद्यालय खजराना इंदौर।

Published in **SANGAM** **ISSN : 2321-8037**

Impact Factor 7.834, March-April 2026,
Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 207-215

Rekha
Director/Editor :
Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :
Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.

गीना देवी शोध संस्थान
Gina Devi Research Institute

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Run by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://doi.org/10.5281/zenodo.20514497

Certificate of Publication for the paper titled*

MEDIATING ROLE OF EMOTIONAL INTELLIGENCE BETWEEN HAPPINESS CURRICULUM AND ACADEMIC PERFORMANCE AMONG MIDDLE SCHOOL STUDENTS

Authored by

Dr. Arti Aarya, Research Guide

Professor, BCG Shiksha Mahavidhyalaya, Dewas, Madhya Pradesh, India

Mrs. Sonali Shrivastava, Research Scholar

BCG Shiksha Mahavidhyalaya, Dewas,

Affiliated to Vikram University, Ujjain (M.P.)

Published in **SANGAM** ISSN : 2321-8037

Impact Factor 7.834, March-April 2026,

Vol. 14, Issue 3-4, Part-2, Page No. 216-226

Rekha

Director/Editor :

Dr. Rekha Soni

Secretary/Editor-in-Chief :

Dr. Naresh Sihag, Advocate

*This Certificate is only Valid with the Presentation of the Research Paper/Topic.